सी.ओ.ए.-3

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

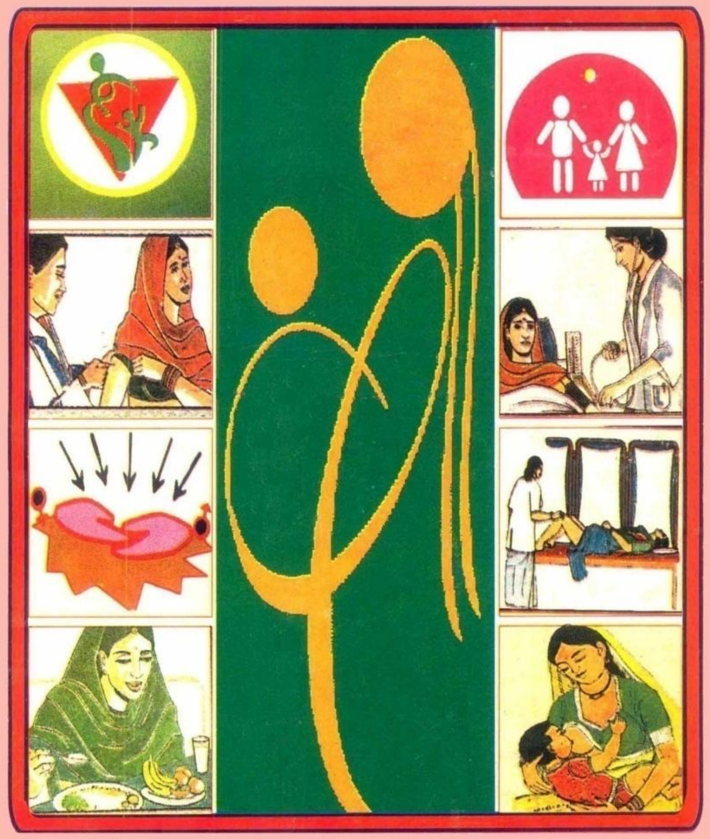

सामुदायिक स्वास्थ्य

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सामुदायिक स्वास्थ्य (Community Health)

ब्लॉक-I

इकाई- 1	सामुदायिक स्वास्थ्य एवं प्रसूति स्वास्थ्य	5–22
इकाई- 2	पारिवारिक जीवन शिक्षा	23–46
इकाई- 3	पोषणीय शिक्षा	47–64

ब्लॉक-II

इकाई- 4	पर्यावरण एवं प्रसूति स्वास्थ्य	68–80
इकाई- 5	परिवार कल्याण एवं नियोजन	81–111
इकाई- 6	स्वास्थ्य सांख्यिकी	112–136

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

1. **डॉ. आर.वी. व्यास**
   कुलपति
2. **श्री राकेश वर्मा**
   निदेशक विज्ञान एवं तकनीकी विद्यापीठ- पाठ्यक्रम संयोजक
3. **श्री केशव स्वर्णकार**
   प्रधानाचार्य/ नर्सिंग ट्यूटर
   स्कूल ऑफ नर्सिंग
   एम.बी.एस. चिकित्सालय परिसर, कोटा
4. **श्रीमती सोनाक्षी सोनी**
   व्याख्याता
   कॉलेज ऑफ नर्सिंग
   जयपुर
5. **डॉ. वीना एलहैन्स**
   चिकि. अधि./प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ
   जे. के. लोन चिकित्सालय
   मेडिकल कॉलेज, कोटा

पाठ्यक्रम निर्माण **संपादक : केशव स्वर्णकार , मीनाक्षी सोनी**

लेखक	पाठ्यक्रम एवं इकाई	लेखक	पाठ्यक्रम एवं इकाई
• **डॉ. विनया पैन्डसे** M.S.(O&G), FICOG पूर्वआचार्य एवं विभागाध्यक्ष (प्रसूति एवं स्त्री रोग विभाग) आर.एन.टी. मेडिकल कॉलेज एवं पूर्व अधीक्षक जनाना हॉस्पिटल, उदयपुर	COA III-1	• **श्रीमती सुरजीत कौर** उपनिदेशक (नर्सिंग) चिकित्सा एवं स्वा. निदेशालय एवं रजिस्ट्रार, राजस्थान नर्सिंग काउंसिल, जयपुर	COA II-1
• **श्रीमती रेखा गुप्ता** M.Sc., M.Phil	COA I-1,2	• **श्री केशव स्वर्णकार** RN. DNEA. M.A.,B.J.M.C.	COAII-2,3 COAIII-5,6
• **डॉ. अविनाश बंसल** M.D.(Paed.) वरिष्ठ शिशु एवं बाल विशेषज्ञ भा. वि. प. चिकित्सालय, कोटा	COA IV-6	• **डॉ. श्रीमती मीनाक्षी सोनी** M.A. M.Sc(N) व्याख्याता कॉलेज ऑफ नर्सिंग, जयपुर	COA I-3,4,5,6 COA I-(Case Book)
• **डॉ. शोभा शर्मा** M.S.(O&G), **(**प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ**)** ई.एस.आई. चिकित्सालय, कोटा	COA II-6 COA III-2 COA IV-1,4	• **श्री अरविन्द चौरीसा** M.A. B.Sc(N) प्रधानाचार्य /नर्सिंग ट्यूटर स्कूल ऑफ नर्सिंग, बांसवाड़ा	COA II-4,5
• **डॉ. वीना एलहैन्स** M.S.(O & G) प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ जे. के. लॉन हॉस्पिटल मेडिकल कॉलेज, कोटा	COA IV-2,3,5	• **श्री प्रकाश व्यास** M.A. B.Sc(N) प्रधानाचार्य /नर्सिंग ट्यूटर स्कूल ऑफ नर्सिंग, जोधपुर	COA III-3,4

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

- **डॉ. आर.वी. व्यास,** कुलपति
- **डॉ. पी. के. शर्मा,** निदेशक, पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग
- **राकेश शर्मा,** विभागाध्यक्ष

पाठ्य सामग्री उत्पादन

- **योगेन्द्र गोयल,** सहायक उत्पादन अधिकारी

© वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

- सर्वाधिकार सुरक्षित : इस पाठ्यक्रम पुस्तिका का कोई भी अंश किसी भी रूप मे वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की बिना अनुमति के उदधृत करना वर्जित है।
- यद्यपि पाठ्यक्रम के निर्माण मे लेखकीय उत्तरदायित्व है तथा अध्ययन सामग्री मे नवीनतम तथ्य दिये जाने का प्रयास किया गया है। किन्तु चिकित्सा विज्ञान मे नित-नवीन परिवर्तन एवं तथ्य जुड़ते रहते हैं। अतः इस विषय मे किसी भी त्रुटि हेतु लेखक, सम्पादक अथवा प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है। इसलिए औषध सेवन चिकित्सक की देखरेख मे ही उपयुक्त रहेगा।
  वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के निर्देशानुसार मुद्रित एवं प्रकाशित

इकाई-1 सामुदायिक स्वास्थ्य एवं प्रसूति स्वास्थ्य

इकाई की रूपरेखा

1.0 प्रस्तावना

1.1 उद्देश्य

1.2 सांख्यिकी एवं स्वास्थ्य सांख्यिकी

1.2.1 सुरक्षित मातृत्व एक विशाल दायरा

1.2.2 प्रसूति सेवाएं: आवश्यक एवं प्राथमिक

1.2.3 सामुदायिक स्वास्थ्य सेवा में प्रसूति कार्य का महत्व

1.2.4 स्वयं को दक्ष बनाना

1.2.5 गर्भवती की देखभाल हेतु योजना

1.3 समूह, परिवार, जाति, क्षेत्र के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव

1.3.1 समूह एवं परिवार

1.3.2 जाति

1.3.3 क्षेत्रीय प्रभाव

1.3.4 व्यवसाय

1.4 अंधविश्वास, समाज-परम्पराएं एवं प्रसूति

1.4.1 अंधविश्वास

1.4.2 समाज-परम्पराएं

1.5 सामाजिक नियंत्रण, धर्म एवं राजनीति का प्रसूति स्वास्थ्य पर प्रभाव

1.5.1 सामाजिक नियंत्रण

1.5.2 धर्म

1.5.3 राजनीति

1.6 मानव की मूलभूत आवश्यकताएं, संतानोत्पत्ति, शरीर एवं मन का सम्बन्ध

1.6.1 मूलभूत आवश्यकताएं

1.6.2 शरीर एवं मन का सम्बन्ध

1.7 प्रसूतिकाल एवं मानसिक स्वास्थ्य

1.7.1 प्रसवोत्तर अवधि एक नाजुक दौर

1.8 सारांश

1.9 प्रश्न

1.0 प्रस्तावना

सामुदायिक स्वास्थ्य एक व्यापक अवधारणा है। यह जनसंख्या, निरोधक चिकित्सा एवं सामाजिक चिकित्सा (Social Medicine) का समानार्थक है । विश्व स्वास्थ्य संगठन की

विशेषज्ञ समिति के अनुसार "सामुदायिक स्वास्थ्य के तात्पर्य समुदाय के सदस्यों की स्थिति, उनके स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाली समस्याएं एवं समुदाय में उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं की समग्रता से है।" अर्थात सामुदायिक स्वास्थ्य (1) विरोधात्मक (2) उपचारात्मक एवं (3) स्वास्थ्यवर्धक सेवाओ से संबन्धित है । महिला एवं प्रसूति स्वास्थ्य सामुदायिक स्वास्थ्य का सबसे महत्वपूर्ण अवयव है । प्रस्तुत इकाई मे इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रसूति स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले समुदाय के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है। समुदाय के प्रथम घटक मानव की मूलभूत आवश्यकताओ तथा प्रसूतिकाल के मानसिक स्वास्थ्य की स्थिति को प्रभावित करने वाले कारकों पर भी इस इकाई में विचार-विमर्श किया गया है ।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के विषय में जानकारी प्रदान करेंगी तथा सम्बन्धित शंकाओं का निराकरण करने मे समर्थ हो सकेगी ।

1. प्रसूति विज्ञान का सामुदायिक स्वास्थ्य से सम्बन्ध
2. प्रसूति सेवाओ की आवश्यकताएं एवं प्राथमिकताए
3. प्रसूति स्वास्थ्य पर समूह, परिवार, जाति इत्यादि के प्रभाव
4. प्रसूति से सम्बन्धित अंधविश्वास एवं सामाज परम्पराए
5. प्रसूति स्वास्थ्य का सामाजिक नियंत्रण, धर्म एव राजनिती से सम्बन्ध
6. मानव की मूलभूत आवश्यकताएं एवं संतानोत्पत्ति
7. प्रसूतिकाल एंव मानसिक स्वारथ्य

1.2 प्रसूति विज्ञान का सामुदायिक स्वास्थ्य से सम्बन्ध

मानव जन्म प्रक्रिया से सम्बन्धित ज्ञान प्रसूति विज्ञान कहलाता है । इसमें गर्भावस्था, प्रसव व प्रसवोत्तर काल की सभी सामान्य व असामान्य दशायें (abnormal condition &normal postnatal period&labour ,related to pragnancy) सम्मिलित हैं । प्रसव पश्चात् का लगभग छ सप्ताह यानि 42 दिन का काल प्रसवोत्तर काल postnatal period or) (pueperium कहलाता है ।

एक स्वस्थ माँ स्वस्थ शिशु को जन्म देती है जो आगे जाकर एक स्वस्थ बालक, किशोर व नागरिक बनता है । स्पष्ट है समुदाय के लोगों का स्वास्थ्य मूलतया मातृ स्वास्थ्य से जुड़ा हुआ है। मातृ स्वास्थ्य में मां व शिशु दोनों का स्वास्थ्य निहित है यानि यह एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इन दोनों स्वास्थ्य सेवाओं को एक ही परिपेक्ष्य में देखा जाना चाहिये । बालक का स्वास्थ्य कैसा है यह देखने से पहले माँ का स्वास्थ्य कैसा है, यह जानना आवश्यक है। मातृ व शिशु स्वास्थ्य, सामुदायिक स्वास्थ्य का सबसे महत्वपूर्ण भाग है।

प्रसूति स्त्री शरीर की एक प्राकृतिक क्रिया है । प्रसूति (maternity) शब्द में गर्भकाल, प्रसव व प्रसवोत्तर, यह तीनों काल सम्मिलित हैं । प्रसूति सेवाओं (maternity services) को विश्वभर में आवश्यक सेवाएं (essential services) माना जाता है। एक स्वस्थ्य मां द्वारा एक स्वस्थ बच्चा जन्मने की स्थिति को विश्व स्वारस्थ्य संगठन द्वारा सुरक्षित मातृत्व (safe

motherhood) कहा गया है व हर गर्भावस्था को विशेष महत्वपूर्ण यानि स्पेशल मानते हुए इसमे दी जाने वाली चिकित्सा सेवा को आवश्यक व प्राथमिक (Primary Health Care) माना है । सुरक्षित मातृत्व सामुदायिक स्वास्थ्य की प्रथम आवश्यकता है ।

1.2.1 सुरक्षित मातृत्व एक विशाल दायरा

सुरक्षित मातृत्व की अवधारणा सिर्फ शिशु जन्म तक सीमित नही है। बल्कि उसमें महिला व उसके स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, स्थानीय विकास व प्रशासन इत्यादि घटक भी निहित हैं । सुरक्षित मातृत्व हेतु निम्न बातें आवश्यक मानी गई हैं।

1. सही आयु व सही अन्तराल पर गर्भधारण ।
2. गर्भावस्था के आरंभ में पंजीकरण यानि रजिस्ट्रेशन, नियमित व सही प्रकार से जांच व देखभाल, चौथे महिने से आयरन, फोलिक व कैल्सियम की आपूर्ति, नियमित पोषाहार, टीकाकरण, स्वच्छ व सुरक्षित प्रसव एवं प्रसवोत्तर काल, शिशु की देखभाल, स्तनपान, बाल टीकाकरण व पोषाहार।
3. सीमित परिवार हेतु दम्पत्ति द्वारा परिवार नियोजन।
4. महिला को जीवन विकास के समान अवसर व सामाजिक व आर्थिक न्याय।

किसी भी समुदाय में सुरक्षित मातृत्व की दिशा में प्रथम व सबसे ठोस कदम उस समाज में महिला होने के नाते उसकी मजबूत सामाजिक व आर्थिक स्थिति है जैसा कि अधिकतर विकसित देशों में है। जीवन विकास के समान अवसर, शिक्षा, पोषाहार, सामाजिक व आर्थिक न्याय इत्यादि से महिला स्वास्थ्य सुधरता है व सुरक्षित मातृत्व प्राप्त होता है। इसलिये सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं के अन्तर्गत महिलाओं की स्थिति को आकना यथा संभव सुधार हेतु प्रयत्न करना, महिला शिक्षा को बढावा देना, कन्या पोषाहार की तरफ ध्यान देना, कम आयु में विवाह जैसी कुप्रथाओं के खिलाफ आवाज उठाना, आवश्यक जानकारी देना इत्यादि बातें भी आवश्यक हैं ।

1.2.2 प्रसूति सेवाएं आवश्यक व प्राथमिक

यह जानना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि गर्भावस्था, प्रसव व प्रसवोत्तर काल प्राकृतिक क्रिया होते हुए भी किसी-किसी में इसके साथ विभिन्न प्रकार की छोटी बड़ी जोखिम जुडी रहती है । समय पर उस जोखिम के लक्षण व चिन्हो की पहचान आवश्यक है। ऐसा नहीं होने से यानि जोखिम (risks) का समय पर निदान व उपचार नहीं होने से मां व शिशु दोनों का नुकसान हो सकता है, जीवन खतरे मे पड़ सकता है, शारीरिक क्षति व कभी-कभी मृत्यु भी हो सकती है । इसलिये विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा हर गर्भावस्था को विशेष यानि स्पेशल माना गया है । स्पष्ट है कि सही व नियमित रूप से दी गई प्रसूति सेवा से काफी हद तक मां व शिशु दोनों को ही शारीरिक क्षति व मृत्यु से बचाया जा सकता है। प्रसूति सेवाओ को आवश्यक व प्राथमिक मुद्दा मानने के पीछे प्रमुख कारण हर मां को सुरक्षित मातृत्व की प्राप्ति तथा मातृमृत्यु व मातृक्षति अनुपात (Maternal Mortality & Maternal Morbidity ratio) कम हो जाये। हमारे

यहा पर ऊँची मातृमृत्यु व मातृक्षति अनुपात एक गंभीर समस्या है। अत: इन सेवाओं पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है।

1.2.3 सामुदायिक स्वास्थ्य सेवा में प्रसूति कार्य का महत्व

हमारें यहां पर शहरी क्षेत्र में अधिकतर गर्भवती महिलायें (लगभग 70-80 प्रतिशत) अस्पतालों में ही नियमित रूप से जांच करवाती हैं व वही प्रसव होता है। अत: शहरी क्षेत्र में सामुदायिक स्वास्थ्य सेवा के अन्तर्गत एक प्रसूति विज्ञान सहायिका, नर्स को बहुत ही सीमित प्रसूति कार्य करने को मिलता है। इस कार्य का बहुत बडा हिस्सा प्रसूति अस्पतालों के कार्य के अन्तर्गत चला गया है।

परन्तु ग्रामीण क्षेत्र में स्थिति भिन्न है। वहां पर प्रसव घर पर ही करवाया जाता है। इसके पीछे मुख्य कारण परम्परागत विचार शैली है परन्तु कहीं-कहीं पर यह एक मजबूरी भी है क्योंकि गांवो में प्रसूति सेवाये बहुत कम विकसित हैं। लगभग 70-90 प्रतिशत प्रसव घर पर ही होते हैं व दाई द्वारा परम्परागत तरीके से करवायें जाते है। दाई प्रशिक्षित या अप्रशिक्षित हो सकती है। कई बार घर की ही दूसरी या पडौस की महिला प्रसव करवाती है। इस प्रकार से प्रसव होना आज के सदर्भ मे सही व सुरक्षित नहीं है । विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा दाई व उसके समान अन्य को प्रसव सहायिका के रूप में मान्यता प्राप्त नहीं है। इनके द्वारा दी गई सेवाओं में कई तरह की त्रुटियां हैं जिनमे सुधार दाई प्रशिक्षण व अन्य बातों द्वारा नही हो पाया है। स्पष्ट है ग्रामीण क्षेत्र में प्रसव कार्य प्रशिक्षित नर्स अथवा प्रसूति विज्ञान सहायिका के द्वारा सम्पन्न होना चाहिये । इस कार्य में आत्मसंतोष के साथ यश भी मिलता है जो एक प्रसूति विज्ञान सहायिका, नर्स के लिये महत्वपूर्ण है।

1.2.4 स्वयं को दक्ष बनाना

प्रसव कार्य एक महत्चपूर्ण प्रायोगिक कार्य है अत: स्वय को दक्ष बनाने के लिये इसमे समय देकर लगन से सीखना पड़ता है। प्रशिक्षण के दौरान मिलने वाले अवसरों का प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा पूरा फायदा उठाना चाहिये। प्रसव कैसे होता है यह देखना व जानना, शुरू में इस कार्य में सहायक बनना, अपने हाथों को इस कार्य में निहित छोटे-छोटे कौशल (Skills) हेतु तैयार करना जैसे जन्मते शिशु को किस स्थिति में लेना, प्रसव मार्ग को किस प्रकार क्षति से बचाना, गर्भाशय को किस प्रकार से मालिश कर या दबाकर संकुचित करना इत्यादि आवश्यक है। प्रसव कक्ष की हर छोटी-मोटी बातों पर गौर करना जैसे स्वच्छता, विसंक्रमित पद्वति (aseptic technique) सामान की तैयारी, प्रसूता से मानवीय दृष्टि से व्यवहार करना, नवजात की तुरंत सेवा, प्रसव से सम्बधी लेखन व रिपोर्ट इत्यादि सीखना आवश्यक है ।

प्रसव कक्ष में अधिक से अधिक समय देना, केसेस मे सहायक बनना आवश्यक है। गौर करें, अधिकतर प्रसव संध्या व रात्रि में होते है इस हेतु स्वयं को तैयार रखना तथा आवश्यकतानुसार ए. एन. एम. या चिकित्सक को सूचित करना, रेफर करना इत्यादि हेतु प्रसूति विज्ञान सहायिका को तैयार रहना आवश्यक है ।

12.5 गर्भवती की देखभाल हेतु योजना

गर्भवती की चिकित्सकीय देखभाल को प्रसूति पूर्व सेवा यानि एन्टीनेटल केयर (antenatal care) भी कहते हैं। सामुदायिक स्वास्थ्य सेवा के अन्तर्गत खासकर ग्रामीण क्षेत्र में एन्टीनेटल केयर में निम्न बातों पर विशेष गौर करने की आवश्यकता है:-

1. पंजीकरण गर्भावस्था के आरंभ में हो

विश्वभर के अनुभव यह बताते हैं कि गर्भ ठहरने के बाद जितनी जल्दी सेवा व मागदर्शन मिलें उतना ही अच्छा अर्थात् मां व शिशु स्वास्थ्य रक्षा में कारगर होता है । अत: प्रथम दो तीन माह से गर्भवती को पंजीकृत कर अर्थात् नाम लिखवाकर व नम्बर देकर नियमित सेवा देना आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्र मे जागरूकता व जानकारी कम होती है। इस कारण शीघ्र पंजीकरण कर सेवा आरंभ करने हेतु विशेष प्रयत्न करना पडता है। अक्सर गर्भवती के घर जाकर यह सेवा देनी पडती है।

हमारे यहां पर बहुत सी महिलायें गर्भधारण के पहले से ही कुपोषित व एनीमिक होती है । गर्भावस्था में गर्भ की बढती आवश्यकता के कारण कुपोषण व एनीमिया और भी बढता है व अनेक समस्याओं को जन्म देता है। हमारे देश मे ऊँची मातृमृत्यु व मातृक्षति अनुपात के पीछे महत्वपूर्ण कारण व्यापक कुपोषण व एनीमिया है। गर्भकाल में शुरू से दिया गया पोषाहार, आयरन फोलिक एसिड, कैल्सियम आपूर्तिया, पोषाहार सम्बंधी सलाह इत्यादि से इस समरया पर काफी हद तक काबू पाया जा सकता है। महीनो तक नियमित पोषाहार व आपूर्ति लेने से जिस प्रकार से मां व शिशु स्वास्थ्य में सुधार होता है वह अपने आप में एक उपलब्धि है इसके बहुत दूरगामी फायदे भी हैं। एन्टीनेटल केयर को गर्भकाल के आरंभ में ही शुरूकर अनवरत देना महत्वपूर्ण है न कि बाद वाले दो तीन महीनो में।

2. गर्भवती के साथ सम्पर्क बनाना आवश्यक

प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपने क्षेत्र की हर गर्भवती व उसके परिवार के साथ सम्पर्क रखना खासकर ग्रामीण क्षेत्र मे आवश्यक है। शहरी क्षेत्र मे जागरूकता के कारण गर्भवती महिला स्वयं एक नियोजित प्रकार से एन्टीनेटल केयर लेती है। नर्स या चिकित्सक को विशेष प्रयास नही करना पडता है परतु गांवो मे स्थिति विपरीत है। प्रसूति विज्ञान सहायिका को विशेष प्रयत्न कर घर जाकर सम्पर्क साधना चाहिए। शुरू में कुछ देर तक अनौपचारिक बातें करना व फिर धीरे-धीरे उसके तबीयत के बारे में पूछताछ व अन्य आवश्यक इतिहास जानना आवश्यक है।

3. जांच की सभी छोटी छोटी बातें महत्चपूर्ण

शारीरिक जाच में सम्मिलित विभिन्न छोटी-छोटी बाते जैसे स्वाथ्य व कुशलता की दृष्टि से वह कैसी दिखती है, यह कौनसा बच्चा या गर्भ है, पूर्व में गर्भ की क्या स्थिति रही, कितने बच्चे किस प्रकार व कहा हुए, बच्चो का लिंग, स्वास्थ्य व टीकाकरण इत्यादि संबधी जानकारी लेना, एनीमिया की दृष्टि से उसकी त्वचा, चेहरा, आखें, जीभ, नाखून देखना, गर्भ की स्थिति जानने के लिये उसे लिटाकर देखना, पेट की जाच सही प्रकार व पूर्ण करना, आवश्यक आपूर्ति, सलाह जानकारी देना व टीकाकरण आवश्यक है। अधूरी जाच किसी भी दृष्टि से सही नही है ।

4. जोखिम की दृष्टि से जांच अर्थात खतरों की पहचान

हमारे यहां पर लगभग 70-80 प्रतिशत मातृ मृत्यु के केसेज ग्रामीण क्षेत्र में होते हैं। इन केसेस की जांच पडताल कर हम पाते हैं कि अधिकतर में खतरों के लक्षण व चिन्ह बहुत पहले से ही मौजूद थे परतु समय पर उसका निदान नहीं हुआ, उसे आवश्यक चिकित्सा सेवा नहीं मिली, धीरे-धीरे खतरा बढा व घातक बना। अगर समय पर गर्भवती में मौजूद खतरा, जटिलता, असामान्य दशा का निदान होता व उसे सही स्थान पर रेफर किया होता तब वह बच सकती थी।

इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए हर प्रसूति विज्ञान सहायिका गर्भवती महिला से कुछ देर बातचीत करना, अवलोकन करना, उसकी तबीयत जानना आवश्यक है। अशिक्षा व कमजोर माली हालत के कारण बहुत सी ग्रामीण महिलाये अपनी तकलीफो के बारे में सही तरह से नहीं बता पाती हैं, इसलिये समय देकर जोखिम की दृष्टि से जांच आवश्यक है।

बेहद थकान, कमजोरी, चक्कर या घबराहट, सिरदर्द या सिर में भारीपन, अनिद्रा, आखों के सामने कालापीलापन आना, बार-बार चढ़ने वाला बुखार, बार-बार ठण्ड लगना अथवा शरीर टूटना इत्यादि पर ध्यान देने की जरूरत है। जोखिम के लक्षण हों तब रेफर करना आवश्यक है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को इस तथ्य की जानकारी रखना आवश्यक है कि सामुदायिक स्वास्थ्य एक विस्तृत विषय है। इसमे चिकित्सा के साथ स्थान व पर्यावरण की स्वच्छता, स्वच्छ पेयजल की उपलब्दि निस्तारण व्यवस्था (disposal system), कीट नियन्त्रण (Vector ओर pest control) समाज कल्याण पोषाहार इत्यादि से जुड़े विभागों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है क्योंकि यह सामुदायिक स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। इनका प्रभाव मां व शिशु स्वास्थ्य पर पडता है।

1.3 समूह, परिवार, जाति, क्षेत्र के स्वास्थ्य पर पडने वाले प्रभाव

1.3.1 समूह एवं परिवार

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जो कि समूह मे रहता है। हमारे स्वास्थ्य पर समूह, परिवार आदि का प्रभाव पडता है। इन सभी में कुछ आम व निर्णायक घटक होते हैं जैसे प्रति व्यक्ति या पारिवारिक आय, शैक्षणिक स्तर, खानपान, रहन-सहन, स्थान का विकास इत्यादि। जिन समुदायों का आर्थिक व शैक्षणिक स्तर ऊँचा होता है, उन परिवारों में रहन-सहन, खान-पान, स्वास्थ्य समस्या होने पर समय पर चिकित्सा परामर्श के बारे में सजगता होती है। इस प्रकार का समूह विकसित क्षेत्र में रहता है या अपना स्थानीय विकास करने में सक्षम होता है। यह सभी बातें स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव डालती हैं। परंतु प्रश्न यह उठता है कि हमारे यहां पर यह स्थिति कितने परिवारों मे है ? मुश्किल से 30-40 प्रतिशत परिवारों में शेष अर्थात अधिकांश परिवार शहरों के कच्ची बस्ती इलाके व गावो में रहते हैं। आय व शिक्षा में पिछडने के कारण उनका रहन-सहन, खान-पान सही व अच्छा नहीं है व अस्वच्छ, अल्पविकसित वातावरण मे रहने के कारण उनमें स्वास्थ्य समस्यायें भी अधिक होती हैं जिनका समय पर उपचार आर्थिक स्थिति व सुविधाये नही होने के कारण नही हो पाता है। यह सारी परिस्थितियाँ एक चक्र के समान एक दूसरे से जुडी हुई हैं व सामुदायिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालती हैं।

इसी प्रकार जीवन शैली, सोच-विचार, क्षेत्रीय संस्कृति इत्यादि का प्रभाव भी स्वास्थ्य पर पडता है। आज के उच्चतम तकनीकी विकास के युग मे मानव समाज के हर तबके में परिवर्तन आया है। सामाजिक मूल्य बदल रहे हैं । मानवीय रिश्ते कमजोर पडते जा रहे हैं । व्यक्तिवाद व उपभोक्ता संस्कृति पनपी है। व्यापारीकरण व बाजारीकरण के इस वातावरण मे एक ओर निरन्तर आय बढ़ रही है वही पर खर्चे व खर्च करने के अवसर बढ गये हैं। व्यस्त दिनचर्या, भागदौड़, तीव्र प्रतिस्पर्धा, अथाह मनोरंजन, फास्टफूड, नाईटलाईफ नशावृत्ति, सुख सुविधा युक्त घर व बाहर के स्थान जहां पर शारीरिक श्रम हेतु स्थान नही है इन सभी बातों ने एक विचित्र मानसिक तनाव उत्पन्न कर रखा है। बढता मोटापा, तनाव से उत्पन्न होने वाले विभिन्न रोग (stress induced ailments) जैसे मधुमेह, उच्चे रक्तचाप, हृदय की समस्याये, एसिडिटी, अल्सर, जोड़ों के रोग (arthritis) इत्यादि शहरी क्षेत्रो में तेजी से बढ रहे हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जहां एक ओर आवश्यक सुविधाओं की व्यापक व भारी कमी स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव छोड़ती है वहीं पर दूसरी ओर जरूरत से ज्यादा भौतिक सुख सुविधाओं का वातावरण भी स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालता है।

तकनीकी विकास, औद्योगीकरण व जीवन शैली में परिवर्तन के फलस्वरूप उत्पन्न पर्यावरणीय प्रदूषण ने भी स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाला है।

1.3.2 जाति

जाति अर्थात वर्ण व्यवस्था का भी स्वास्थ्य पर प्रभाव पडता है क्योंकि हर जाति का अपना शैक्षणिक, आर्थिक, व्यवसायिक व सामाजिक स्तर होता है। जिन जातियों में शिक्षा व खासकर महिला शिक्षा एवं जीवन विकास की अन्य बातों के प्रति सजगता आ गई है वहां पर जातिगत प्रभाव मिट सा जाता है व महिला स्वास्थ्य सुधरता है। अधिकतर उच्च व मध्यम श्रेणी वाली जातियों में इसी प्रकार का परिवर्तन हुआ है। परंतु अनुसूचित जाति व जनजाति मे सामान्य स्वास्थ्य दशा अच्छी नहीं है। शिक्षा व जीवन विकास के अवसरों से वंचित रहने के कारण यह राष्ट्रीय विकास धारा से अभी भी जुडे नहीं हैं। शिक्षा हमारे लिये आवश्यक है यह सोच इन जातियों में बहुत कम विकसित हो पायी है। महिला शिक्षा नहीं के बराबर है व उनकी सामाजिक स्थिति अत्यंत कमजोर है इस कारण महिला स्वास्थ्य बदतर हालत में है। इन जन-समुदायों में मातृ व बाल मृत्यु दर भी बहुत ऊँची है ।

1.3.3 क्षेत्रीय प्रभाव

स्वास्थ्य पर कुछ क्षेत्रीय प्रभाव भी पड़ते हैं। यह प्रभाव मुख्यतया उस क्षेत्र की भौगोलिक व पर्यावरणीय स्थिति से जुडे रहते हैं।

सर्द इलाकों में रहने वाले समुदायों में स्वास्थ्य बेहतर होता है जबकि गरम इलाको में रहने वाले लोग अक्सर कमजोर होते हैं। अधिक नमी जैसे पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में श्वसन रोग व अन्य सक्रमण अधिक होता है। उन क्षेत्रों में जोड़ों के रोग भी अधिक होते हैं। अधिक नमी, वर्षा व पानी के ठहराव वाले क्षेत्रों में मलेरिया, कालाजार, डेंगू इत्यादि बीमारियां अधिक होती हैं। घनी आबादी खासकर जहां पर मेले इत्यादि भरते हैं वहा पर विशेष प्रकार के संक्रामक रोग

जैसे हैजा, प्लेग, टायफाईड, दिमागी बुखार (meninigitis) हिपैटाईटिस इत्यादि अधिक फैलते हैं, यह अधिकतर दूषित पेयजल व गंदगी के कारण होते हैं।

ऐसे क्षेत्र जहां पर स्वच्छ पेयजल उपलब्ध नहीं होता वहां पर पेट की बीमारियां अधिक होती हैं। घनी आबादी वाले क्षेत्रों में संक्रामक रोगों की बारम्बारिता अधिक होती है। बहुत से संक्रमण हवा के माध्यम से एक से दूसरे को लगते हैं। व्यस्ततम बडे शहरी क्षेत्रों में रहने वालें लोगों में मानसिक तनाव से उपजने वाले रोग जैसे रक्तचाप, मधुमेह, हृदय रोग, अस्तता (acidity) इत्यादि अधिक होते है।

क्षेत्रीय विकास नहीं होने का सामुदायिक स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव भी पडता है। जैसे ग्रामीण क्षेत्र मे चिकित्सा सुविधायें बहुत कम है। वहां पर रहने वाले मरीजों को समय पर व सही चिकित्सा नहीं हो पाती है। इस कारण उनका स्वास्थ्य अधिक बिगडता है। इस बात का विशेष प्रभाव प्रसूति स्वास्थ्य पर देखा गया है गांवों मे प्रसूति सेवाये बहुत कम उपलब्ध हैं। ग्रामीण क्षेत्र में मातृ व बाल मृत्युदर बहुत ऊँची हैं ।

1.3.4 व्यवसाय

कुछ व्यवसायों का प्रभाव भी स्वास्थ्य पर पड़ता है। लम्बे समय तक बैठकर काम करने वालों में पैर के जोड़ों की सूजन (arthritis) कब्जियत, बवासीर इत्यादि अधिक होते है। लेखा सम्बधी (acounts) कार्य में बहुत ज्यादा मानसिक शक्ति लगाने वालों को तनाव ज्यादा रहता है । रसायन उद्योगों में काम करने वालों को उन रसायनो के कुप्रभावों का शिकार होना पडता है खासकर जहां पर जहरीली गैसेज निकलती हैं। कई प्रकार के उद्योगों में दूषित हवा से श्वसन रोग अधिक होते हैं।

इसी प्रकार रात्रि के समय चलने वाले व्यवसाय या उद्योग मे काम करने वालों में शरीर का विश्राम व नींद का नियम गड़बडा जाता है। इसका विपरीत प्रभाव खासकर मानसिक स्वास्थ्य पर पडता है। रेडियोधर्मिता (radio activity) वाले उद्योगों में काम करने वालो को इसके हानिकारक प्रभाव पड़ने का सदैव खतरा रहता है इसलिये सतर्कता व बचाव के वैज्ञानिक प्रकार उपयोग में लेते हुए काम करना आवश्यक होता है। रेडियोधर्मिता का प्रभाव कुछ प्रकार के कैन्सर उत्पत्ति मे होता है यह एक माना गया तथ्य है।

इस प्रकार अलग-अलग व्यवसायों के अलग-अलग प्रकार के प्रभाव होते हैं जो कि स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। इन्हें व्यवसायिक प्रभाव (professional harzards)कहते हैं ।

1.4 अंधविश्वास, समाज-परम्पराएं एवं प्रसूति

अधविश्वास व परम्पराओ का प्रभाव प्रसूति पर पडता है । आज प्रसूति एक विकसित चिकित्सा व विज्ञान है अत: इसमें अंधविश्वासो की गुंजाईश नहीं है परंतु हमारे समाज का एक बहुत बड़ा तबका अभी भी इनकी गिरफ्त में है। इसलिये इस विषय में प्रसूति विज्ञान सहायिका को जानना आवश्यक है ।

1.4.1 अंध विश्वास

कुछ अंध विश्वास प्रसूति पर प्रभाव नहीं छोडते हैं परंतु अधिकतर चिकित्सा विज्ञान के सिद्धांतो के खिलाफ होते हैं, बनते काम को बिगाड़ने वाले व मां व शिशु स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव छोडने वाले होते हैं। इसलिये प्रस्तुत विज्ञान सहायिका को क्षेत्र में प्रचलित अंधविश्वासों के बारे में जानना व उनके निवारण हेतु प्रयत्न करना आवश्यक है। परम्परागत व खासकर ग्रामीण परिवारों में प्रजनन से जुड़ी विभिन्न क्रियाओं के साथ विभिन्न प्रकार के अंधविश्वास जुडे हैं जैसे :- प्रसव, प्रसवोतार व माहवारी के काल को अस्वच्छ माना जाता है। इस कारण इन दिनो छुआछूत बरती जाती है। इन दिनों की शारीरिक स्वच्छता को महत्व नहीं दिया जाता है । बल्कि इस अवधि में अस्वच्छ सामान व कपडे काम में लिये जाते हैं। प्रसव पश्चात् पांच-छः दिन तक स्नान की मनाई होती है। सूरज पूजन (छठे से आठवें दिन) स्नान करवाकर स्वच्छ कपडे पहनाये जाते हैं। प्रसवोत्तर कालीन यह अस्वच्छता ही मातृ व शिशु संक्रमण का कारण हो सकती है ।

- गर्भवती द्वारा अधिक पोषाहार लेने से बच्चा मोटा होगा जिससे प्रसव मे अधिक कष्ट हो सकता है ।
- गर्भवती द्वारा लिया गया सफेद आहार (दूध, केला, दही इत्यादि) या चिपचिपा पदार्थ (अरबी, भिण्डी इत्यादि) शिशु शरीर पर जमता है व नुकसान करता है ।
- बहुत से खाद्य पदार्थ जैसे मूंगफली, गुड, तिल, खोपरा, चना इत्यादि गरम होता है। इसलिये गर्भवती को नहीं लेना चाहिये ।
- गर्भवती को शाम पडे अकेले घूमने नहीं जाना चाहिये। शिशु पर किसी की छाया पड सकती है।
- प्रसव के बाद पांच दिनों तक धान या पूर्ण भोजन नहीं लेना चाहिये। यह मां व शिशु को नुकसान करता है ।
- प्रसवोत्तर काल में खट्टी चीजें जैसे दही, खट्टे-मीठे फल, इमली, छाछ, आँवला, नीबू इत्यादि नहीं लेना चाहिये । इससे शरीर (जनन अंग) में पकाव यानि मवाद पडता है।
- प्रसव के बाद बाहर नहीं बैठना चाहिये क्योंकि हवा लगती है । प्रसूता के कमरें की खिड़कियाँ बद रखी जाती हैं ताकि हवा नहीं लगे। खुली हवा व दिन की बाहरी रोशनी दोनों ही नुकसान पहुँचाती है।
- प्रसव के बाद पानी कम पीना चाहिये। धापकर या अधिक पानी पीने से प्रसूता का पेट बडा हो जाता है ।
- प्रसवोत्तर काल में मां व शिशु को नये वस्त्र नहीं पहनने चाहियें।
- प्रसवोत्तर काल में सबसे लाभदायक व आवश्यक पदार्थ घी है। इसलिये तीन चार माह तक खूब घी खिलाना चाहिये। बहुत से परिवारों में इसकी एक निश्चित मात्रा शुरू से ही तय होती है जैसे 4,5,10 किलो।
- प्रसूता को घी व घी डालकर बनाये गये खास आहार पर किसी की नजर नहीं पडनी चाहिये।

– मां का प्रथम दूध यानि खीस (colostrum) नुकसान करता है। इसलिये यह शिशु को नहीं देना चाहिये ।
– ताजे फल, बहुत सी शाक-सब्जियाँ, सलाद, शरबत इत्यादि ठण्डे पेय प्रसवोत्तर काल में नहीं देने चाहियें क्योंकि यह नुकसान करते हैं।

चूंकि यह अधिकतर अंधविश्वास हानिकारक होते हैं इसलिये इनका निवारण आवश्यक है। ऐसे परिवारों में खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में इस विषय की सही जानकारी सही भाषा में देकर समझाकर अथवा शिक्षा से इसका निवारण महत्वपूर्ण है। इस विषय में सबसे पहले गर्भवती महिला व उसके परिवार का विश्वास जीतना आवश्यक है।

1.4.2 समाज-परम्परायें

संतानोत्पत्ति एक सामाजिक कार्य माना जाता है। इस मान्यता के अनुसार गर्भवती की देखभाल में मदद करना, उसे सलाह देना, प्रसव के दौरान सहायता करना, शिशु जन्म पर बधाई देना, सूरज पूजन, नामकरण जैसे समारोह करने का रिवाज, रिश्तेदारों में लेनदेन, भेंट-तोहफे देना इत्यादि आवश्यक माना गया है। यह सब एक प्रकार से प्रसूता को भावात्मक आधार, सुरक्षा व खुशी प्रदान करते हैं, उसके मानसिक स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव छोड़ते हैं ।

प्रसव के पश्चात् कुछ विशेष पदार्थ लेना आवश्यक माना गया है जैसे गुड़, सौंठ, मेवे, अजवाईन, जीरा, खोपरा, गुन्दकुन्द युक्त आहार। यह शरीर को पुन: स्वस्थ बनाने व दुग्ध उत्पादन में मदद करते हैं।

बहुत से परिवारों मे जरूरत से ज्यादा घी खिलाने की परम्परा है। आवश्यकता से अधिक चर्बी अक्सर शरीर को मोटा व बेडौल बनाती है। मोटापा स्वास्थ्य का लक्षण नहीं है बल्कि अनेक बार स्वास्थ्य समस्या उत्पन्न करता है।

प्रसव के बाद कुछ महीनों तक जरूरत से ज्यादा आराम करने की परम्परा है। यह भी शरीर को पुन: स्वस्थ्य होने की क्रिया में बाधा डालता है। प्रसवोत्तर व्यायाम व शारीरिक श्रम शरीर को पुनःस्वस्थ करने व आवश्यक गठीलापन लाने में सहायक माना गया है। जरूरत से ज्यादा आराम, मानसिक स्वास्थ्य को भी प्रभावित करता है व शरीर को मोटा बनाता है। बहुत से परिवारों में अतिरिक्त पोषाहार, प्रसव पश्चात् मात्र दो तीन माह तक आवश्यक माना जाता है उसके बाद नहीं। जबकि धात्री अवस्था वर्ष दो वर्ष तक चलती है। अतिरिक्त पोषाहार पूरे धात्री अवस्था में आवश्यक होता है क्योंकि दुग्ध उत्पादन क्रिया में प्रतिदिन 500 अतिरिक्त कैलोरी, 50 ग्राम प्रोटीन व अन्य पौष्टिक तत्व आवश्यक होते हैं। इस प्रकार सीमित काल तक अतिरिक्त पोषाहार मिलने की परिस्थिति में मां व शिशु स्वास्थ्य का कमजोर होना स्वाभाविक है। मां कमजोर कुपोषित हो जाती है व शिशु को पूरा व पूर्ण गुणवता वाला दूध नहीं मिलने के कारण वह भी कमजोर तथा कुपोषित हो जाता है।

अतिरिक्त पोषाहार शिशु के लिये भी चौथे महीने से आवश्यक माना गया है। बहुत से परिवारों में शिशु को ऊपर का आहार इतनी (जल्दी शुरू नहीं करने की परम्परा है। स्पष्ट है हमारे यहा पर व्यापक मातृ बाल कुपोषण के पीछे मुख्य कारण पोषाहार संबंधी गलत सोच है।

इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र में घर पर अप्रशिक्षित एवं पारिवारिक दाई द्वारा प्रसव करवाने की परम्परा है। जिन गांवों से स्वास्थ्य केन्द्र दूर है या आस-पास प्रसूति चिकित्सा उपलब्ध नहीं है वहां घर पर प्रसव परम्परा के साथ एक मजबूरी हो सकती है। परंतु बहुत से स्वास्थ्य केन्द्रों पर यह सुविधायें होते हुए भी आसपास बसे समुदाय के लोग वहां पर प्रसव नहीं करवाते हैं क्योंकि घर पर प्रसव एक परम्परा है। घर पर प्रसव परिवार वालो को सुविधाजनक हो सकता है परंतु आज के संदर्भ में इसे सुरक्षित नहीं माना जाता है।

अप्रशिक्षित दाई परम्परागत तरीके से प्रसव करवाती है। परम्परागत प्रसव में संक्रमणरोधी तरीकों की अनुपालना नहीं की जाती है, किसी किसी केस में कठिनाई आने पर घर पर उसे तुरत संभालने की सुविधा भी नहीं होती है। इसलिये परम्परागत प्रकार से घर पर प्रसव सुरक्षित नही माना जाता है।

अत: यह स्पष्ट है कि अधिकांश परम्पराओं का प्रभाव प्रसूति स्वास्थ्य पर पडता है।

इसके अतिरिक्त प्रसूति को प्रभावित करने वाले अनेक अंधविश्वास अथवा परम्पराएं क्षेत्र विशेष में पाई जा सकती है। प्रसूति विज्ञान सहायिका को इस विषय में सतर्क रहना चाहिये तथा गलत विश्वास एव परम्पराओं में सुधार हेतु सकारात्मक प्रयास करना चाहिये।

1.5 सामाजिक नियन्त्रण, धर्म एवं राजनीति का प्रसूति स्वास्थ्य पर प्रभाव

1.5.1 सामाजिक नियन्त्रण

हमारा समाज पितृसत्तात्मक है। इस व्यवस्था में वरिष्ठ पुरूषों के हाथ में पारिवारिक व सामाजिक नियन्त्रण रहता है। पुरूष ही वंश चलाने वाला व परिवार का उत्तराधिकारी माना जाता है। इस कारण परिवार व सामाजिक स्तर पर लगभग सभी महत्वपूर्ण बातें तय करने का अधिकार पुरूष का ही माना जाता है। पुरूषो की इच्छा, सुविधा, रूचि, सोच विचार, सुरक्षा, हितों आदि को प्राथमिकता देते हुए हमारी सस्कृति विकसित हुई है। हमारी सोच, रीति रिवाज, परम्पराये उसी के अनुसार बनी हैं। इस प्रकार की व्यवस्था मे महिला के हितों की रक्षा नही हुई है। उसे सदैव दूसरो पर निर्भर माना गया है। विवाह से पूर्व पिता पर, विवाह बाद पति पर व ढ़लती आयु में पुत्र पर। समाज व परिवार के अनेक महत्वपूर्ण बातों को तय करना, निर्णय लेना, व नियन्त्रण के अधिकार से उसे वंचित रखा गया है। इसी प्रकार आर्थिक सुरक्षा, जीवन विकास के समान अवसर, शिक्षा, सामाजिक न्याय इत्यादि बातें उसके लिये आवश्यक नहीं मानी गई हैं। ऐसी परिस्थिति में वह सदैव पीड़ित, शोषित व कमजोर अवस्था मे रही है। मातृ स्वास्थ्य कमजोर होने के पीछे मुख्य कारण महिला होने के नाते उनकी कमजोर माली हालत व कमजोर प्रतिष्ठा (poor status) है।

वर्तमान काल में शिक्षा व जागरूकता के कारण बहुत से देशों व हमारे देश के कुछ समुदायों में परिवर्तन आया है। जहा पर महिलाओं ने संघर्ष किया है, वहा पर बहुत कुछ बदला है। आज शिक्षित, जागरूक, शहरी परिवारों में महिलाओं की स्थिति अशिक्षित पिछडे हुए ग्रामीण परिवारों की महिलाओं से बहुत बेहतर है। उन्हे जीवन विकास के समान अवसर मिल रहे बहुत से क्षेत्रो

में वह आगे बढी है। परंतु इस पुरूष प्रधान समाज की सोच में बहुत सी बातो में बदलाव आना बाकी है। जैसे की पहले भी बताया जा चुका है हमारे समाज का अधिकतर भाग अभी भी अशिक्षित, परम्परागत सोच रखने वाला, आर्थिक दृष्टि से कमजोर व जागरूक नहीं है। इसलिये अधिकतर महिलाओं की स्थिति, सामान्य स्वास्थ्य एवं प्रजनन स्वास्थ्य (reproductive health) कमजोर है।

प्रसूति महिलाओं से जुडा एक विषय है। प्रसूति शास्त्र एक विकसित चिकित्सा विज्ञान है। भारत एक प्रजातान्त्रिक देश है। हमारे देश में केन्द्र व राज्य सरकार के चिकित्सा एव स्वास्थ्य विभाग के मातृ व शिशु स्वास्थ्य (MCH) कार्यक्रम के अन्तर्गत यह सेवायें दी जाती हैं। परंतु ध्यान देने की बात यह है कि अधिकतर महिलाये खासकर ग्रामीण क्षेत्र की प्रसूति सेवाओ से वंचित हैं। यह एक प्रशासनिक चुनौती है। प्रशासन भी हमारे पुरूष प्रधान समाज का अंग है और प्रशासनिक सोच भी सामाजिक सोच से प्रभावित है। महिलाओं के कल्याण के लिये, उनके स्वास्थ्य रक्षा के लिये सबसे आवश्यक सही प्रसूति सेवायें हैं। यह सोच प्रशासन में सभी स्तरों पर आज समय की मांग है। वर्तमान में लगभग 70 प्रतिशत महिलाओं का प्रसव घर पर होता है व अधिकतर अप्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा करवाया जाता है। घर पर व अप्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा प्रसव सुरक्षित नहीं माना जाता है व यही महिला स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालता है। ऊँची मातृ मृत्यु व क्षति दर के पीछे भी यही सब कारण है। सामाजिक निर्णयों में महिलाओं की भागीदारी से निश्चित तौर पर प्रसूति का स्वास्थ्य बढेगा, इस तथ्य को रेखांकित करना जरूरी है।

1.5.2 धर्म

प्रसूति स्वास्थ्य महिलाओं की शिक्षा व उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति से प्रभावित होता है। जहां पर महिला शिक्षित है व उसे स्वयं के विषय में सोचने व निर्णय लेने की छूट है वहां पर उसे विवाह, बच्चे कब व कितने, गर्भ रखना है या नहीं रखना है इत्यादि में उसकी स्वयं की सोच होती है। वह अपने व अपने बच्चों के हित को समझते हुए इन बातों का निर्णय करती है।

परंतु प्रश्न यह उठता है कि क्या सभी धर्मो में महिलाओं की स्थिति मजबूत है, क्या सभी धर्मो में शिक्षा, समान सामाजिक व आर्थिक न्याय, स्वयं के हित मे क्या है, इसके अनुसार निर्णय लेने की छूट है स्पष्ट उत्तर है नहीं। विश्व के बहुत से देशों मे धार्मिक प्रभाव के कारण महिलाओं को गर्भ निरोध, गर्भ समापन, विवाह इत्यादि में सोच विचार करने व निर्णय लेने की छूट नहीं है। अनेक देशों में धार्मिक प्रभाव के कारण परिवार नियोजन की सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं हैं। ऐसे देशों व परिवारों में नहीं चाहते हुए भी अधिक बच्चे पैदा करने पडते हैं। इस प्रकार धर्म का महिला के प्रसूति स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालता है।

1.5.3 राजनीति

सामाजिक सोच का राजनीति पर प्रभाव पडता है। राज्य चलाने वाली व्यवस्था को हम प्रशासन, सरकार या गवर्नमेंट कहते हैं। राजनैतिक विचारधारा या राजनीति के दिशा निर्देश के अनुसार ही

सरकार काम करती है। महिला के विषय में सामाजिक सोच यानी उसकी स्थिति का राजनीति व प्रशासन पर प्रभाव पड़ता है व उसके अनुसार ही सरकार काम करती है।

हमारे संविधान में महिला व पुरूष को समान अधिकार हैं परंतु व्यवहार में हम पाते हैं कि अधिकतर महिलायें शिक्षा, जीवन विकास के अवसर, आवश्यक स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित रहती हैं। इसका मुख्य कारण निर्देशित कार्यक्रमो की क्रियान्विति नहीं होना है ।

महिला नेतृत्व, भागीदारी, सशक्तिकरण की बातें लम्बे समय से चल रही हैं। महिलाओं को आगे लाने की दृष्टि से बनाया गया महिला आरक्षण बिल अभी भी दोनों सदनों मे पारित नही हुआ है। इसके पीछे कारण दलगत राजनीति है व समाज के एक बहुत बड़े प्रभावशाली तबके का सोच है। स्पष्ट है राजनीति का भी महिला स्वास्थ्य व खासकर प्रसूति स्वास्थ्य पर प्रभाव पडता है।

1.6 मानव की मूलभूत आवश्यकताएं संतानोत्पत्ति, शरीर एवं मन का संबंध

1.6.1 मूलभूत आवश्यकताएं (Basic needs)

मानव की मूलभूत आवश्यकताऐ आहार, निवास, सुरक्षा, प्रजनन व स्वास्थ्य हैं। आज के संदर्भ मे हम शिक्षा व विकास को भी सम्मिलित कर सकते हैं।

आवास: संसार का प्रत्येक प्राणी अपने लिए आवास या घरौंदा चाहता है। उपयुक्त आवास का मानव के शारीरिक एवं मानसिक विकास से गहरा नाता है। प्रसूति स्वास्थ्य के निम्न स्तर में, आवास का ना होना अथवा अनुपयुक्त होना प्रमुख कारण है।

आहार एवं जल: जीवित व स्वस्थ रहने के लिये आहार मौलिक है व आहार मे सबसे महत्वपूर्ण जल है। मान्यता है कि पृथ्वी पर जीवन की शुरूआत जल से हुई थी। मनुष्य जाति में आज भी कुछ इसी प्रकार की प्राकृतिक व्यवस्था है। गर्भस्थ शिशु (fetus) एक जलकोश में विकसित होता है, उस जल को उल्वजल या लायकर (liquor amni) कहते हैं।

स्वच्छ पेयजल प्यास बुझाने के साथ-साथ पूरे शरीर को तरोताजा रखता है। हमारे शरीर की सभी क्रियायें जल के माध्यम से होती हैं। हमारा पाचन व मूत्र संस्थान सुचारू रूप से तभी काम करते हैं जब हम पर्याप्त मात्रा में पानी लेते हैं। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये हमें कम से कम 4-5 लीटर पानी लेना आवश्यक है। शरीर को अन्दर से साफ व रोगमुक्त रखने के लिये स्वच्छ पेयजल का विशेष महत्व है। हमारे शरीर में होने वाली संक्रामक बीमारिया खासकर पेट की बीमारियां दूषित व संक्रमित जल (polluted & infected water) से होती हैं। स्वच्छ पेयजल स्वस्थ जीवन की प्रथम आवश्यकता है।

पौष्टिक आहार मानव जीवन की मूलभूत आवश्यकता है। हमारा आहार अर्थात खाद्य पदार्थ विभिन्न आवश्यक तत्वों से बनता है। जिसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन्स व खनिज मुख्य हैं। यह हमारे शरीर को ऊर्जा प्रदान करते हैं व विभिन्न सूक्ष्मस्तर की क्रियाओं मे काम आते हैं। ऊतक (tissue) निर्माण मे प्रोटीन कच्चे माल की तरह काम आता है। हमारे ऊतक

कोशिकाओं से बनते हैं। भ्रूण (embroy) में कोशिका (cell) निर्माण कार्य मे प्रोटीन के साथ फोलिक एसिड की अहम भूमिका है, अस्थि निर्माण व उसकी मजबूती कैल्सियम से होती है, रक्त निर्माण मे लोहा व फोलिक एसिड आवश्यक है।

प्रसूतिकाल में पर्याप्त मात्रा में पेयजल व पोषाहार का विशेष महत्व है। गर्भधारण का अर्थ शरीर मे एक नवीन शरीर का सृजन है। गर्भ का विकास सही हो, उसकी बढ़त अच्छी हो इसलिये गर्भवती महिला को पौष्टिक आहार लेना चाहिये। शुद्ध पौष्टिक का अर्थ सही मात्रा व अनुपात में आवश्यक तत्व व ऊर्जा युक्त है। महिला का शरीर स्वस्थ बना रहे, इसलिये भी स्तनपान व गर्भकालीन पोषाहार का विशेष महत्व है।'

शिक्षा व स्वास्थ्य

स्वास्थ्य व शिक्षा एक दूसरे के पूरक हैं। शिक्षा जीवन विकास से जुडे हर आयाम में महत्वपूर्ण है। यह अज्ञान रूपी अधकार को दूर करने में सहायक है। स्वस्थ रहने के लिये क्या आवश्यक है इसकी जानकारी प्राप्त करने व सुविधाओं को जुटाने में शिक्षा की अहम भूमिका है। एक स्वस्थ शिक्षित व्यक्ति ही गुणवत्ता पूर्ण जीवन जी सकता है व स्वावलंबन के साथ विकास में भागीदार बन सकता है। किसी भी राष्ट्र के विकास में उसके नागरिकों का स्वस्थ व शिक्षित होना हर दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

स्वास्थ्य व शिक्षा के विषय में महिला स्वास्थ्य एवं शिक्षा को अधिक उपयोगी व कारगर माना गया है। एक स्वस्थ माँ स्वस्थ बच्चे व परिवार को जन्म देती है। एक शिक्षित मां हमेशा अपनी संतानों (कन्या व पुत्रों) को समान रूप से शिक्षित कर स्वावलंबी बनाने का प्रयत्न करती है। इस प्रकार बालिका शिक्षा को विशेष रूप से महत्पूर्ण माना गया है ।

विकास

आज के संदर्भ में क्षेत्रीय विकास मानव जीवन की आवश्यकता है व इसका प्रभाव भी सामुदायिक स्वास्थ्य पर पडता है। हमारे यहां पर शहरी क्षेत्र विकसित हैं, परंतु ग्रामीण क्षेत्र अभी भी बहुत पिछडा हुआ है। शिक्षा, यातायात, सम्पर्क साधन, बाजार व्यवस्था, रोजगार के अवसरों की अत्यन्त कमी के कारण बहुत लोग गांवों से पलायन कर शहरों में आकर बसते हैं। उस क्षेत्र को कच्ची बस्ती या स्लम (slum area) एरिया कहते हैं। कच्ची बस्ती में रहन-सहन गांवों से भी बदतर होता है क्योंकि अस्वच्छता, स्थान की मारामारी, तनाव, असुरक्षा, पैसे की तंगी, महिलाओं के लिये आवश्यक प्रायवेसी का अभाव इत्यादि के कारण यह विभिन्न संक्रमण व कुपोषण से उत्पन्न स्वास्थ्य समस्याओं के गढ़ बन जाते हैं। व इनमें अपराधी तत्व भी बहुत पनपते हैं। इन सभी बातों का सामुदायिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव पड़ता है। शहरों में बढ़ती हुई कच्ची बस्तिया गांवों का विकास नहीं होने की परिणति है।

गांवों का विकास नहीं होना, खासकर गांवों में स्वास्थ्य व प्रसूति सेवायें विकसित नहीं होने का विपरीत प्रभाव माँ व शिशु स्वास्थ्य पर पड़ा है।

संतानोत्पत्ति (Procreation)

इसे प्रजनन भी कहते हैं अपनी प्रजाति को बनाये रखने की क्रिया ही प्रजनन है। संतानोत्पत्ति में कामेच्छा की पूर्ति भी निहित है। यौन संतुष्टि भी प्राथमिक आवश्यकताओ में से एक है। लेकिन मनुष्य जाति में प्रजनन जीवन की एक खास अवधि में ही संभव है। महिलाओं में यह

अवधि 15 से 45 वर्ष है। इस अवधि को जनन या रजोकाल (reproductive period) कहते हैं। चूंकि मनुष्य जाति में जनन की लगभग पूर्ण जिम्मेदारी महिला पर है अत: इसके अनुसार ही उसके शरीर की रचना व क्रिया है। जीवन के 45वें वर्ष के आसपास मासिक धर्म रूक जाता है व संतानोत्पत्ति क्रिया पर विराम लग जाता है। मासिक रूकने क्रे इस काल को रजोवृति या मेनोपॉज (menopause) कहते हैं।

मानव भ्रूण दो प्राथमिक कोशिकायें अण्ड या डिम्ब (ovum) व शुक्राणु या स्पर्म (sperm or spermatozoa) का एक दूसरे में विलय हो जाने से निर्मित होता है। इस क्रिया को गर्भाधान (fertilization) कहते है। अण्ड स्त्री व शुक्राणु पुरूष में होता है व यह क्रिया स्त्री शरीर में होती है। स्त्री शरीर में शुक्राणु संभोग, सहवास या यौन संबध के द्वारा पहुंचते हैं। गर्भाधान के साथ ही गर्भविकास शुरू होता है। गर्भ विकास, प्रसव यानि शिशुजन्म, प्रसवोतार काल, स्तनपान काल इत्यादि समस्त क्रियायें लम्बे काल तक चलने वाली व शरीर को कमजोर बनाने वाली क्रियाएं हैं। इस कारण ही महिलाओं में संतानोत्पत्ति काल की सीमित अवधि है। पुरूषों मे जननकाल की सीमाये स्पष्ट नहीं है फिर भी हम इसे लगभग 18 वर्ष से 70 वर्ष तक मान सकते हैं। पुरूषों में स्पष्ट रूप से मेनोपॉज नहीं होता है।

जननकाल शुरू होने के लगभग 4-5 वर्ष पहले से ही स्त्री व पुरूष के शरीर मे विभिन्न प्रकार के यौन परिवर्तनों का दौर शुरू होता है। यह दौर लडकी में 10 वर्ष की आयु में शुरू होकर 19 वर्ष की आयु में थमता है। लडकों में 12-13 वर्षो की आयु में शुरू होकर यह 21 वर्ष की आयु तक चलता है। यौन परिवर्तनों के इस काल को किशोर अवस्था कहते हैं। किशोर अवस्था पूर्ण होने के बाद ही शारीरिक व मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संतानोत्पत्ति हेतु परिपक्वता आती है। हमारे देश में विवाह की कानूनी आयु लडकी में 18 वर्ष व लडके में 21 वर्ष निश्चित करने के पीछे यही प्राणीशास्त्रीय कारण रहा है। प्रथम संतान को जन्म देनें वाले माता पिता की आयु कम से कम क्रमश: 20 व 23 वर्ष होना प्रजनन स्वास्थ्य की मूल आवश्यकता है। इसी प्रकार प्रजनन की दृष्टि से पुरूष की अपेक्षा महिला स्वास्थ्य व उसकी शारीरिक मजबूती पर ध्यान देना आवश्यक है।

संतानोत्पत्ति से जुडी सभी क्रियाएं जैसे यौन परिवर्तन, मासिक धर्म, अण्ड विकास व निषेचन, गर्भधारण, शुक्राणु उत्पादन, यौन क्रिया, रजोनिवृत्ति इत्यादि हॉरमोन्स द्वारा संचालित होती हैं।

1.6.2 शरीर व मन का संबंध (Boby mind Relationship)

मानव मस्तिष्क का उच्चतम विकास हुआ है। इस कारण उसमें सोच विचार की शक्ति है। यह सोच विचार की क्रिया या क्षमता ही मन कहलाता है। मन मस्तिष्क का रचनात्मक भाग नहीं है। बल्कि एक उच्चतम मानसिक क्रिया है।

हमारे शरीर में होने वाली लगभग सभी क्रियाएं मस्तिष्क से नियन्त्रित होती हैं। यह कार्य तान्त्रिका सस्थान (nervous system) द्वारा सम्पन्न होता हैं। मस्तिष्क (brain), मेरूदण्ड (spinal cord) व इनसे निकलने वाली विभिन्न तन्त्रिकाओं (nerves) से तन्त्रिका संस्थान रचित है। तन्त्रिका की क्रमश: शाखाए व उपशाखाएं, तन्तु शरीर के हर भाग में फैले हैं। इनका

जाल होता है जिससे नेटवर्क बनता है। यह नेटवर्क विभिन्न जैव रसायनिक प्रतिक्रियाओं के माध्यम से काम करता है। हमारे शरीर के विभिन्न संस्थानों में होने वाली क्रियाओं की सूचना मस्तिष्क को पहुँचती है व यही हमारे सोच विचार उपजने का केन्द्र भी है। इस कारण मन व शरीर का स्वाभाविक संबंध है। मनो-शारीरिक सम्बंधों को कोई भी चिकित्सा प्रणाली नकार नहीं सकती है।

प्रजनन संबंधी विभिन्न क्रियायें जैसे यौन विकास, मासिक धर्म, अण्ड विकास व विमोचन, गर्भधारण, प्रसव, स्तनपान, शुक्राणु उत्पादन, यौन जीवन इत्यादि हॉरमोन्स द्वारा संचालित होते हैं। हमारे शरीर मे हॉरमोन्स विभिन्न ग्रंथियों से निकलते हैं व रक्त द्वारा पूरे शरीर में स्त्रावित होते हैं। मुख्य ग्रंथी पीयूषिका (Pitutary gland) मस्तिष्क मे स्थित है। व उससे निकलने वाले जनन पोषक हॉरमोन्स (gonadotrophins) कहलाते हैं। पीयूषिका ग्रंथी के पास वाला क्षेत्र हाइपोथैलेमस कहलाता है व यह पीयूषिका को संदेश भेजकर हॉरमोन्स का उत्पादन नियन्त्रित करता है। हाइपोथैलेमस में हमारे विभिन्न भाव जैसे संतोष, असंतोष, आशा निराशा, संकोच, उत्तेजना, आघात, सुविधा, असुविधा, तनाव, सवदेनशीलता इत्यादि दर्ज होते हैं। इनमें से कुछ भावनाओं के संदेश हाइपोथैलेमस पीयूषिका को भेजता है व हॉरमोन उत्पादन क्रिया को प्रभावित करता है। स्पष्ट है प्रजनन से जुडी विभिन्न क्रियाओं का भी संबध हमारे मन से रहता है।

1.7 प्रसूतिकाल एवं मानसिक स्वास्थ्य

मस्तिष्क व हमारे सोचने विचारने की क्षमता की कुशलता ही मानसिक स्वास्थ्य है। शारीरिक स्वास्थ्य के साथ हमारा मानसिक स्वास्थ्य भी महत्वपूर्ण है। प्रसूति एक लम्बे काल तक चलने वाली क्रिया है। जिसमें शारीरिक कष्ट, असुविधा और महिला की विभिन्न परिस्थितियों के उतार चढा़व हो सकते हैं। इन सभी से मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है व किसी-किसी गर्भवती अथवा प्रसूता में मानसिक स्वास्थ्य समस्या उत्पन्न हो सकती है। शारीरिक स्वास्थ्य समस्याओं की अपेक्षा मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं को पहचानना कठिन होता है। इसलिये समस्या जानने के लिये समय देना, तसल्ली से पूछताछ करना व ध्यान देकर उपचार करना आवश्यक है।

जहां पर प्रसूतिकाल, शारीरिक स्वास्थ्य, पारिवारिक, आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियां सामान्य हैं वहां पर मानसिक स्थिति भी स्वस्थ होती है। जहां पर परिस्थितियां, स्वास्थ्य, प्रसूतिकाल सामान्य नहीं है वहां पर मानसिक संतुलन बिगड सकता है व मानसिक समस्या उत्पन्न हो सकती है। प्रसूतिकाल व शारीरिक स्वास्थ्य से जुडी निम्न परिस्थितियां मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती है।

- गर्भ नहीं ठहरना (infertility) ठहर कर बार-बार नष्ट होना (repeated pregnancy losses) मृत शिशु जन्म (still birth) जन्मजात दोष वाला शिशु (birth defect) इत्यादि
- गर्भवती में गंभीर कुपोषण एवं एनीमिया कमजोरी, दीर्घकालिक रोग इत्यादि
- अनचाहा गर्भधारण
- पारिवारिक तनाव, आर्थिक दृष्टि से कमजोर, बेरोजगारी, अकाल पड़ना, पति का सहयोग नहीं मिलना, पारिवारिक व सामाजिक आधार का अभाव

– गर्भावस्था में क्या सही क्या सही नहीं है । इस बात को लेकर असमंजस व चिन्ता खासकर प्रथम गर्भा (primigravida) में
– असामान्य गर्भस्थिति व जटिलताएं जैसे जुडवा बच्चे (twins) कमजोर गर्भविकास (IUGR) इत्यादि
– गर्भस्थ शिशु को लेकर चिन्ता, शिशु लिंग को लेकर चिन्ता खासकर जहां पर पहली संतान लडकी या लड़कियाँ हो
– जिसका प्रसव जटिल हो, जो गंभीर क्षति या आघात की शिकार हो
– कैरियर, नौकरी पेशा, पढ़ाई करने वाली गर्भवती को इस विषय की चिन्ता
– नवजात शिशु की अस्वस्थता
– दूध जल्दी सूखने अथवा कम आने की चिन्ता

1.7.1 प्रसवोत्तर अवधि: एक नाजुक दौर

प्रसवोत्तर काल मानसिक स्थिति का एक अत्यन्त नाजुक दौर होता है। प्रसव के तुरंत बाद वाले दिनों में अत्यधिक थकान व कमजोरी के कारण महिला स्वयं को संभाल नहीं पाती है। उसे अपने छोटे-छोटे काम जैसे उठना, बैठना, बाथरूम जाना स्नान इत्यादि में भी दूसरों से मदद लेनी पडती है। ऐसे मै कभी-कभी स्वय की असहायता एक चिन्ता व निराशा का कारण बन जाती है। उस पर एक नई जिम्मेदारी का बोझ वह कैसे उठा पायेगी। यह सोच उसे बेहद परेशान कर सकती है। किसी-किसी में परिवार, पति या आस-पास के लोगों से सहयोग, भावात्मक आधार, सहानुभूति पूर्ण व्यवहार नहीं मिलना भी निराशा का कारण हो सकता है। यह सभी बातें मानसिक स्वास्थ्य को कमजोर बनाती हैं। प्रसूता का मन विचलित (disturbed mind) हो सकता है। विचलित मन, चिन्ता इत्यादि साधारण समस्यायें है परंतु आगे जाकर अवसाद अर्थात डिप्रेशन (depression), मनोविक्षिप्ति यानि साईकोसिस (psychosis) का रूप धारण कर सकती है। यह मानसिक रोग खासकर उस महिला में होते है जिसका मानसिक स्वास्थ्य पहले से ही कमजोर है, पहले भी इसका दौरा पड़ चुका हो अथवा उसके नजदीकी रिश्तेदारों में इस मानसिक रोग का इतिहास हो।

प्रसवोत्तर कालीन संक्रमण (puerperal sepsis) भी मानसिक स्वास्थ्य को कमजोर करता है। इस कारण इस काल में होने वाली मनोविक्षिप्ति (puerperal psychosis) के साथ संक्रमण अवश्य होता है। इस प्रकार प्रसव व प्रसवोत्तर कालीन स्वच्छता का इस दृष्टि से भी महत्व है। स्पष्ट है इस काल में प्रसूता की देखभाल, उसकी मदद करना, भावात्मक आधार प्रदान करना, सहानुभूति पूर्ण व्यवहार, विश्राम इत्यादि महत्वपूर्ण हैं। विश्राम अर्थात पूर्ण आराम प्रसवोत्तर काल मे मौलिक है क्योंकि यह मानसिक व शारीरिक दशा को पुन: स्वस्थ करने में सहायक है।

1.8 सारांश

वर्णित की गई इकाई में सामुदायिक स्वास्थ्य के सबसे महत्त्वपूर्ण घटक महिला एवं प्रसूति स्वास्थ्य पर पड़ने वाले विभिन्न प्रभावों तथा स्थितियों का वर्णन कर प्रसूति विज्ञान सहायिका को यह संदेश देने का प्रयत्न किया गया है कि प्रसूति स्वास्थ्य को समग्र सेवाओं की गुणवत्ता

बढाई जा सकती है। इसी प्रकार यह भी दर्शाया गया है कि प्रसूति स्वास्थ्य के लिए आज शारीरिक ही नहीं अपितु मानसिक स्वास्थ्य पर भी पर्याप्त ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

1.9 प्रश्न

प्र.1 सुरक्षित मातृत्व किसे कहते हैं व इसमें कौन सी बातें निहित हैं?

प्र.2 प्रसूति सेवाओं को प्राथमिक क्यों माना जाता है?

प्र.3 पारिवारिक जीवन का स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है?

प्र.4 अन्धविश्वासों का निराकरण क्यूं आवश्यक है? यह किस प्रकार से हो सकता है?

प्र.5 प्रसव सुरक्षित कहाँ पर हो सकता है और क्यों?

प्र.6 महिलाओं की सामाजिक स्थिति किस प्रकार से उनके स्वास्थ्य को प्रभावित करती है?

प्र.7 मानव की मूलभूत आवश्यकतायें क्या है? किसी एक का वर्णन करें?

प्र.8 शिक्षा व स्वास्थ्य का क्या संबंध है?

प्र.9 शरीर व मन किस प्रकार से सम्बंधित हैं?

प्र.10 प्रसवोतार काल को एक नाजुक काल क्यों कहते हैं?

इकाई-2 सामुदायिक स्वास्थ्य एवं प्रसूति स्वास्थ्य

इकाई की रूपरेखा

2.0 प्रस्तावना

2.1 उद्देश्य

2.2 किशोरावस्था की समस्याएं

2.2.1 किशोरावस्था में शारीरिक परिवर्तन

2.2.2 जनन तंत्र में परिवर्तन

2.2.3 आवाज में परिवर्तन

2.2.4 मानसिक परिवर्तन

2.2.5 किशोरावस्था में सावधानियाँ

2.2.6 मानसिक विकास

2.2.7 कैशोर्य गर्भ

2.2.8 जीवन कौशल शिक्षा

2.3 लिंग (जेंडर) समानता

2.4 प्रजनन स्वास्थय की अवधारणा

2.5 परिवार स्वास्थय एवं प्रसूति स्वास्थ्य

2.6 प्रजनन मार्ग संक्रमण

2.6.1 यौन रोग

2.6.2 एच.आई.वी. / एड्स

2.7 व्यवसाय शिक्षा, सांस्कृतिक प्रतिमानों का महिला स्वास्थ्य पर प्रभाव

2.8 नियोजित अभिभावकता

2.9 टीकाकरण

2.10 सारांश

2.11 प्रश्न

2.0 प्रस्तावना

परिवार स्वास्थ्य सेवाओं का केन्द्र है। हर सदस्य का हित परिवार के अन्य सदस्यों के हित से जुड़ा है। ये एकीकृत तथा युगल हो सकते हैं। भारतीय समाज में पति-पत्नी के सम्बन्धों को अटूट तथा पवित्र माना जाता है। अक्सर परिवार में पिता की भूमिका प्रमुख होती है। वृद्ध माता-पिता भी परिवार का अभिन्न अंग होते हैं। इन सबको ध्यान में रखते हुये किसी भी परिवार के बारे में जानकारी लेना और उनके शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने में उनकी हर संभव मदद करना हमारी प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं का तथा स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का उद्देश्य होना चाहिये।

आज सरकारी एवं अन्य स्वास्थ्य चिकित्सा सेवाओं की गतिविधिया परिवार को लक्ष्य कर प्रदान की जा रही हैं। इसी कारण बच्चे के पैदा होने से लेकर उसके बडे होने तक तथा सेक्स संबंधित समस्याओं से लेकर प्रजनन तक एवं वृद्धावस्था से संबंधित सभी परेशानियों का इलाज उस परिवार की स्थिति को समझ कर करते हैं, जिससे स्वास्थ्य सेवा अधिक प्रभावी हो सके।

इन्ही उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत इकाई में परिवार जीवन शिक्षा के विविध पहलुओं को वर्णित किया गया है ।

2.1 उद्देश्य

इस पाठ को पढकर प्रसूति विज्ञान सहायिका कोर्स की प्रशिक्षणार्थिया निम्न बिन्दुओं को जान सकेगी :

1. किशोर युवक-युवतियों का मार्गदर्शन
2. किशोरावस्था में भटकाव के कारण
3. स्त्री-पुरूष में समानता की जरूरत
4. प्रजनन अवधारणा
5. परिवार के स्वास्थ्य से तात्पर्य
6. स्वास्थ्य सेवाओं की सफलता में परिवार का स्थान
7. परिवार में प्रसूति महिला के स्वास्थ्य की जरूरत
8. यौन रोग एंव एड्स
9. कामकाजी महिला का समाज में स्थान एवं उसकी स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता
10. नियोजित अभिभावकता
11. टीकाकरण

2.2 किशोरावस्था की समस्याएं

8-10 साल के बाद बालक-बालिकाओं के शरीर तथा दिमाग में बहुत से परिवर्तन आते हैं जिससे वे परेशान हो जाते हैं, ऐसा उनके शरीर के हार्मोन्स में आये उतार-चढाव के कारण होता है। इसकी वजह से उनमें कई कुंठाएं आ जाती हैं और उनका सही विकास नहीं हो पाता, इसलिये उन समस्याओं की जानकारी तथा उनका धैर्य से समाधान करना आवश्यक है। किशोरावस्था की आयु सामान्यत: 11-12 वर्ष से 19-20 वर्ष तक मानी जाती हैं। इसे 'टीन एज' (Teen Age) भी कहा जाता है।

2.2.1 किशोरावस्था में शारीरिक परिवर्तन

- वृद्धि स्फूरण: लड़कियों में 10-13 वर्ष व लडकों में 12-17 वर्ष में उनकी लंबाई व वजन तेजी से बढता है, लडकियों में करीब 24 सेमी. तथा लड़कों में 36 सेमी. उंचाई बढती है। लड़कियो में वजन 21 किग्रा. तथा लडकों में 26 किग्रा बढता है।
- असमान वृद्धि: कुछ अंग तेजी से बढ़ते है और कुछ धीरे, जैसे भुजाओं की लम्बाई से पहले हाथ-पांव बढ़ जाते हैं, लड़कियो में नितम्ब कंधो से चोड़े हो जाते है।

– मुखाकृति : लड़कियों का मुंह गोलाकार व लडकों का चौकोर हो जाता है।
– मांसपेशियों तथा वसा मे परिवर्तन: लड़के अधिक मांसल लगते हैं जबकि लडकियों में वसा अधिक जमा होने से लावण्य आता हैं।

2.2.2 जनन तंत्र में परिवर्तन

शारीरिक आकार के साथ यौनिक परिपक्वता भी आती है । ये परिवर्तन निम्न प्रकार के होते हैं-

– प्राथमिक यौन विशिष्टतायें:लडकों मे अडकोष तथा लिंग विकसित हो जाते हैं और लडकियो मे योनि तथा डिम्ब, स्तन तथा गर्भाशय विकसित हो जाते हैं और वे प्रजनन योग्य हो जाते हैं। लड़कियों मे मासिक धर्म शुरू हो जाता है। जिससे कभी-कभी सही खान-पान न मिलने पर लडकियों में खून की कमी हो जाती है। वीर्य स्खलन-लड़कों के लिग से वीर्य निकल जाता है जिससे वे परेशान हो जाते हैं
– गौण यौन विशिष्टतायें: लड़को में चेहरे पर दाड़ी बगल में तथा जननांगों के आसपास बाल आते हैं ।
– लड़कियों में नितम्ब विकसित हो जाते हैं तथा बगलों और जननांगों पर बाल आ जाते हैं।

2.2.3 आवाज में परिवर्तन

लडकों की भारी व लडकियों की आवाज सुरीली हो जाती है ।

2.2.4 मानसिक परिवर्तन

इन परिवर्तनो के अतिरिक्त किशोरो में मानसिक परिवर्तन आ जाते हैं। वे अपनी भावनाओं पर नियंत्रण नहीं कर पाते तथा कभी-कभी अवांछित हरकत कर बैठते हैं। उनमें कामेच्छा जाग उठती है। मानसिक परिवर्तन दो प्रकार के होते हैं-

- **भावनात्मक परिवर्तन :**

– विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण
– व्यक्ति विशेष पर आसक्त होना
– घनिष्ठ भावनात्मक संबंधों की खोज
– लोकप्रिय बनने की चाह : वे विचित्र भाषा बोलते हैं, साथियों के अनुरूप खुद को ढालते हैं
– स्वाभिमान व स्वावलंबन की भाषा शुरू होना
– यौन संतुष्टि की जरूरत : यह भावना उनको अक्सर गलत दिशा में ढकेल देती है ।

बौद्धिक परिवर्तन :

– सुव्यवस्थित विचार
– विश्लेषण क्षमता
– कल्पनाशीलता
– सोचने समझने की शक्ति का विकास,

- रचनात्मकता- यह इस उम्र का लक्षण है और इस गुण का विकास बालकों की जिन्दगी को सुन्दर दिशा दे सकता है। इस कारण वे किसी विषय में विचारकर, मनन कर निर्णय लेना चाहते हैं।

भावनात्मक परिवर्तनों का प्रभाव :

- घनिष्ठ भावनात्मक सबधो की आवश्यकता के कारण उनके मित्र बढ जाते हैं ।
- लोकप्रिय बनने के लिये वे अपने साथियों को खुश रखने की कोशिश करते हैं। उनकी अच्छी बुरी बातें भी अपना लेते हैं। इस तरह गलत दोस्तों के साथ उनकी नशीली वस्तुओ के सेवन, वेश्यागमन आदि की आदत पड सकती है।
- लडके-लडकियो और लडकिया-लडकों को लुभाने के लिये अपने कपडे, चाल-ढाल पर ध्यान देते है।
- अपनी अलग पहचान की चाह उनकी भाषा मे अहम का पुट लाती है।
- उनका स्वाभिमान उन्हें आदेश मानने से रोकता है और वे विद्रोही हो सकते हैं।
- उनको विचारों में सुलझापन आता है। वे किसी तथ्य को बिना समझे स्वीकार नहीं करते, इसलिये उनसे धैर्य से बात करनी आवश्यक है।
- उन पर भरोसा दिखाना आवश्यक है क्योंकि तभी उनके अहम की तुष्टि होगी।
- रचनात्मकता के गुण को प्रोत्साहन देना जरूरी है। इससे वे खुशी अनुभव करेगें और निराश नहीं होंगे।
- उनको विपरीत लिंग के दोस्तों से बात करने से प्रसन्नता का अहसास होता है। उन्हे स्वस्थ भावना के साथ आपस मे बाते करने को प्रोत्साहित करने पर उनके दिमाग मे विकृति नही आयेगी।
- उनको सेक्स के सभी पहलुओं का ज्ञान होने पर वे आपस मे यौनिक संबंध बनाने से दूर रहेंगे। सेक्स शिक्षा देकर हम उनकों कई तरह के यौन रोगों का शिकार होने से बचा सकते हैं, साथ ही मानसिक तनाव भी दूर कर सकते है।

2.2.5 किशोरावस्था में सावधानियाँ

किशोरावस्था को सही ढालने की जिम्मेदारी माता-पिता, अध्यापक एवं समाज की है। इस बढती उम्र मे निम्न सावधानियाँ जरूरी हैं -

- उनके शारीरिक विकास में बाधा न हो : इसके लिये उनको पौष्टिक खुराक, जरूरत पडने पर चिकित्सक से परामर्श जरूरी है।

  उनको काफी व्यायाम और अच्छी नींद के लिये भी पर्याप्त समय मिलना चाहिए । कई तरह की शारीरिक परेशानियाँ इस उम्र में आ सकती हैं:
- मोटापा- यह शहरी समाज की प्रमुख समस्या बनती जा रही है ।
- एनोरोक्सिया नर्वोसा- दुबला होने की चाह में आजकल लडकियाँ भूखे रहना शुरू कर देती हैं फलत: उनको कई तरह की बीमारियाँ हो जाती हैं तथा अस्पताल में भर्ती तक कराना पड़ सकता है।

- मुंहासे तथा शारीरिक गंध- मुहासे, मुंह की तेल ग्रंथियों के बंद होने से होते हैं। बार-बार मुंह धोने तथा स्नान से यह कम हो जाते हैं। नित्य स्नान से शारीरिक गंध परेशान नहीं करती।
- मासिक धर्म की परेशानियाँ-जैसे पेटदर्द, बार-बार जल्दी या देरी से मासिक आना अधिक रक्तस्त्राव इत्यादि।
- जननागों संबंधी परेशानिया- सफेद पानी, कभी कभी उनमें खुजली एंव दुर्गंधयुक्त पदार्थ का आना।
- यौन रोग- यौन संबंधों के प्रति जिज्ञासा में कभी कभी किशोर असुरक्षित यौन सबंध बना लेते है या वेश्या आदि के पास जाते हैं और कई तरह की बीमारी जिसमें एड्स भी शामिल हैं के शिकार हो जाते हैं।

2.2.6 मानसिक विकास

किशोरावस्था में जरूरी है कि मानसिक विकास पूर्ण एंव सही दिशा में हो । किशोर कच्ची मिट्टी की तरह है जो सही हाथों में पड़कर खूबसूरत रूप लेते हैं। इस समय उनको भावनात्मक संबल की सख्त जरूरत होती है। निम्न बिन्दुओं पर ध्यान आवश्यक है, जिससे उनमें भटकाव न हो:-

- किशोरावस्था के युवक-युवतियों की जिज्ञासाओं को समय समय पर शान्त किया जाना आवश्यक है ।
- उनकी गोपनीयता एंव मित्रता पर ध्यान रखना चाहिए ।
- यौन व्यवहार के प्रति स्पष्टीकरण होना चाहिये और मासिक धर्म, स्त्री रोग समस्याऐं प्रजनन अंगों की कार्यप्रणाली यौन रोग, एड्स, समाज में उनकी जिम्मेदारी आदि पर चर्चा होनी चाहिये ।
- उनके साथ वयस्कों जैसा व्यवहार होना चाहिये और उन्हें गैर जिम्मेदार नहीं समझना चाहिये ।
- उनकी रूचि को समझना चाहिये तथा उनके भविष्य की रूपरेखा उसी आधार पर तय होनी चाहिये।
- आवश्यकता पडने पर मनोचिकित्सक से सलाह लेनी चाहिये।
- उनके मित्रों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए ।
- उन्हें अधिक से अधिक रचनात्मकता की ओर प्रोत्साहित करने से, तथा उनके कार्यो की प्रशंसा से उनमें सतोष आता है और वे आपकी बातों को भी सुन सकते हैं । अन्यथा किशोर अक्सर विद्रोही हो जाते हैं ।

2.2.7 कैशौर्य गर्भ

किशोरावस्था में गर्भ ठहरने की समस्या बहुत बड़ी है । इसके मुख्य कारण हैं-

- बाल विवाह-सामाजिक कुरीति, लड़कियों के लिये असुरक्षा की भावना, बाल विवाह को बढ़ावा देती है ।

- असुरक्षित यौन संबंध-यौनेच्छा, जिज्ञासा, बलात्कार, असुरक्षित यौन संबंध के जरिये यौन संबंध तथा किशोर गर्भ को बढ़ाते हैं ।

किशोरावस्था में शरीर एवं प्रजनन अंग विकसित नहीं होते इसलिये कई तरह की मुश्किलें आती है जैसे प्रसव में कठिनाईयां, खून की कमी, उच्च रक्तचाप, दौरे, आपरेशन की संभावना, मृत्यु कम वजन के शिशु एवं उनकी मृत्यु की संभावना और प्रसव उपरान्त शिशु का सही पालन न कर पाना । अविवाहित मां को हमारे समाज में स्वीकारा नही जाता और उसका भविष्य अंधकारमय हो जाता है । किशोरावस्था में युवती का शरीर भी विकसित हो रहा होता है, असमय गर्भ से उसका स्वयं का विकास रूक जाता हैं ।

इसलिये आवश्यक है कि किशोर-किशोरियों को इस तरह की मुश्किल में पडने से पहले सावधान करा जाये । किशोर किशोरियो को सही जानकारी देना एवं समाज के सोच को बदलने से ही बाल विवाह जैसी कुरीतियां भी दूर होंगी एव किशोर लडकियां मां बनने की परेशानी से बचेंगी ।

किशोर मां के प्रति स्वास्थ्य कार्यकर्ता की जिम्मेदारी :

- उसके खानपान पर विशेष ध्यान देने की जरूरत ।
- उसको अनुभवी चिकित्सक को बराबर दिखाना चाहिए ।
- डिलिवरी हर स्थिति मे अस्पताल में होनी चाहिये ।
- किसी भी खतरे की सभावना होने पर उसे फौरन अस्पताल दिखाना चाहिए ।
- उसके घर के लोगों को उसके तथा उसके बच्चे की विशेष देखभाल की आवश्यकता बतायें ।
- अगर अनचाहा गर्भ है तो उसको गिराने के लिये दाई या अकुशल हाथो में न जाने दे । उनका सही मार्ग दर्शन करें क्योंकि आज भी हजारों लडकियां छिपाने के डर से ऐसी असुरक्षित जगहों पर जा कर जीवन गवां रही हैं ।
- सरकार की तरफ से एम टी.पी (चिकित्सीय गर्भ समापन) पूर्णत: गोपनीय रखने का नियम है, इसकी जानकारी उसके परिवारजनों को दें जिससे वे अस्पताल जाने से नहीं घबराये ।

2.2.8 जीवन कौशल शिक्षा

आज किशोरों को जागरूक बनाने की आवश्यकता महसूस की जा रही है । राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद /नाको (NACO) ने एच.आइ.वी. / एड्स से बचाव की शिक्षा देने के लिये माड्यूल बनाए हैं ।

इनमें निम्न विषय लिये गये हैं-

- किशोरों की सेक्स के विषय में समझ
- यौन संचरित विषयो पर चर्चा
- बचाव के तरीके अपनाने को तैयार करना
  - विभिन्न नाटकों द्वारा
  - आपसी विचार विनिमय द्वारा
- एच.आई.वी. एड्स के रोगी को टूटने से बचाना

किशोरो में सेक्स सम्बंधी तथा अन्य कुंठाओं को दूर करने से निम्न लाभ होगें-

- उनके भटकाव में कमी

- आपकी बातों को समझने का धैर्य
- रचनात्मकता
- मन में उत्साह
- यौन संकमित रोगों में कमी
- कैशौर्य गर्भ में कमी
- देश का विकास

आज यौन शिक्षा स्कूली पाठ्यक्रम का हिस्सा बन गये हैं और इसके अच्छे परिणाम सामने आने शुरू हो गये हैं ।

2.3 लिंग (जेंडर) समानता

स्त्री-पुरूष मे भेदभाव किसी भी समाज के विकास में बाधक है । हमारे देश में लडके के प्रति रूझान अधिक रहता है । लडकों को वंश चलाने वाला समझा जाता है । आज के समय में यह स्थिति हास्यास्पद है क्योंकि पढी-लिखी महिला हर तरह से पुरूष के बराबर है, वह जीवन के हर क्षेत्र में बराबरी करती है या अक्सर उनसे आगे है । वह आत्म निर्भर है और अपने मां बाप या परिवार का बोझ भी उठा सकती है । ऐसे समय में कन्या भ्रूण हत्या न केवल जुर्म है वरन् एक पाप भी है ।

लडके की चाह मे लडकी पैदा करना अपने घर की स्थिति कमजोर करता है और बच्चों का भविष्य खराब करता है । अगर यह क्रम चलता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब पुरूष को विवाह के लिये साथी मिलना कठिन हो जायेगा । कई तरह की सामाजिक परेशानियां आ जायेंगी ।

अब तो सरकार ने लडकी को जायदाद में बराबर का हक भी दिया है । स्त्री-पुरूष समाज तथा परिवार रूपी बैलगाडी के दो पहिये हैं । यह एक सत्य है कि सभी विकसित देशों में स्त्री और पुरूष को समान समझा जाता है । यह भी सत्य है कि अविकसित दशों मे स्त्री की दशा आज भी अति शोचनीय है । इससे स्पष्ट है कि समाज या परिवार का विकास तभी संभव है जब स्त्री की भागीदारी बराबर हो ।

स्त्री की समाज मे समानता होने से निम्न परिवर्तन आयेगें:-

- स्त्री शिक्षा को बढावा
- जनसंख्या में कमी
- भ्रूण हत्या में कमी
- दहेज प्रथा बाल विवाह आदि कुरीतिया दूर होगी
- स्त्री जनसंख्या शिक्षित होने से अर्थव्यवस्था में सुधार
- एड्स तथा यौन जनित रोगों मे कमी
- शिक्षित महिलाओं से बच्चों के विकार? को सही दिशा
- महिला स्वास्थ्य में सुधार
- महिला मृत्युदर में कमी
- शिशु मृत्यु दर में कमी

इस तरह लिंग समानता से हमारे देश में क्रांतिकारी परिवर्तन आ सकते हैं । आज सरकार की तरफ से इस दिशा में कदम उठाये जा रहे हैं परन्तु जब तक लोगों की सोच नहीं बदलेगी, स्त्री की दशा में सुधार इतनी तेजी से नहीं हो पायेगा ।

इसलिए प्रसूति विज्ञान सहायिका, नर्सिंग कर्मी एवं अन्य स्वास्थ्य कर्मियों को इस दिशा में निरन्तर कार्यरत रहना चाहिए कि वे लोगो में लड़की व लड़के में भेदभाव करने से रोकें ।

2.4 प्रजनन स्वास्थ्य की अवधारणा

समाज स्त्री और पुरूष दोनों इकाइयों से निर्मित है । स्त्री एवं पुरूष के स्वस्थ रहने से स्वस्थ संतान की सभावनाऐं होती हैं । प्रजनन स्वास्थ्य मनुष्य के स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण पहलू है । आज एड्स जैसी बीमारी प्रवेश कर चुकी है, हमें इस ओर और अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है । विश्व स्वास्थ्य संगठन इस ओर विशेष कार्यरत है । विकसित देशों की मातृ एंव शिशु मृत्यु दर नगण्य हो गई है परन्तु विकासशील देशों में जिसमें भारत भी शामिल है, अभी स्थिति शोचनीय है । जनसंख्या का बढता बोझ आर्थिक स्थिति को कमजोर कर रहा है । परिवार कल्याण सस्थाओं के माध्यम से अब प्रजनन स्वास्थ्य के सभी पहलुओ की ओर ध्यान दिया जा रहा है । आशा है कि 2010 तक जन्म दर 21 प्रति हजार, मृत्युदर 30 प्रति हजार, प्रजनन दर घट कर 2.1 प्रति महिला हो जायेगी । विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार प्रजनन स्वास्थ्य एक ऐसी अवस्था है जिसमें पूर्णतया मानसिक व सामाजिक तौर पर प्रजनन स्वस्थ होना, न कि सिर्फ बीमारियों का न होना बल्कि इसमें प्रजनन तंत्र एवं उसके कार्य एवं विधियाँ शामिल हैं ।

प्रजनन स्वास्थ्य एक ऐसी स्थिति की कल्पना है :

- जिसमे व्यक्ति प्रजजन क्षमता को नियंत्रित कर सके ।
- महिला का गर्भकाल सुरक्षित हो और सुरक्षित संतान उत्पन्न हो अर्थात मातृत्व सुरक्षित हो।
- दम्पति प्रजजन संबंधित रोगों से मुक्त हों और तनाव रहित सहवास का आनन्द ले सकें।
- महिला एवं पुरूष को इतनी जानकारी देना चाहिये जिससे वे प्रजजन संबधी सभी स्थितियों को नियंत्रित कर सकने मे सक्षम हों ।

2.5 परिवार स्वास्थ्य एवं प्रसूति स्वास्थ्य

परिवार, स्वास्थ्य का महत्त्वपूर्ण घटक है। परिवार स्वास्थ्य के स्तर में वृद्धि कर प्रसूति स्वास्थ्य की गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है।

स्वास्थ्य की विभिन्न गतिविधियों द्वारा परिवार के स्वास्थ्य को अच्छे स्तर पर पहुँचाना स्वास्थ्य सेवाओं का विशेष लक्ष्य है क्योंकि इससे व्यक्तिगत तथा सामुदायिक स्वास्थ्य को सुधार कर राष्ट्र के स्वास्थ्य स्तर को उठा सकते हैं :-

- निर्धन परिवारों में स्वास्थ्य स्तर अक्सर निम्न होता है । क्योंकि उनके खान-पान रहन-सहन का स्तर अच्छा नहीं होता । छोटे परिवार, पोषक आहार आय के अतिरिक्त साधन, स्वास्थ्य सेवाओ को सरकारी सहायता आदि देकर स्वास्थ्य स्तर को उठा सकते हैं ।
- परिवार के स्वास्थ्य का परिवार के आकार, कार्य एव वातावरण से सीधा नाता है।

– समाजीकरण : किसी बालक को समाज का हिस्सा बनने के लिये जरूरी प्रशिक्षण सबसे पहले परिवार से मिलता है । विद्यालय और अन्य संस्थाओं का भी योगदान होता है परन्तु केन्द्रीय भूमिका परिवार की है ।
– व्यक्तिगत स्वास्थ्य: बचपन से खान-पान की, रहन-सहन की, सोचविचार की सभी आदतों पर परिवार की छाप देखी जा सकती है। इसलिये शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये परिवार को बाल्यकाल से प्रयत्न करने चाहियें ।
– मानसिक सुरक्षा: परिवार की सबसे बडी जरूरत है व्यक्ति को भावनात्मक सहारा देने में। परिवार में सभी लोग एक दूसरे की सहायता करते हैं और इससे बच्चों का लालन पालन, वृद्वों की देखभाल, अशक्त व्यक्तियों का भरण पोषण, सब स्वाभाविक रूप से होता है । बेरोजगार युवक भी निराशा से बचा रहता है और इस तरह सबके स्वास्थ्य की रक्षा होती है और सबमें सुरक्षा की भावना रहती है।
– आनुवांशिकी प्रभाव: कई रोग पीढ़ी दर पीढ़ी चलते हैं जैसे मधुमेह, हीमोफिलिया आदि। सामाजिक एवं शारीरिक संरचना पर भी गुणसूत्रों का प्रभाव होता है । परिवार की पूरी जानकारी से इन रोगों से बचने में सहायता की जा सकती है।
– विघटित परिवार: सभी सदस्यों के स्वास्थ्य पर इसका बुरा प्रभाव पडता है । खास कर बच्चों के मानसिक रोगों के लिये विघटित परिवार काफी, जिम्मेदार होते हैं । पारिवारिक कलह, तलाक आदि से असुरक्षा की भावना बच्चों के विकास में बाघक होती है ।
– अस्वस्थ होने पर परिवार की भूमिका अहम है । सारा परिवार किसी न किसी स्तर पर सहायक होता है । जैसे पुरूष आर्थिक स्तर पर, महिला देखरेख कर, वृद्व भावनात्मक स्तर पर तथा बच्चों को संभालकर मदद करते हैं । रिश्तेदार भी अपनी तरफ से सहयोग करने का प्रयत्न करते हैं । फलस्वरूप व्यक्ति स्वय को अकेला व असहाय नहीं महसूस करता है और इस तरह परिवार का स्वास्थ्य से गहरा जुडाव है।

– शिक्षित परिवार रोग और अन्धविश्वासों से बचे रहते हैं क्योंकि वे स्वास्थ्य संबंधी नये विचारों को सुनते हैं, पढते हैं और अपनाते हैं और स्वस्थ रहते हैं ।
– संस्कृति हमारे रीति-रिवाज, हमारी पुरानी मान्यतायें भी स्वास्थ्य पर असर डालती हैं । उनमें भी समय के साथ परिवर्तन की आवश्यकता होती है ।
– किसी भी जगह पर स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता परिवार के स्वास्थ्य को प्रभावित करती है।
– आबादी : अधिक जनसंख्या स्वास्थ्य सेवाओं को सफल नहीं होने देती । इसलिये परिवार छोटे होने चाहियें ।

प्रसूति बिज्ञान सहायिका एवं स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की कार्य प्रणाली :

- परिवार से मित्रवत व्यवहार रखें।
- परिवार के बारे, में उनके रीति रिवाजों के बारे मे अधिक से अधिक जानकारी रखें।
- परिवार की स्वास्थ्य समस्याओं को समझें और उनके समाधान के उपलब्ध तरीकों से उन्हें अवगत कराए ।

- परिवार कल्याण हेतु उन्हें प्रोत्साहित करे जिससे सीमित परिवार के कारण उनकी आर्थिक स्थिति भी सुधरे ।
- उनसे मिलने पर परिवार कल्याण के संदेश अवश्य दें ।
  उनको परिवार कल्याण कार्यक्रमों में भागीदारी करवाएं ।

2.6 प्रजनन मार्ग संक्रमण

ये यौन सबधो से होने वाले संक्रमण हैं तथा यौन संपर्क से फ़ैलते हैं । यें बैक्टीरिया या वाइरस या अन्य जीवाणुओं से होते हैं। कुछ के नाम इस प्रकार है: शेकरोइड, सिफिलिस, हरपीज आदि। एच आई वी /एड्स भी प्रमुखत: यौन संपर्क से फैलता है । यह बहुत बडी चिन्ता का विषय है । यदि किसी व्यक्ति को यौन संचारित रोग है तो एच आई वी / एड्स का खतरा दस गुना बढ जाता है क्योंकि वायरस त्वचा के छिद्र या कटे भाग से शरीर में आसानी से प्रवेश कर जाता हैं । क्योंकि यौन रोगी का यौन व्यवहार जोखिम भरा होता है, इस कारण वह कई लोगों से यौन संबध बनाता है और अनजाने में एड्स रोगी के संपर्क में आ जाता है ।

2.6.1 यौन रोग

(अ) स्त्रियों में लक्षण

- अगर स्त्री की योनि से असामान्य दुर्गअन्धयूक्त द्रव निकले ।
- अगर उदर के निचले भाग में दर्द हो।
- अगर योनि में खुजली या जलन हो।
- जननांग के पास छाले, नासूर जिनमे दर्द हो या बिना दर्द के हों।
- अगर पेशाब करते समय जलन हो या दर्द हो ।
- जननांगों में सूजन हो तथा संभोग में कठिनाई हो या पीडा हो ।
- जांघ के जोडों में गिलिठयॉ हों ।

(ब) पुरूषों में लक्षण

- लिंग पर छाला या घाव
- लिंग से हरे या पीले रंग का मवाद आना
- जांघ के जोडों में गिल्टियॉ
- पेशाब में जलन तथा दर्द
- संमभोग में तकलीफ

(स) स्त्रियों में यौन रोग ज्यादा होने के कारण

- योनि का बाहर से सीधा संपर्क
- योनि में लिंग का प्रवेश
- प्रसव के दौरान योनि पर चोट तथा संकमण
- योनि में रक्त तथा अन्य पदार्थो का रहना
- योनि में सामान्यत: भी कई जीवाणुओ की उपस्थिति पाया जाना
- स्त्रियों में कुपोषण की समस्या- शरीर में कमजोरी से रोगाणु आसानी से अपना स्थान बना लेते हैं । योनि का गीलापन उनको उचित माध्यम प्रदान करता है।

(द)यौन रोग फैलने का माध्यम

- सकमित व्यक्ति से असुरक्षित संभोग
- योनि, गुदा व मुँह सभी से यौन रोग फैल सकता है

(य) जननांगों के स्त्राव की जानकारी

1. सामान्य स्त्राव

- पुरूष में सफेद रंग का स्त्राव निकलता है इसमे शुक्राणु, जल, प्राक्टोस तथा इलेक्टोलाइट होते हैं।
- स्त्री में श्लेश्मा युका पारदर्शी द्रव होता है, अण्डा विसर्जन के समय यह पतला हो जाता है। उत्तेजना मे यह बढ़ जाता है। इनमे सामान्य गंध होती है।

2. असामान्य स्त्राव की निम्न पहचान है :

- दुर्गन्ध
- रग में गंदलापन, हरा या पीलापन।
- खुजली या जलन
- सामान्य से अधिक मात्रा

(र) यौन रोग के उपचार संबंधी कुछ तथ्य

- अधिकतर यौन रोग आसानी से ठीक हो जाते हैं।
- आजकल लाक्षणिक (सिन्ड्रोमिक) उपचार देते हैं अर्थात कुछ निश्चित दवाइयाँ यौन रोगी को लक्षणों के आधार पर दे दीं जाती हैं ।
- क्योंकि यौन रोग स्त्री व पुरूष सभी को हो सकते हैं इसलिए दोनों पार्टनरों का एक साथ इलाज होना चाहिए।
- यौन रोग एक सामान्य से दिखने वाले व्यक्ति को भो हो सकता है।
- यौन रोग से कोई भी पूर्ण रूप से सुरक्षित नहीं है।
- जरूरी नहीं पति-पत्नी दोनों में लक्षण हो, किसी एक में यह छिपे भी हो सकते हैं।
- बिना लक्षण के यौन रोगी भी संक्रमण कर सकता है।
- सभी यौन रोगों की रोकथाम संभव है ।
- सभी यौन रोगों का इलाज संभव है (सिवाय एड्स के)।
- जल्दी इलाज से गंभीर समस्या नही होती ।

(ल) यौन रोगों से संबंधित भ्रांतियां

- कुंवारी लडकी या बालिका से सहवास, यौन रोग को दूर करता है।
- यौन रोग ऊपरी हवाओं से होता है ।
- यौन रोग स्त्री के चरित्रहीन होने के प्रमाण हैं ।
- यौन रोग के विषय में किसी को नहीं बताना चाहिए ।

असल में यौन रोग जीवाणु से होते हैं तथा अक्सर स्वयं की गलती से, असुरक्षित यौन संबंध बनाने से होते हैं । यौन परेशानी जल्दी से जल्दी चिकित्सक को बताकर इलाज लेना चाहिए । अधिकतर यौन रोग स्त्री को पति से मिलते हैं ।

(व) यौन रोगों की रोकथाम

- जीवन साथी से ही सभोग करें।
- अंजान साथी से संभोग में कण्डोम अति आवश्यक है ।
- सहवास करने वाले साथी में यौन रोग होने पर दोनों चिकित्सक से सम्पर्क करें । स्त्रियों में वैजाइनल या फीमेल कन्डोम का इस्तेमाल अच्छा उपाय है।
- शुक्राणुनाशक पदार्थ भी कुछ बचाव करते हैं ।

(क) यौन रोगों से होने वाली समस्यायें

- बांझपन
- सर्विक्स का कैंसर
- गर्भावस्था मे बुरे परिणाम जैसे :
- – गर्भपात
- – मरा हुआ बच्चा
- – बच्चे में जन्मजात दोष
- – बच्चे की आख में संक्रमण
- – एड्स की अधिक संभावना

(ख) स्वास्थ्यकर्ता अथवा प्रसूति विज्ञान सहायिका से अपेक्षा

- यौन रोगों की जानकारी देना
- कोंडोम की उपयोगिता समझाना
- कॉपर-टी लगाने से पूर्व जांच करना
- संक्रमित रोगियों का हर संभव इलाज कराना

(ग) कुछ यौन रोगों की संक्षिप्त जानकारी

सिफिलिस (Syphilis)

जीवाणु-ट्रिपेनोमा पेलिडम

लक्षण - प्राइमरी सिफिलिस : 10-90 दिन बाद होती है। एक गोल, उभरे किनारो वाला बिना दर्द वाला छूने में कठोर छाला होता है। 3-4 हफ्ते में स्वयं ठीक हो जाता है।

लक्षण - सैकेण्डरी सिफिलिस : सारे शरीर में बिना खुजली वाले छोटे-छोटे लाल रंग के चकत्ते हो जाते हैं। पेरीनियम में मस्सों की तरह दिखने वाले कोन्द्वायलोमा होते हैं ।

लक्षण - टरशियरी सिफिलिस: इसमें दिल, दिमाग व जोडो में बीमारी प्रवेश कर जाती है । गर्भवती स्त्री मे सिफिलिस के प्रभाव गर्भपात, गर्भस्थ शिशु की मृत्यु

निदान - वी डी आर एल तथा टी पी एच ए टेस्ट

इलाज - पेनिसिलिन । जिनको पेनिसिलिन से एलर्जी है - उन्हें इरिथोमाईसिन दी जा सकती है।

- **शैकरोइड (Chancroids)**

  जीवाणु - हीमोफिलस डुकी

  लक्षण - दर्द वाले नासूर जिनमें बहुत दुर्गन्ध युक्त स्त्राव निकलता है, जांघ के जोड़ में केवल एक ओर गिल्टियाँ होती हैं (ब्यूबो),जो फूट सकती हैं।

निदान - स्मीयर, इटो टेस्ट

इलाज- सल्फोनामाइड सेफद्राइएक्सोन इत्यादि ।

- **गोनोरिया (Gonorrhoea)**

जीवाणु -निजेरिया गोनोरी

इन्कयूबेशन पीरियड- 2-10 दिन

जीवाणु निम्न जगह की एपीथीलियम में फैलता है-

बार्थोलिन ग्लेन्द, यूरीथरा और यूरीथरल ग्लेंड, सर्विक्स, फैलोपियन ट्यूब, मलद्वार

लक्षण-पुरूषों में पेशाब के साथ पीप व जलन महिलाओं के वल्वा में, बार्थोलिन ग्रंथि में सूजन तथा दर्द, योनिमार्ग से असमान्यत स्त्राव आदि।

सर्विक्स मे संक्रमण से पीठ दर्द, पेट दर्द तथा स्त्राव

गर्भाशय तथा नलिकाओं मे संक्रमण से पेट दर्द, स्त्राव तथा मासिक धर्म की परेशानी।

निदान - स्लाइड स्मीयर, कल्चर

इलाज - सेफद्राइएक्सोन, सिप्रोफिलोक्सासीन आदि

- **जिनाइटल हरपीज (Genotal herpes)**

जीवाणु - हरपीज वायरस

लक्षण - छोटे पानी युक्त छाले- जननांगो में, यह जल्दी ही फूटकर अल्सर बन जाते हैं कुछ दिनों में अल्सर अपने आप ठीक हो जाता है । यह बीमारी अपने आप बार बार हो जाती है

निदान- स्मीयर

इलाज-दर्द निवारक, एन्टी वायरल -एसाइक्लोविर आदि

- **केन्डिडियासिस (Candidiasis)**

जीवाणु - केन्दिडा एल्बिकान्स (फफूंद)

गर्भावस्था, मधुमेह, गर्भ निरोधक दवाओं तथा एन्टीबायोटिक के इस्तेमाल में ज्यादा मिलती है ।

लक्षण - जननांगों पर तेज खुजली, अधिक योनिस्त्राव जो दही की तरह लगता है ।

निदान - फंगस स्मीयर, कल्चर

इलाज - फलूकोनेजोल निस्टेटिन इत्यादि

- **ट्राइकोमोनियासिस**

बहुत अधिक पाई जाने वाली बीमारी है ।

जीवाणु- ट्राइकोमोनास वेजाइनेलिस (प्रोटोजोवा)

लक्षण- हरा पीला योनि स्त्राव, खुजली तथा पेशाब करने में दर्द ।

योनि में लालिमा, सूजन एंव लाल बिन्दू, आदमियों में मूत्रमार्ग में तकलीफ आदि ।

निदान- ताजी स्लाइड बनाकर प्रोटोजोवा देखते हैं, कल्चर

इलाज - मेट्रोनिडेजोल

- **नोनस्येसिफिक वेजाइनाइटिस (Non-SpecificVaginitis)**

  जीवाणु- हीमोफेलिस वेजाइनऐलिस

  लक्षण- हल्का सलेठी स्त्राव, अवांछित गंध

  निदान- स्मीयर में क्लू कोशिका

  इलाज -एम्पीसिलीन, टेट्रासाईक्लिन, सल्फोनामाइड इत्यादि ।

- **क्लेमाइडिया संक्रमण (Clamidia Infection)**

  जीवाणु- क्लेमाइडिया ट्रेकोमेटिस

  लक्षण- विशेष नहीं होते, बार बार होने वाला पेशाब का संक्रमण तथा सफेद पानी का आना, जननांगो में सूजन हो सकती है तथा ट्यूब बन्द हो सकती है ।

  निदान- कल्वर

  इलाज- डोक्सीसाइक्लीन, टेट्रासाइक्लिन एवं सल्पगेनामाइड इत्यादि ।

- **ग्रेन्यूलुमा इनग्वाइनेल (Granuloma Inguinale)**

  जीवाणु- डोनोवानिया ग्रेन्यूलोमेटिस

  लक्षण-छाला जो फूटकर गहरा घाव बनाता है, घाव के किनारे बहुत स्पष्ट होते है जांघ के जोड़ो में गिल्टियाँ हो सकती है जो फूट सकती हैं (सूडो ब्यूबो)।

  निदान- स्मीयर में डोनोवोन बोडिज देखना

  इलाज- टेट्रासाइक्लिन, इरेथोमाइसिन इत्यादि

- **लिस्फोग्रेन्यूलोमा विनेरियम (Lympho Gnanuloma Venereum)**

  जीवाणु- क्लेमाइडिया

  लक्षण- जांघ के जोड़ों में गिल्टियाँ जो कडी लालिमा युक्त होती हैं, ये फूटने के बाद बहुत फाईब्रोसिस करती हैं ।

  निदान- फ्राई टेस्ट, काम्प्लीमेंट फिक्सेशन टेस्ट

  इलाज- टेट्रासाइक्लिन आदि

अधिकतर यौन रोग उपचार से ठीक हो जाते हैं। प्रसूति विज्ञान सहायिका को मरीज को तुरन्त डाक्टर से संपर्क करवाना चाहिये। इससे इस व्यक्ति को तो लाभ होगा, साथ ही वह समाज में अपने रोग को नहीं फैलायेगा।

रोगी के जीवन साथी की जांच भी आवश्यक है जिससे दोनो की जांच तथा उपचार हो सके । रोगी अक्सर नीम हकीमों के विज्ञापनों को पढ कर उनके पास जाते हैं । ऐसा करने से उनको रोकना चाहिये । इससे रोग कभी-कभी बहुत बढ़ जाता है । संयम, विवाह होने तक यौन संबध से परहेज तथा एक ही साथी से सबंध अच्छे यौन स्वास्थ्य की चाबी है ।

2.8.2 एच आई वी / एड्स

एच आई वी = हयूमन इम्यूनोडेफिसिएसी वायरस

एड्स = ए आई डी एस: इसका अर्थ निम्न है

ए - एक्वायर्ड : प्राप्त की हुई

आई - इम्यूनो : प्रतिरोधक क्षमता

डी - डेफिसिएसी : कमी

एस - सिंड्रोम :लक्षणों का समूह

एच आई वी पोजिटिव वे व्यक्ति हैं जिनमें यह वाइरस प्रवेश कर गया है । प्रवेश करने के बाद यह वाइरस उस व्यक्ति के शरीर में अपनी संख्या बढाता है और साथ ही उस व्यक्ति के शरीर से रोगो से लडने वाली रक्त कोशिकाओं को नष्ट करता जाता है। जब वे कोशिकाएं बहुत कम हो जाती हैं तो व्यक्ति की प्रतिरोधक क्षमता बिल्कुल खत्म हो जाती है व शरीर कई तरह की बीमारियो से ग्रसित हो जाता है। दस्त, निमोनिया, मेनिनजाइटिस, टीबी आदि बीमारिया उसे खोखला कर देती हैं और अन्त मे इनमें से किसी के कारण वह मर जाता है। ऐसी प्रतिरोधक क्षमता मे कमी वाइरस के कारण होती है और यही स्थिति अर्थात एक्वायर्ड (प्राप्त की) इम्यूनो डेफिसिएंसी(प्रतिरोधक क्षमता मे कमी), सिंड्रोम (लक्षणो का समूह) कहलाती है । एड्स आज विश्व की सबसे बडी समस्या है और आज तेजी से विश्व को निगल रही है ।

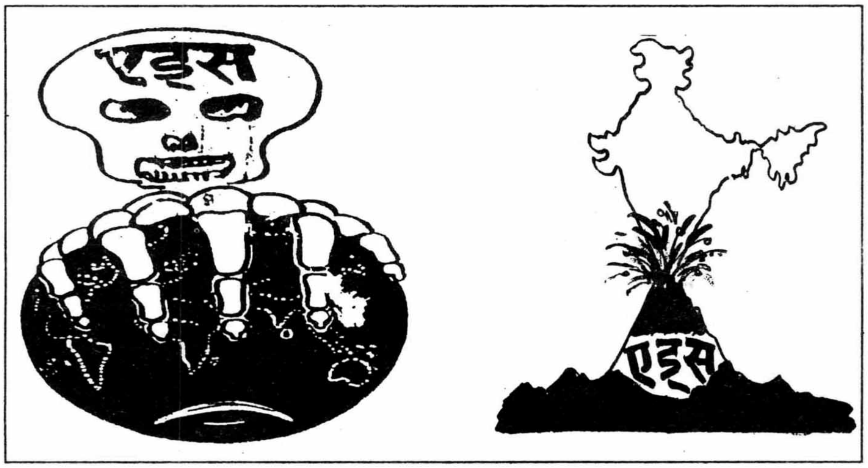

चित्र : भारत सहित विश्वव्यापी एड्स की भयावहता

(अ) एड्स फैलने के निम्न तरीके हैं :

- संभोग-80-90 प्रतिशत लोग संक्रमित व्यक्ति के साथ यौन संबंध बनाने से बीमारी प्राप्त करते हैं । यह निम्न प्रकार से सभव है:-

– विषम लिगी 'सभोग-स्त्री पुरूष के मध्य संभोग में स्त्री को संक्रमण का खतरा अधिक होता है।

– समलिंगी संभोग-ऐसे लोगों में एड्स काफी तेजी से फैलता है । संक्रमित व्यक्ति से सभोग योनिमार्ग से किया हो या गुदा से या मुख मैथुन, एड्स हो सकता है।

  आर्थिक निर्भरता, अशिक्षा, अज्ञानता के कारण महिला में पुरूष से संक्रमण का खतरा अधिक है। योन रोगो से पीड़ित व्यक्ति को एड्स का खतरा अधिक है।

- रक्त चढ़ाने से-यदि संक्रमित व्यक्ति का रक्त स्वस्थ व्यक्ति को चढ जाये तो उसे भी यह बीमारो हो जायेगी। यहां एड्स होने की संभावना 100 प्रतिशत होती है।
- संक्रमित सिरिंज तथा सुई- एच आई वी पाजिटिव व्यक्ति के लिए प्रयोग की सुई से यदि स्वस्थ व्यक्ति को सुई लगाई जाये तो उसे रोग हो सकता है क्योकि उस सुई में रक्त की अति सूक्ष्म बूंदे रह सकती हैं। नशे के आदी कई लोग एक ही सुई से सीधे खून में इजेक्शन लगाते हैं, जिससे उनमें रोग फैल सकता है।
- संक्रमित मां से शिशु को संक्रमण-30 प्रतिशत से 50 प्रतिशत शिशु में विषाणु पहुँचने की संभावना होती है । मां के दूध द्वारा भी बच्चा संक्रमित हो सकता है ।

(ब) एड्स निम्न स्थिति में नहीं फैलता

- व्यक्तियों के साथ दैनिक संपर्क से।
- सार्वजनिक शौचालय के प्रयोग से ।
- चुम्बन से, जब तक दोनों के मुंह मे कटाव न हो ।
- मच्छर से, संक्रमित व्यक्ति को काटने वाले मच्छर के काटने पर ।
- तौलिया इस्तेमाल करने से।
- एच आई वी पाजिटिव की सेवा करने से ।
- साथ थाली में खाने से ।

चित्र : एड्स ऐसे नहीं फैलता

(स) एच.आई. वी. जीवाणु की कार्यशैली

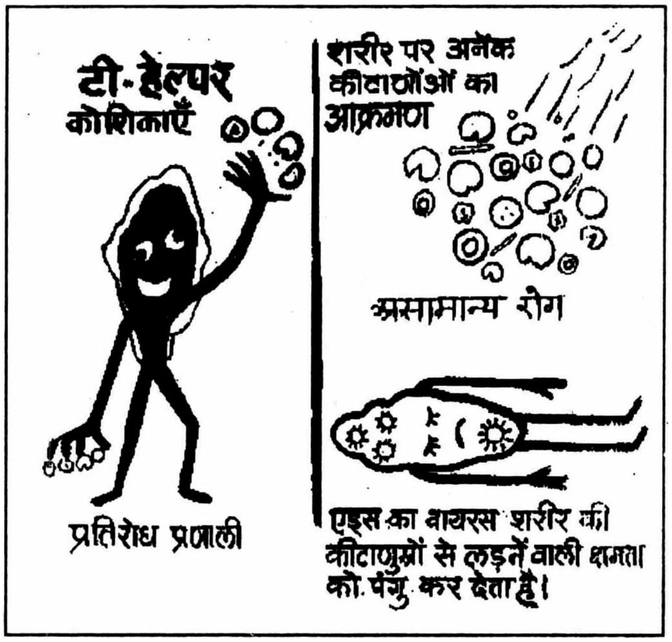

चित्र : एच. आई. वी. का काक्रमण

- स्वस्थ शरीर में प्रवेश कर इन जीवाणुओं की संख्या बढती जाती है
- ये जीवाणु रक्त में सफेद कोशिकाओं को नष्ट कर देते हैं ।
- सफेद कोशिकाएं शरीर में आने वाले कीटाणुओं को मारने की सेना का कार्य करती हैं
- सफेद कोशिकाए कम होने से शरीर बाहरी रोगाणुओं से लडने में अक्षम हो जाता है ।
- बाहरी रोगाणु अक्षम शरीर में गँभीर रोग उत्पन्न करते हैं ।
- रोगों से ग्रसित व्यक्ति अंत में मर जाता है ।

(द) एच आई वी के लक्षण

- संक्रमण होने के कुछ समय बाद हल्का बुखार, जुकाम आदि हो सकता है जो कुछ समय में स्वत: ठीक हो जाता है ।
- करीब तीन महीने में व्यक्ति के रक्त की जांच से उसे एच आई वी पाजिटिव कह सकते हैं । इस समय और इसके बाद करीब 5- 10 साल व्यक्ति पूर्णत: स्वस्थ रहता है । मगर बाहर से स्वस्थ व्यक्ति के अन्दर एच आई वी वाइरस तेजी से बढ रहे होते हैं तथा शरीर की प्रतिरोधी कोशिकाओ को नष्ट करते रहते हैं ।

- 5-10 साल बाद रोगी लगातार बीमार रहने लगता है ।
- अगर किसी रोगी मे लगातार निम्न लक्षण मिले तो हमें रोगी को एड्स होने की शंका करनी चाहिए और चिकित्सक को (रोगी को नहीं) इस बारे में बताना चाहिए
    - ♦ एक महीने से ज्यादा लगातार दस्त
    - ♦ शरीर के वजन में बहुत अधिक कमी
    - ♦ एक महीने से अधिक बुखार
    - ♦ बहुत अधिक थकान
    - ♦ जाघो व बगलों में गिल्टियां

(य) एच.आई. वी. जाँच

एलिसा टेस्ट द्वारा एच आई वी टेस्ट किया जाता है परन्तु पाजिटिव केस को तीन बार जॉच के बाद ही एच आई वी पाजिटिव कह सकते हैं किसी रोगी को बताने से पहले वेस्टर्न ब्लाट या पी सी आर नामक टेस्ट होना आवश्यक है । रोगी को बताने से पहले सावधानी इसलिये आवश्यक है क्योंकि कई बार यह पता लगते ही कि उन्हे एड्स है मरीज निराशा में आत्महत्या तक कर लेते हैं ।

एड्स टेस्ट आजकल बडे सरकारी चिकित्सालयों में लगभग नगण्य कीमत या मुफ्त मे किया जाता है तथा सूचना गुप्त रखी जाती है ।

(र) विंडो पीरियड

संक्रमण होने के बाद तीन महीने तक रक्त की जाँच मे एच आई वी का पता नहीं लगता । यह समय विंडो पीरियड कहलाता है । ऐसा मरीज अपनी बीमारी फैला सकता है ।

(ल) एड्स रोगी के प्रति प्रसूति विज्ञान सहायिका के कर्त्तव्य

- एड्स रोगी के प्रति मन में सहानुभूति होनी चाहिए । उनसे बात करें उनको छुए जिससे औरों को भी उनको अपनाने मे आजादी हो ।
- लोगो को समझाएं कि एड्स रोगी के साथ रहने खाने पीने या कपडे पहनने से कोई खतरा नहीं है।
- एड्स रोगी को यौन संबंधों से दूर रहने को समझाएं । अगर संबंध बनाएं तो निरोध के सही प्रयोग की जानकारी दें ।
- उनके लिये दवा आदि का इंतजाम करने का प्रयत्न करें ।

- उनको सामान्य जीवन जीने को प्रोत्साहित करें । बीमार होने पर उनको हर संभव संभालने की कोशिश करें ।

(र) एड्स से बचाव

- एक ही जीवन साथी के साथ यौन सबंध बनाना चाहिए जो सक्रमित न हो ।
- सदा असंक्रमित सूई तथा सिरिंज प्रयोग करनी चाहिए ।
- अगर कभी अन्यत्र यौन संबंध बनाये तो कंडोम का उपयोग अवश्य करें ।
- खून अगर चढाना पडे तो यह निश्चित कर लें कि वो एच आई वी संक्रमित न हो ।
- कुपोषण से बचने तथा मासिक धर्म की परेशानियों से बचने का समय पर इलाज कराने से रक्त चढाने की संभावना कम हो जाती है ।
- बार-बार गर्भ धारण भी हमारे यहा महिलाओं मे खून चढाने का बडा कारण है । इन स्थितियों से बचा जाना चाहिए ।

(ज) एड्स से प्रसूति विजान सहायिका /स्वास्थ्य कर्मी / नर्सिंग स्टाफ का बचाव

- रोगी को लगाई गई सूई का निस्तारण सही तरीके से करे यानि उसे एक प्लास्टिक के डबे मे डाले जिसमे सोडियम हाइपोक्लोराइट का घोल पडा हो
- रोगी के रक्त से संपर्क में आने से बचें, सदैव दस्ताने पहन कर रक्त सबधित कार्य करें ।
- रक्त टेबिल या फर्श पर गिर जाने पर उसे अखबार या ब्लोटिंग पेपर से ढककर, उस पर सोडियम हाइपोक्लोराइट का घोल डाले । तत्पश्चात दस्ताने पहने हाथो से उसे पोंछ कर निस्तारण हेतू बने डिबबे मे डालें, जिसमे सोडियम हाइपोक्लोराइट का ताजा घोल बना पड़ा हो ।
- यदि रक्त की बूंदें छिटकर लगने का खतरा हो तो ऐसे समय पर मास्क का उपयोग करें ।
- रक्त से संबधित सभी कार्यो को करने के पश्चात् दस्ताने उतार कर भली भाति हाथो को साबुन से धोए ।
- एड्स के रोगी के रक्त के संपर्क में यदि असावधानीवश आ जाएं तो तुरत उच्च अधिकारियों को सूचित करें । जरूरत होने पर 2 घंटे के अंदर दवाईया शुरू की जाती हैं जिनसे एड्स के संक्रमण को होने से रोका जा सकता है ।

(झ) कण्डोम के विषय में कछ जानकारी

- यह आज एड्स से लडने का बड़ा हथियार माना जा रहा है ।
- कण्डोम का सही तरह से प्रयोग होना आवश्यक है ।
- संभोग क्रिया से पूर्व भी स्त्राव निकलते हैं अत: निश्चित हो कि कण्डोम के बिना लिग जननांगों के सम्पर्क में न आये ।
- संभोग के उपरान्त कण्डोम को सावधानी से बाहर निकाले अन्यथा कण्डोम जननांग में रह सकता है ।
- **मगर सबसे उत्तम तरीका है एक ही और असंक्रमित जीवन साथी से यौन संबध ।**

  (नोट कन्डोम के विषय में और अधिक जानकारी हेतु इकाई-5 भी संदर्भित करें ।)

(क) **विशेष -** एड्स से मां के द्वारा अपने शिशु को दूध पिलाने से बीमारी हो सकती हैं शिशु को भी कुपोषण से बचाने के लिए गरीब देशों में एड्स से संक्रमित माँ को दूध पिलाने से मना नहीं करते अन्यथा शिशु भी कुपोषण से मर जायेगा ।

(ख) **एड्स का इलाज'**

– अभी तक एड्स का पूर्ण इलाज संभव नहीं है ।

– दवाइयों से एच आई वी पोजिटिव व्यक्ति में एड्स होने की क्रिया को धीमा किया जा सकता है ।

– दवाइयों से एड्स के रोगी को बेहतर जिंदगी दी जा सकती है

– एच आई वी से संक्रमित रोगी को सही दवा दी जाये तो उसमें अवसरवादी संकमण रोगों को रोक सकते हैं ।

(ग) (दवाओं की सीमाऐं

– इनके शरीर पर प्रतिकूल प्रभाव होते हैं ।

– यह बहु त मंहगी हैं तथा अविकसित देश के लोगों के लिए यह इलाज करवाना अभी संभव नहीं है क्योंकि इलाज पूरी उम्र चलता रहता है ।

– यह दवाइयां बीमारी को पूर्णतया खत्म नहीं करती ।

– इसमे से कुछ दवाओं के नाम हैं जाइडोबुडिन, लेमीवुडिन नीवाईँरापाइन इत्यादि ।

एड्स से बचने का टीका

- एक ऐसे टीके की खोज की जा रही है जो शरीर को एड्स से बचा सकें परंतु अभी तक पूरी सफलता नहीं मिली है । कई प्रकार के टीको पर अनुसन्धान जारी है ।

(घ) एड्स के संबंध में जानने लायक अन्य बातें,

– एच आई वी ग्रसित रोगियों को परिचर्या प्रदान करने को नाको द्वारा सामुदायिक नर्सेज केन्द्र शुरू किये गये हैं जिसकी गतिविधियां निम्न हैं -

- एच आई वी /एड्स रोगियों को शरण देना
- उनको संतुलित पोषण देना
- उनको नर्सेज सेवा देना
- रोगी तथा सेवा करने वालों को मनोरंजन प्रदान करना
- उनको आध्यात्मिक संबल देना

- उनको रेफरल सेवाएं प्रदान करना
- रोगी के परिवारों तथा संगठनों को रोगी की अच्छी देखभाल हेतु प्रशिक्षित करना

2.7 व्यवसाय शिक्षा, सांस्कृतिक प्रतिभाओं का महिला स्वास्थ्य पर प्रभाव

महिलाएं परिवार ही नही अपितु समाज की धुरी हैं । किन्तु भारत ही नही बल्कि विश्व के अधिकांश भागों में स्त्री को दोयम दर्जा (Second Sex) दिये जाने के कारण महिला स्वास्थ्य की उपेक्षा हुई है । हमारे देश में तो महिला स्वास्थ्य का सार, अनेक राज्यों की शोचनीय स्थिति प्रकट करता है । प्रसूति स्वास्थ्य, महिला स्वास्थ्य का अभिन्न अंग है । किन्तु यहां इस तथ्य की उपेक्षा नही करनी चाहिये कि क्योंकर महिला स्वास्थ्य का अपेक्षित स्तर प्राप्त नही हो रहा है। महिला स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कुछ कारकों का वर्णन निम्न प्रकार है

व्यवसाय :

महिलाओं पर गृहस्थी का भार होने के कारण, उन्हें व्यावसायिक गतिविधियों से दूर रखा जाता है। कुछ अपवादों को छोडकर इसी कारण से महिलाएं आर्थिक तौर पर उन पर निर्भर नहीं हो पाती हैं। आर्थिक परतत्रंता से उनका स्वास्थ्य-स्तर प्रभावित होना स्वाभाविक है । यहां तक देखा गया है कि नौकरीशुदा महिलाओं को घर एवं व्यवसाय का दोहरा उत्तरदायित्व निभाना पडता है, फलस्वरूप उनमें अनेक शारीरिक एवं मानसिक विकार हो सकते हैं ।

शिक्षा :

शिक्षा उन्नति एवं विकास की परिचायक है । हमारे देश में महिला साक्षरता का प्रतिशत, पुरूषों से काफी पीछे हैं । महिला शिक्षा का प्रजनन स्वरूप एवं परिवार कल्याण से सीधा सम्बंध है । अत: शिक्षा का स्तर ऊँचा कर महिला स्वास्थ्य में प्रगति की जा सकती।

सांस्कृतिक प्रतिमान :

हमारे देश की संस्कृति पितृरआतमक एवं पुरूष-प्रधान रही है । तदनुसार यहां पर अनेक रीति-रिवाज, अंधविश्वास, धारणाएं विद्यमान हैं, जो कि महिला स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं ।

धार्मिक सस्कारों में लडके को प्रमुखता देना, अर्थ पर पुरूष का प्रभुत्व, बच्चो को भगवान की देन मानना, पर्दा-प्रथा का प्रादुर्भाव, गर्भपात को पाप मानना इत्यादि अनेक सांस्कृतिक मान्यताएं महिला स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं ।

इनके अतिरिक्त राजनैतिक प्रणाली, जनसंख्या विस्फोट स्वास्थ्य सेवाओ की उपलब्धता इत्यादि अनेक कारक, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष: महिला स्वास्थ्य हेतु उत्तरदायी हैं ।

2.8 नियोजित अभिभावकता

अगर माता-पिता बच्चे के लालन पालन के लिये सुनियोजित तरीके से तैयारी करें अर्थात वे आर्थिक, मानसिक व शारीरिक रूप से बच्चे के आगमन को तैयार हों तथा उसके विकास मे सहायक हो सके- इतनी क्षमता खुद मे विकसित करें, तो समाज को बहुत फायदा होगा'

1. बच्चों की सीमित संख्या तथा उनके जन्म में फासला

2. आर्थिक रूप से समर्थ होने के कारण परिवार के सदस्यों का अच्छा स्वास्थ्य
3. वंशानुगत रोगों पर नियंत्रण - मधुमेह, हीमोफिलीया आदि रोग पीढी दर पीढी चलते जाते हैं
4. बच्चों के संतुलित विकास से अच्छे नागरिकों का निर्माण
5. परिवार में समृद्वि, शांति

परन्तु आज भी कई पूर्वाग्रहो और स्वय की निराशा के कारण परिवार के अभिभावक संतान के साथ न्याय नही कर पाते । इसके मुख्य कारण हैं -

1. अशिक्षित माँ-बाप
2. आर्थिक स्थिति का कमजोर होना
3. अभिभावकों के स्वयं के विकास में कमी तथा बचपन के कटु अनुभव
4. विघटित परिवार - तलाक आदि
5. एकल परिवार
6. घर के सदस्यों में कलह
7. मार्ग प्रदर्शन हेतु उचित सामाजिक संस्थाओ का अभाव
8. संतान की रूचि की परवाह न करते हुये अपने निर्णय उस पर लादना

यह जानना जरूरी है कि सतान को पैदा करना ही काफी नही है उनकी सही देखरेख माँ-बाप की जिम्मेदारी है । माँ-बाप को उतने बच्चे ही पैदा करना चाहिये जिनकी जिम्मेदारी वे सरलता से उठा सके और स्वय भी खुशहाल जीवन जियें । जन्म से लेकर बच्चों के आत्मनिर्भर बनने तक उनकी देखरेख तथा संरक्षण करना, नियोजित अभिभावकता का मूल मत्र है ।

2.9 टीकाकरण

- जन्म के बाद कई शिशु कम उम्र मे मर जाते है । अधिकतर रोगों से उनको बचाना संभव है अगर उन्हें टीके लगा दिये जाये ।
- इन रोगो में क्षय रोग, डिफ्यीरिया, पोलियो, काली खाँसी, टेटनस और खसरा शामिल हैं ।
- अधिकतर टीके जन्म से एक वर्ष के भीतर लगाते हैं तथा आसानी से स्वास्थ्य केन्द्र पर उपलब्ध होते हैं ।
- ये टीके मुफ्त लगाने की सुविधा होती है ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका का यह कार्य है कि वह टीके की जरूरत के बारे में माँ को समझा कर बच्चों को टीके लगवाने को तैयार करे ।
- टीका लगाने के बाद अक्सर कोई परेशानी नहीं होती परन्तु कभी-कभी बच्चे को बुखार आ सकता है या बच्चा दर्द से रो सकता है, जो थोडे से इलाज से या बिना इलाज के ठीक हो जाता है । इसकी वजह से कई माँ-बाप बच्चों को टीका नही लगवाते, उनको समझाना चाहिये ।
- गांवों मे टीके को लेकर कई भ्रान्तियां भी होती हैं जिनको दूर करना आवश्यक है । सरकार की कई स्वारथ्य योजनाए सिर्फ टीकाकरण को लेकर हैं ।

- टीको को सुरक्षित, सही अवस्था में हेर केन्द्र तक पहुँचाने के लिये कोल्ड चेन (Cold Chain) का इस्तेमाल किया जाता है । जिसका अर्थ है निर्धारित तापमान 2-8 डिग्री पर उनको बर्फ में रख कर संग्रहित करना और निश्चित स्थान तक पहुचाना । रेडक्रास तथा परिवार कल्याण कार्यक्रमों का यह महत्वपूर्ण अंग है ।

टीकाकरण तालिका

जन्म के समय	बी सी जी (तपेदिक)
डेढ महीने पर	डी पी टी (डिप्थेरिया + काली ख़ासी + टेटनस) + पोलियो
ढाई महीने पर	डी पी टी (डिप्थेरिया + काली ख़ासी + टेटनस) + पोलियो
साढ़े तीन महीने पर	डी पी टी (डिप्थेरिया + काली ख़ासी + टेटनस) + पोलियो
9 से 12 माह पर	खसरा
18 से 24 माह पर	डी पी टी (डिप्थेरिया + काली ख़ासी + टेटनस)/ पहला बूस्टर बूस्टर पोलियो / पहला
5 वर्ष पर	डी टी / दूसरा बूस्टर पोलियो / दूसरा बूस्टर
हर 5 वर्ष बाद	टेटनस टॅकसाइड

एच्छिक टीके -

(i) एम एम आर (खसरा + मपस + रूबेला): 15 माह पर

(ii) हिपेटाइटिस बी: तीन टीके एक माह के अन्तराल पर,

* बी सी जी का टीका डेढ महीने पर भी लगाया जा सकता है ।

इसके अतिरिका गर्भवती महिला के लिये भी परिवार कल्याण कार्यक्रम के तहत दो टीके लगवाये जाते हैं जो एक महीने के अन्तराल में लगते हैं । ये टीके माँ को प्रसव के दौरान तथा नवजात शिशु को टेटनस से बचाते हैं ।

हर टीकाकरण केन्द्र पर बच्चों को टीकाकरण कार्ड दिया जाता है जिसमें टीका लगाने की तारीख लिखी जाती है । वहाँ बच्चों के स्वास्थ्य की जाँच भी की जाती है।पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम के तहत देश से पोलियो जैसी बीमारी जड़ से हटाने को सरकार कटिबद्ध है । इसके अंतर्गत पाँच साल तक के सभी बच्चों को पोलियो की दो खुराक एक महीने के अन्तराल में पिलाई जाती हैं । विभिन्न चरणों में पल्स पोलियो अभियान के अन्तर्गत पिलाई जाने वाली खुराकें भी 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों को पिलाया जाना आवश्यक है ।

2.10 सारांश

किशोरावस्था, शरीर मे हो रहे विभिन्न परिवर्तनो के कारण बहुत तनावयुक्त होती है । शारीरिक परिवर्तन किशोर को पूर्ण युवक तथा युवती बनाते हैं । मानसिक परिवर्तन से उनमें अपनी पहचान बनाने की इच्छा जागती है और विपरीत लिंग को आकर्षित करने का प्रयत्न करते हैं। ऐसे समय में यदि उनको भावनात्मक्। सहारा न दिया जाये तो वे तनावयुक्त होकर गलत दिशा मे चले जाते हैं । नशा तथा विद्रोही प्रवृति इसी का परिणाम है । सबसे बडी समस्या किशोर गर्भ की है जो उनकी सेक्स के प्रति आधी अधूरी जानकारी का परिणाम है ।

स्त्री पुरूष से हर तरह से बराबरी कर सकती है, और विकास के लिए ये बहुत जरूरी है । शिक्षित स्त्री परिवार को सही दिशा भी दे सकती है ।

प्रजनन स्वास्थ्य एक ऐसी काल्पनिक स्थिति है जिसमें स्त्री पुरूष का संबंध सुखद हो, उसमें गर्भ होने का खतरा न हो और वे अपनी मर्जी से स्वस्थ संतान पैदा कर सकें और यौन रोगों का खतरा भी ना रहे । यौन रोग प्रजनन स्वास्थ्य पर बुरा असर डालते हैं । इससे सेक्स के आनन्द तथा प्रजनन क्षमता पर बुरा असर पडता है । इनकी रोकथाम स्वास्थ्य सेवाओ का जरूरी हिस्सा है । इसलिए विभिन्न प्रजनन मार्ग संक्रमणों के विषय में सक्षिप्त जानकारी इस अध्याय में दी गई है । समय पर उपचार सिवाय एड्स के सभी यौन रोगों से मुक्ति दिला सकता है । एड्स के बारे में विस्तृत जानकारी आवश्यक है । हयूमन इम्यूनो डेफिसियेन्सी वायरस (HIV) शरीर की रोगों से लडने की क्षमता को खतम कर देता है और व्यक्ति विभिन्न रोगों से ग्रसित होकर मर जाता है । अभी तक इसका कोई इलाज नही है । इस कारण एड्स से बचने के लिए सुरक्षित यौन सबधों पर जोर दिया जाता है । लगातार जानकारी देना ही इसका हथियार है । कन्डोम का प्रयोग एड्स से बचने का अचूक तरीका है । प्रसूति विज्ञान सहायिका को रोगों से बचाव के बारे मे अवगत कराते हुए इस पाठ में टीकाकरण की आवष्यकता तथा टीकाकरण तालिका के विषय में भी बताया गया है । परिवार के स्वास्थ्य से सबंधित सभी पहलुओं को भी छुआ गया है ।

2.11 प्रश्न

1. किशोरावस्था में शरीर में क्या परिवर्तन आते है?
2. किशोरावस्था में क्या मानसिक परिवर्तन आते हैं?
3. किशोर गर्भ में सावधानी क्यों अपेक्षित है?
4. स्त्री लिंग समानता से क्या अभिप्राय है?
5. परिवार का स्वास्थ्य अच्छा होने पर परिवारजनों को क्या फायदे हैं?
6. प्रजनन मार्ग में संक्रमण के क्या लक्षण हो सकते हैं?
7. यौन रोगी को एड्स का खतरा अधिक क्यों होता है?
8. एड्स किससे होता है और इसका पता कैसे लगता है?
9. एच आई वी तथा एड्स में अन्तर बताओ?
10. महिला की आर्थिक निर्भरता उसके स्वास्थ्य पर कैसे प्रभाव डालती है?
11. नियोजित अभिभावकता से क्या तात्पर्य है और इसे कैसे प्राप्त कर सकते हैं?
12. टीकाकरण का महत्त्व क्या है तथा आवश्यक टीकों के बारे मे संक्षिप्त जानकारी दें?
13. एस टी डी किसे कहते हैं?
14. एड्स से लड़ने का सबसे अच्छा उपाय क्या है? क्या एड्स का उपचार संभव है?

इकाई -3 पोषणीय शिक्षा

इकाई की रूपरेखा

3.0 प्रस्तावना

3.1 उद्देश्य

3.2 गर्भावस्था, स्तनपान काल में संतुलित आहार

3.2.1 गर्भावस्था में परिवर्तन

3.2.2 गर्भवती स्त्री के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता

3.2.3 स्तनपान काल

3.2.4 स्तनपान काल की आहारीय आवश्यकता

3.3 स्थानीय आहार एवं उसका पोषणमान बढ़ाना

3.3.1 आहार सम्बन्धी कुछ तथ्य

3.3.2 पोषक तत्वों का मान बढ़ाना (रूपान्तरण)

3.4 भोजन की स्वच्छता

3.4.1 भोजन की स्वच्छता सम्बन्धी कुछ सावधानियां

3.5 आयरन, फॉलिक एसिड, खनिज एवं विटामिनों का गर्भावस्था में महत्व

3.6 पोषणीय कमी गर्भावस्था एवं शिशु पर प्रभाव

3.7 सारांश

3.8 प्रश्न

3.0 प्रस्तावना

गर्भावस्था के दौरान माँ के अंगों एवं तंत्रो तथा भ्रूण और प्लेसेन्टा की वृद्धि तथा विकास के लिए अगर्भा (Non-pregnant) स्त्री की अपेक्षा गर्भिणी को प्रतिदिन 300 कैलोरी अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है । अगर्भा स्त्री को प्रतिदिन लगभ 1875 कि. कैलोरी की आवश्यकता होती है जबकि गर्भवती को 2175 कि कैलोरी की आवश्यकता होती हैं । ऊर्जा भोजन के आक्सीकरण से प्राप्त होती है।

अत: गर्भावस्था के दौरान भोजन की माँग बढ जाती है । भोजन में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेड, वसा, विटामिन, खनिज एवं जल ये छ: पोषक तत्व होते हैं जिनकी उपयुक्त मात्रायें भोजन में आवश्यक रूप से शामिल होनी चाहियें ।

संतुलित आहार, पोषणीय क्षीणता या कमियो के विरूद्ध सुरक्षा कवच का कार्य करता है।संक्षेप में-

"वह आहार जिसमें सभी आहार वर्ग जैसे ऊर्जा देने वाले आहार, शरीर संवर्धन करने वाले आहार और सुरक्षात्मक आहार उचित प्रमाण में, जिससे कि गर्भावस्था, स्तनपानकाल में महिला को सभी पोषक तत्व न्यूनतम मात्रा में प्राप्त हो जायें, गर्भावस्था एवं स्तनपानकाल का संतुलित आहार कहा जा सकता है ।

प्रस्तुत इकाई में गर्भावस्था एव स्तनपानकाल की इन्हीं पोषणीय आवश्यकताओं को वर्णित किया गया है ।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य प्रसूति विज्ञान सहायिका को महिलाओं की गर्भावस्था एवं स्तनपानकाल में पोषणीय शिक्षा प्रदान करना है। जिसके फलस्वरूप वह गर्भवती एवं प्रसूता के दुग्ध स्त्राव अवस्था में महिलाओं को स्वच्छ भोजन, संतुलित आहार एव पोषक तत्वों के बारे में जानकारी देने एवं अपनाने के लिए प्रेरित कर सकें ।

इस इकाई को पढ्ने के बाद प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के बारे में सीख पायेंगी -

1. महिलाओं के गर्भावस्था एवं स्तनपानकाल की अवस्था में पोषणीय आवश्यकता एवं संतुलित आहार के बारे में ।
2. उपलब्ध स्थानीय आहार एवं उनका रूपान्तरण कर पोषण मान को बढ़ाने के बारे में ।
3. भोजन की स्वच्छता की अनिवार्यता के बारे में ।
4. आयरन एवं फॉलिक एसिड सहित अन्य खनिज विटामिनों का गर्भावस्था में महत्व के बारे में ।
5. पोषणीय कमी का गर्भावस्था एवं बच्चे पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में ।

सतुलित आहार, पोषणीय क्षीणता या कमियों के विरूद्ध सुरक्षा कवच का कार्य करता है।संक्षेप में-

वह आहार जिसमें सभी आहार वर्ग जैसे ऊर्जा देने वाले आहार, शरीर संवर्धन करने वाले आहार और सुरक्षात्मक आहार उचित प्रमाण में, जिससे कि गर्भावस्था स्तनपानकाल मे महिला को सभी पोषक तत्व न्यूनतम मात्रा में प्राप्त हो जायें । गर्भावस्था एंव स्तनपानकाल का संतुलित आहार कहा जा सकता है ।

प्रस्तुत इकाई में गर्भावस्था एवं स्तनपान की इन्ही पोषणीय आवश्यकताओं को वर्णित किया गया है ।

3.2 गर्भावस्था, स्तनपानकाल में सन्तुलित आहार

संतुलित आहार वह भोजन है जिसमें विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ उपयुक्त मात्रा व अनुपात में हों । अच्छा यह है कि कैलोरी, खनिज, लवण, विटामिन व पोषक तत्वों का कुछ अतिरिक्त मात्रा में प्रावधान हो ताकि अपर्याप्त मात्रा में भोजन मिलने की अवधि में इनकी आवश्यकता की पूर्ति हो सके ।

गर्भावस्था की अवधि लगभग नौ माह होती है । यही वह अवधि है जब भ्रूण की मां के शरीर में वृद्धि होती है । गर्भावस्था में निम्नलिखित शारीरिक परिवर्तन भी होते हैं ।

3.2.1 गर्भावस्था में परिवर्तन

(क) शरीर के अंगों में परिवर्तन

भ्रूण के भरण पोषण के लिए गर्भाशय तथा उसकी सहयोगी माँसपेशियों का आकार बड़ा हो जाता है व दुग्ध निर्माण की पूर्व तैयारी हेतु स्तनों का आकार बढ़ जाता है ।

(ख) शरीर के चयापचय में परिवर्तन :-

गर्भावस्था के दौरान माँ की आधारभूत चयापचयी दर बढ जाती है क्योंकि गर्भावस्था के दौरान भ्रूण तथा मां के ऊतकों की वृद्धि व विकास तीव्र गति से होता है ।

(ग) शरीर में पाए जाने वाले द्रव्यों में परिवर्तन :-

गर्भावस्था के दौरान शरीर में पाए जाने वाले द्रव्य की मात्रा बढ जाती है । रक्त की मात्रा सामान्य की अपेक्षा काफी बढ़ जाती है । क्योंकि भ्रूण तथा माँ के शरीर में बने नए ऊतकों तक पोषक तत्वों को सरलतापूर्वक पहुँचाने के लिए रक्त की मात्रा में वृद्धि होती है । किन्तु हीमोग्लोबिन तथा रक्त के अन्य अवयवों की सान्द्रता कम हो जाती है।

एक स्वस्थ स्त्री की सामान्य हीमोग्लोबिन की मात्रा 100 मि.ली. रक्त में 12 मि.ग्रा. होती है । गर्भावस्था के समय यह मात्रा घटकर 100 मि.ली. रक्त में 10-11 मिग्रा. रह जाती है । यह एक सामान्य शरीर क्रियात्मक परिवर्तन है । गर्भावस्था में हमें इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि हीमोग्लोबिन की मात्रा 100 मि.ली. रक्त में 10 मि.ग्रा. से कम न होने पाए ।

(घ) पाचन क्रिया में परिवर्तन

गर्भावस्था के दौरान शरीर में कैल्सियम व लौह तत्व जैसे आवश्यक पोषक तत्वों के अवशोषण की दर बढ जाती है । अवशोषण की दर में वृद्धि के साथ-साथ गर्भावस्था के दौरान पाचन क्रिया में निम्नलिखित परिवर्तन भी देखने को मिलते हैं :

- आमाशय द्वारा अम्ल तथा अन्य पाचक रसों का उत्पादन व स्त्राव कम हो जाता है । अत: भोजन सरल पोषक इकाइयों में ठीक प्रकार से टूट नही पाता और भली भाति पच नहीं पाता । इसके फलस्वरूप आमाशय में भोजन बहुत देर तक रहता हैं जिससे स्त्री को भारीपन अर्थात पेट भरा हुआ सा महसूस होता है ।
- गर्भाशय में बढता हुआ भ्रूण आमाशय पर दबाव डालता है । इसलिए भोजन तथा 'आमाशय अप्ल आहार नली की तरफ ढकेल दिए जाते हैं । इसके कारण गर्भावस्था के शुरू में जी मिचलाना, वमन, जलन तथा बदहजमी के अन्य लक्षण प्राय: देखने को मिलते हैं ।
- मांसपेशियों की क्रियाशीलता कम हो जाने के कारण, पाचन नली से भोजन की आगे बढ़ने की गति धीमी और मंद हो जाती है गर्भावस्था की अंतिम अवधि में यह परिवर्तन अधिक देखने में आता है । इसके कारण अक्सर कब्ज की शिकायत रहती है ।

(य) शरीर के भार में परिवर्तन

गर्भावस्था में स्त्री के शरीर का वजन बढ जाता है।यह बढोतरी निम्नलिखित कारणों से होती है :-

- बढते हुए भ्रूण का भार
- बढते हुए गर्भाशय का भार
- बढते हुए प्लेसेन्टा का भार
- बढे हुए स्तनों का भार

– रक्त की मात्रा में तथा कुल शारीरिक द्रव्यों में बढोतरी

– शरीर में वसा जमा होना (इस वसा की आवश्यकता स्तनपानकाल के समय ऊर्जा प्रदान करने के लिए होती है।)माँ के वजन में गर्भावस्था के दौरान सामान्यत: कुल वृद्धि 8-10 किलोग्राम होनी चाहिए । गर्भावस्था का पूर्णकाल 3 त्रिमासों में बाटा जाता है । ये है :-

I. पहला त्रिमास 0 - 3 माह

II. दूसरा त्रिमास 3 - 6 माह

III. तीसरा त्रिमास 6 - 9 माह

इन तीनों त्रिमासो में वजन मे उत्तरोत्तर वृद्धि होती है । परन्तु यह देखा गया है कि दूसरे तथा तीसरे त्रिमास में ही वजन में अधिकतम बढोतरी होती है ।

अत: वजन में वृद्धि, सहज और सामान्य गर्भावस्था का सबसे अच्छा सूचक है । वजन में उत्तरोत्तर वृद्धि यह दर्शाती है कि भ्रूण तथा माँ के ऊतकों में सामान्य दर से वृद्धि हो रही है । वजन में 8 किलोग्राम से कम बढोतरी भ्रूण तथा माँ की अस्वस्थता का सूचक है । यदि स्त्री के वजन में उचित बढोतरी नहीं होती है तो संभव है कि वह कम वजन के ऐसे बच्चे को जन्म देगी जिसके बचने की संभावना या तो कम या फिर न के बराबर है । इससे माँ के जीवन को भी खतरा हो जाता है । अत: गर्भावस्था में प्रयत्न यह होना चाहिए कि वजन में संतोषजनक बढोतरी हो ।

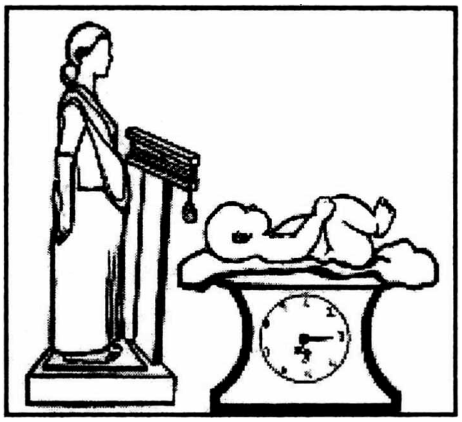

चित्र : गर्भावस्था के दैरान वजन में पर्याप्त बढ़ोतरी शिशु के स्वस्थ होने को सुनिश्चित करती है।

आप जानती ही हैं कि गर्भावस्था की शुरूआत से ही शरीर की कार्यप्रणाली मे निश्चित परिवर्तन होते हैं । इन्हीं परिवर्तनो के कारण ही आहार पद्धति में भी परिवर्तन करना पड़ता है इसके अतिरिक्त पोषक तत्वों की आवश्यकता भी बढ जाती है जिससे आहार की किस्म तथा मात्रा में परिवर्तन करना अनिवार्य हो जाता है ।

3.2.2 गर्भवती स्त्री के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता

नीचे तालिका मे गर्भवती महिला के लिये पौष्टिक तत्वों की दैनिक प्रस्तावित आहारिक मात्राएँ (भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद, 1989) दी गई है

तालिका : गर्भवती हेतु पौष्टिक तत्वों की मात्राएं (प्रस्तावित)

पौष्टिक तत्व	भोज्य पदार्थो की मात्रा (मात्रा)			
	क्रियाशीलता			अतिरिक्त आवश्यकता
	कम	मध्यम	अधिक	
ऊर्जा (कि.कैलोरी)	1875	2225	2925	+300
प्रोटीन (ग्राम)	50	50	50	+15
वसा (ग्राम)	20	20	20	+10
कैल्सियम (मिग्रा.)	400	400	400	+600
लौह तत्व (मिग्रा.)	30	30	30	+8
बीटा कैरोटीन	2400	2400	2400	
थायमिन (मिग्रा.)	0.9	1.1	1.2	+0.2
राइबोफलेविन(मिग्रा)	1.1	1.3	1.5	+0.2
नियासिन (मिग्रा.)	12	14	16	+2
पिरीडॉक्सिन (मिग्रा.)	2.0	2.0	2.0	+0.5
विटामिन 'सी'(मिग्रा)	40	40	40	
फोलिक अप्ल(मा.ग्रा.)	100	100	100	+300
विटामिन बी-12(मिग्रा)	1	1	1	

भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद (ICMR) द्वारा प्रस्तावित पौष्टिक तत्वों की अनुशासित मात्रा के आधार पर गर्भवती महिला के लिए संतुलित आहार आगे दी गई तालिका में दर्शाया गया है ।

तालिका: गर्भवती महिला के लिये दैनिक संतुलित आहार

भोज्य समूह	भोज्य पदार्थो की मात्रा (ग्राम)			
	क्रियाशीलता			अतिरिक्त वश्यकता
	कम	मध्यम	अधिक	
अनाज	300	360	480	-
दालें	60	75	90	-
दूध (मिली.)	300	300	300	+200
कंदमूल	100	100	200	-
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	100	100	100	+50
अन्य सब्जियाँ	100	100	100	-
फल	100	100	100	+100
शर्करा	20	25	45	-
घी /तेल	20	30	40	+10

गर्भावस्था में स्त्री को सामान्य अवस्था की तुलना में 300 किलो कैलोरी अतिरिक्त ऊर्जा तथा 15 ग्राम अतिरिक्त प्रोटीन की आवश्यकता होती है ।

उदाहरण के लिए हल्का श्रम करने वाली स्त्री को गर्भावस्था में 2175 कि. कैलोरी (1875+300) तथा 65 ग्राम प्रोटीन (50+15) की आवश्यकता होगी । किन्तु शारीरिक रूप से क्रियाशील गर्भवती स्त्रियों व गर्भवती किशोरियों को हल्का श्रम करने वाली गर्भवती स्त्री की तुलना में अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है क्योकि गर्भवती किशोरियों को अपनी वृद्धि व भ्रूण की वृद्धि दोनों के लिए अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है ।

गर्भावस्था में बी समूह के विटामिन थायमीन, राइबोफलेविन तथा निएसीन की आवश्यकता ऊर्जा की आवश्यकता पर निर्भर करती है । ऊर्जा की आवश्यकता अधिक होने पर बी विटामिनों की आवश्यकता बढ़ जाती है ।

यद्यपि गर्भावस्था में लगभग सभी पोषक तत्वों की आवश्यकता बढ जाती है । परन्तु कुछ विशेष पोषक तत्वों की आवश्यकता तुलनात्मक रूप से अधिक बढ जाती हैं जैसे- ऊर्जा, प्रोटीन, कैल्सियम, लौह तत्व, आयोडीन व जिंक ।

अब आपके मन में यह प्रश्न उठ रहा होगा कि गर्भावस्था में इन्ही पोषक तत्वो की आवश्यकता क्यों बढ़ जाती है ।

अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से होती है :-

- भ्रूण तथा प्लेसेन्टा को बनाए रखने के लिए
- माँ के शरीर में वसा के भंडार को बढाने के लिए, तथा
- उच्च आधारभूत चयापचयी दर के कारण ऊर्जा की बढी हुई खपत की क्षतिपूर्ति के लिए ।

प्रोटीन की जरूरत माँ व भ्रूण में नए ऊतकों के निर्माण के लिए होती है । इसलिए इस पोषक तत्व की आवश्यकता गर्भावस्था में बढ जाती है । लौह तत्व, भ्रूण की रक्त कोशिकाओ में हीमोग्लोबिन के संषलेषण के लिए आवश्यक होता है, इसके अतिरिक्त भ्रूण जन्म के 3 से 6 माह के बाद तक के लिए प्रचुर मात्रा में लौह तत्व का संचय करके रखता है । जिसके कारण लौह तत्व की आवश्यकता और अधिक बढ जाती है । कैल्सियम की आवश्यकता भ्रूण की हड्डियों और दातों के खनिजीकरण के कारण बढ जाती है । जिंक की आवश्यकता, वृद्धि तथा प्रोटीन के संश्लेषण के लिए तथा आयोडीन की आवश्यकता, भ्रूण की शारीरिक तथा मानसिक वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए होती है ।

यहाँ इस बात का आवश्य ध्यान रखना चाहिए कि अधिकाश पोषक तत्वों की आवश्यकता दूसरे त्रिमास से ही बढती है । अत: वृद्धि के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्व भ्रूण अपनी माँ के आहार से प्राप्त करता है । यदि माँ का आहार अपर्याप्त होगा तो भ्रूण को पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए माँ के ऊतक टूटकर उसे पोषक तत्व प्रदान करेंगे । आप जानती हैं कि ऐसा उचित नहीं होगा ।

हालांकि गर्भावस्था के दौरान आहार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है तथापि गर्भावस्था से पहले की सामान्य अवस्था में पोषण स्तर का अच्छा होना सहज गर्भावस्था के लिए महत्वपूर्ण है ।

एक उचित आहार लेने वाली स्त्री जिसके शरीर में पोषक तत्वों का पर्याप्त भंडार है, अपेक्षाकृत सहज गर्भावस्था के लिए तैयार होगी ।

3.2.3 स्तनपानकाल (Breast Feeding/Lactation Period)

स्तनपानकाल गर्भावस्था के बाद का समय है जब स्त्री पूर्ण विकसित तथा तेजी से बढ रहे शिशु का अपने दूध से लालन पालन करती है । शिशु के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्व उसे माँ के दूध द्वारा मिलते हैं ।

स्तनपान कराने वाली स्त्री के शरीर में पहले महीने में प्रतिदिन लगभग 500 मि.ली. दूध बनता है। पाँचवे महीने तक यही मात्रा बढकर 1 लीटर प्रतिदिन हो जाती है । सामान्यतया एक भली भाँति पोषित, स्तनपान कराने वाली मां के शरीर मे एक दिन में औसतन 850 मि.ली. दूध बनता है । परन्तु इसमें व्यक्तिगत विभिन्नताएँ भी हो सकती हैं ।

तालिका: माँ के दूध की पोषक तत्व संरचना

पोषक तत्व	माँ का दूध प्रति 100 मि. ली.
ऊर्जा (कि. कलोरी)	65
प्रोटीन (ग्रा.)	1.1
कारबोज (ग्रा.)	7.4
वसा (ग्रा.)	3.4
कैल्सियम (मि.ग्रा.)	28
लोह तत्व (मि.ग्रा.)	-
करोटिन (ग्रा.)	137
थायैमीन (मि.ग्रा.)	.02
राईबोफ्लैविन (मि.ग्रा.)	.02
नियासीन(मि.ग्रा.)	-
विटामिन सी (मि.ग्रा.)	3

लोहा, निएसीन - माँ के दूध में नहीं होता है ।

3.2.4 स्तनपानकाल की आहारीय आवश्यकता

माँ के दूध में उपस्थित ये सभी पोषक तत्व मां के शरीर से ही दूध में आते हैं । अत: स्तनपानकाल माँ की पोषण की आवश्यकताओं को बढा देता है । वास्तव में इस अवधि में माँ के शरीर पर गर्भावस्था से अधिक जोर पडता है । यह याद रखना आवश्यक है कि माँ का आहार तथा उसका पोषण स्तर, दूध की सरचनात्मक मात्रा को भी प्रभावित करता है ।

स्तनपान कराने वाली स्त्री के लिए पोषक तत्वो की आवश्यक दैनिक मात्रा यहां तालिका में दर्शाई गई है ।

तालिका : स्तनपानकाल के लिए दैनिक प्रस्तावित आहार मात्रा

पौष्टिक तत्व	क्रियाशीलता			अतिरिक्त आवश्यकता	
	कम	मध्यम	अधिक	0-6	6-12
ऊर्जा (कि. कैलोरी)	1875	2225	2925	+550	+400
प्रोटीन (ग्राम)	50	50	50	+25	+18
वसा (ग्राम)	20	20	20	+25	+25
कैल्सियम (मिग्रा.)	400	400	400	+600	+600
लौह तत्व (मिग्रा.)	30	30	30	-	-
बीटा कैरोटीन	2400	2400	2400	+1400	+1400
थायमिन (मिग्रा.)	0.9	1.1	1.2	+0.3	+0.2
राइबोफलेविन(मिग्रा)	1.1	1.3	1.5	+0.3	+0.2
नियासिन (मिग्रा.)	12	14	16	+4	+3
पिरीडॉक्सिन (मिग्रा.)	2.0	2.0	2.0	+0.5	+0.5
विटामिन 'सी'(मिग्रा)	40	40	40	+40	+40
फोलिक अप्ल(मा.ग्रा.)	100	100	100	+50	+50
विटामिन बी-12(मिग्रा)	1	1	1	+0.5	+0.5

स्त्रोत: स्तनपानकाल के लिये दैनिक प्रस्तावित आहारिक मात्राऐ (भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद 1989)

अनुशासित मात्रा के अनुसार स्तनपानकाल में महिला के लिए संतुलित आहार आगे दी गई तालिका में दर्शाया गया है

तालिका: स्तनपानकाल में महिला के लिए दैनिक संतुलित आहार

भोज्य समूह	भोज्य पदार्थो कि मात्रा (ग्राम)			
	क्रियाशीलता			अतिरिक्त आवश्यकता
	कम	मध्यम	अधिक	
अनाज	300	360	480	+30
दालें	60	75	90	+30
दूध(मिली.)	300	300	300	+200
कंदमूल	100	100	200	-
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	100	100	100	+50
अन्य सब्जियाँ	100	100	100	-
फल	100	100	100	+100
शर्करा	20	25	45	-
घी /तेल	20	30	40	+10

स्तनपानकाल में पोषक तत्वों की आवश्यकता काफी बढ जाती है । तालिका में आपने देखा होगा कि स्तनपानकाल में पोषक तत्वों की आवश्यक दैनिक मात्रा दो अवस्थाओ 0-6 माह तथा 6-12 माह के लिए दी गई है । ऐसा क्यों हैं - वह इसलिए क्योंकि पोषक तत्वों की आवश्यकता इस बात पर निर्भर करती है कि कितना दूध स्त्रावित हो रहा है ।

पोषक तत्वों की आवश्यकता पहले 6 महीनों में बाद के 6 महीनों की तुलना में काफी अधिक होती है । क्योंकि पहले 6 महीनों में सबसे अधिक दूध बनता है । छठे महीने तक दूध उत्पत्ति की क्षमता चरम सीमा तक पहुँच जाती है । तथा इसके बाद धीरे धीरे दूध की मात्रा कम होने लगती है और साथ ही पोषक तत्वों की आवश्यकता भी कम हो जाती है ।

स्तनपानकाल के पहले 6 महीनों में 550 अतिरिक्त कि. कैलोरी तथा बाद में 6 महीने (6-12) में 400 अतिरिक्त कि. कैलोरी की आवश्यकता होती है । यह मात्रा गर्भावस्था तथा स्तनपानकाल की अवस्था से पहले की आवश्यकताओं के अतिरिक्त है ।

स्तनपानकाल के दौरान ऊर्जा के अतिरिक्त प्रोटीन, कैल्सियम , विटामिन ए तथा विटामिन सी की आवश्यकताएं भी बढ जाती हैं । बढते हुए शिशु के ऊतकों की तीव्र वृद्धि के लिए शारीरिक वृद्धि में सहायक तथा रोगों से बचाव व शरीर की क्रियाओं को सुचारू रूप से चलाने में सहायक पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्रा मे आवश्यकता होती है । शिशु यह सब पोषक तत्व अपने माँ के दूध से प्राप्त करता है । इसलिए स्तनपान कराने वाली स्त्री के आहार मे यह सब पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में होने चाहिएँ ।

3.3 स्थानीय आहार एवं उनका पोषण मान बढाना

प्रसूति विज्ञान सहायिका को गर्भावस्था प्रसूतिकाल तथा स्तनपानकाल में महिला के आहार पर ध्यान देना आवश्यक है किंतु इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता है कि आहार योजना (Diet Planing) में स्थानीय उपलब्ध भोज्य पदार्थो से ही काम चलाना होता है । इसी प्रकार उसे उन तरीकों का ज्ञान होना जरूरी है जिनके आधार पर पोषक तत्वों का मान बढाया जा सकता है । यहां इन्हीं तथ्यों पर जानकारी दी जा रही है ।

गर्भावस्था में - सर्वप्रथम इस बात का पता लगाएं कि :-

- स्त्री गर्भावस्था के कौन से त्रिमास में है- पहले (0-3 माह), दूसरे (3-6 माह). या तीसरे (6-9 माह)?
- स्त्री किस आय वर्ग से संबद्ध है - उच्च आय वर्ग, मध्य आय वर्ग या निम्न आय वर्ग?
- स्त्री किस क्षेत्र (देश के किस भाग) की है?

इन बातों की जानकारी खाद्य पदार्थों के चुनाव, उनके प्रकार तथा मात्रा निर्धारित करने में सहायक होगी ।

सामान्यत: मिश्रित आहार में तीनों खाद्य वर्गों से (ऊर्जा देने वाले, शारीरिक वृद्धि में सहायक तथा रोगों से बचाव व शरीर की क्रियाओं को सुचारू रूप से चलाने मे सहायक) खाद्य पदार्थो को सम्मिलित करने से शरीर के लिए अपेक्षित आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है ।

परन्तु आप जानती हैं कि गर्भावस्था में ऊर्जा, प्रोटीन, कैल्सियम तथा लौह तत्व की आवश्यकता अधिकतम होती है । अत: तीनों खाद्य वर्गों मे से आपको अधिक मात्रा में अनाज, दालें, दूध व दूध से बने पदार्थों तथा हरी पत्तेदार सब्जियो को सम्मिलित करना चाहिये । यदि गर्भवती स्त्री मांसाहारी है तो माँस मछली /अंडे को भी सम्मिलित किया जा सकता है । यदि आर्थिक रूप से समर्थ हो तो मेवा गिरीदार फल, तिलहन आदि को सम्मिलित किया जा सकता है ।

यहाँ इस बात का उल्लेख करना महत्वपूर्ण होगा कि केवल खाद्य पदार्थों से प्राप्त लौह तत्व, गर्भावस्था में लौह तत्व की बढी हुई आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं होगा । बढ़ी हुई आवश्यकता की पूर्ति के लिए, लौह तत्व को गोलियो के रूप में प्रतिदिन सेवन के लिए दिया जाना चाहिए ।

अत: इस बात की सलाह दी जाती है कि गर्भावस्था में दूसरे त्रिमास के शुरूआत से ही, एक गोली जिसमे 60 मि ग्राम लौह तत्व तथा 500 मि. ग्राम फोलिक अम्ल पाया जाता है, का सेवन शुरू कर देना चाहिए । यह गोलियाँ प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर अथवा समेकित बाल विकास सेवाओं के अंतर्गत आँगन-बाडी में आसानी से उपलब्ध होती हैं तथा मुफ्त बांटी जाती हैं।

3.3.1 आहार सम्बंधी कुछ तथ्य

गर्भावस्था में कुछ पाचन संबन्धित परिवर्तन प्राय: सभी महिलाओ में होते है । इन परिवर्तनों के कारण स्त्री को बहुत परेशानी तथा असुविधा होती है । इन परेशानियों से छुटकारा पाने के लिए खाने की आदतों, आहार पद्धति तथा चुने गए स्थानीय तथा उपलब्ध खाद्य पदार्थो के प्रकार तथा मात्रा में कुछ परिवर्तन करना चाहिये । इन परिस्थितियो का सामना करने के लिए कुछ सरल सुझाव निम्नलिखित हैं :-

- सुबह के समय होने वाली परेशानियों को दूर करने के लिए गर्भवती स्त्री को सुबह के समय कार्बोज युक्त तथा इनसे बने खाद्य पदार्थ जैसे बिस्कुट, केक अथवा मिठाई आदि देने चाहिए । बेहतर होगा कि इन पदार्थो को सुबह चाय के साथ दिया जाए । इसके अतिरिक्त, तीखी गंध तथा सुवास वाले खाद्य पदार्थो या ऐसे खाद्य पदार्थ जिनको खाने के बाद भी बहुत समय तक उनका स्वाद बना रहे, का सेवन कम कर देना चाहिए ।
- जलन तथा भारीपन से बचने के लिए वसा-युक्त या तले हुए खाद्य पदार्थो के सेवन को सीमित रखना चाहिये एक समय में अधिक मात्रा में भोजन न खाना भी लाभप्रद होता है ।
- कब्ज को रोकने के लिए भोजन में अधिक मात्रा में रेशे-युक्त खाद्य पदार्थ तथा पर्याप्त मात्रा में तरल पदार्थो को शामिल करना चाहिये ।

– खाद्य पदार्थ जैसे सब्जियाँ (विशेषकर हरी पत्तेदार सब्जियां), साबुत अनाज / दाल (जैसे गेहूँ चने की दाल, उड़द की दाल काला चना आदि) में रेशा प्रचुर मात्रा में पाया जाता है । अत: इन पदार्थो को भोजन में अधिक मात्रा में सम्मिलित करना चाहिये । परन्तु कई बार कुछ रेशे-युक्त पदार्थ - दालों मे विशेषकर साबुत उडद तथा सब्जियों में बंद गोभी के सेवन

से शरीर मे बहुत गैस बनती है, जिससे परेशानी होती है । अत: अगर यह सब अनुकूल न हो तो इन पदार्थो का सेवन कम कर देना चाहिये ।

- जल (कम से कम 4-6 गिलास प्रतिदिन) तथा अन्य पेय पदार्थों जैसे दूध, लस्सी, नारियल का पानी, नीबू-पानी आदि को मुख्य आहारों के समय के बीच-बीच में लेते रहना चाहिये । ऐसा करने से पाचन नली से भोजन को आगे बढने मे सहायता मिलती है तथा कब्ज की शिकायत से भी बचा जा सकता है ।
- उपलब्ध स्थानीय आहारों से पोषणीय आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिये ।

जैसा कि पूर्व में वर्णित किया जा चुका है स्तनपानकाल के पहले 6 महीनों में ऊर्जा तथा प्रोटीन की आवश्यकता बाद के 6 महीनों की अपेक्षा काफी अधिक होती है ।

अत: इस अवस्था में निम्न खाद्य पदार्थो का अधिक सेवन करना चाहिए -

– अनाज (जैसे गेहूँ चावल, बाजरा, ज्वार, रागी आदि)
– दालें तथा यदि स्वीकार्य हो तो मांस / मछली / अडा,
– दूध या दूध से बने पदार्थ (जैसे दही, पनीर, खोया आदि)
– हरी पत्तेदार सब्जियाँ (चौलाई, सरसों, मेथी, अरबी के पत्ते इत्यादि)
– मौसम के फल (जैसे संतरा, नींबू, अमरूद, अनन्नास, आम, पपीता, इत्यादि)
– गिरीदार फल / तिलहन (मूँगफली, तिल, नारियल आदि)

इसके अलावा यह ध्यान रखें कि एक स्तनपान कराने वाली स्त्री को प्रतिदिन कम से कम 500 मिली दूध पीना चाहिये । यहाँ पर यह उल्लेख करना आवश्यक है कि भोजन के प्रकार तथा मात्रा का चयन व्यक्ति की आय के अनुसार करना चाहिये ।

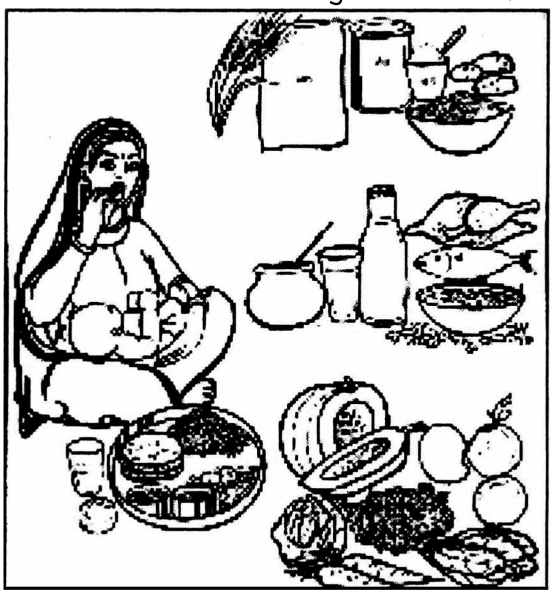

चित्र : स्तनपानकाल के योग्य खाद्य पदार्थ

3.3.2 पोषक तत्वों का मान बढाना (रूपान्तरण)

पकाने अथवा भोजन तैयार करने की अनेक विधियाँ ऐसी हैं जिनका उपयोग कर भोजन में पोषक तत्वों के मान में वृद्धि की जा सकती है जैसे कि -

- **अनाज एवं मोटे अनाज का मिश्रण करना**
- मुख्य अनाज अर्थात गेहूँ चावल के साथ किसी मोटे अनाज यथा रागी, बाजरा, ज्वार को मिलाकर भोजन बनाने से आहार एवं पोषक एवं कैलोरी मान बढ़ जाता है, पोषणीय कमियों से बचाव हेतु अनाजों का मिश्रण करके उपयोग में लाना अत्यन्त प्रभावी तकनीक है ।
- **दूध-दलिया**
- किसी भी अनाज के आटे का दलिया बनाया जा सकता है किन्तु दलिया बनाते समय, पानी के स्थान पर दूध का प्रयोग करने से दलिया के प्रोटीन एवं कैलोरी मान में वृद्धि होती है ।
- **अंकुरण**
- गेहूँ चना मूंग मोठ आदि को 24 घंटे पानी में भिगोकर रखा जाता है, तत्पश्चात् गीले कपडे में 1 -2 दिन तक फैलाकर रखा जाता है । 1/2 इच के लगभग अकुर निकलने पर भोज्य पदार्थ का उपयोग किया जाता है । अकुरण विधि से भोज्य तत्वों में विटामिन बी एवं सी की मात्रा बढ़ाई जा सकती है ।
- **किण्वन**
- अनाज (चावल) एवं दालों का किण्वन कर उनमें विटामिन बी की मात्रा बढाई जा सकती है।
- **प्रोटीन पाउडर युक्त आहार**
- सोयाबीन मूंगफली चना दाल आदि को पीस लिया जाता है तथा इसको आहार के रूप मे प्रयोग कर प्रोटीन की अधिक मात्रा प्राप्त की जा सकती है ।
- सूखी मछलियों का भी पाउडर काम में लिया जा सकता है तथा विभिन्न भोज्य पदार्थो में मिलाकर उच्च प्रोटीन युक्त आहार की पूर्ति की जा सकती है । प्रोटीन चूर्ण को अनाजों में भी मिलाकर खाया जा सकता है सोयाबीन के आटे को चावल या गेहूँ के आटे के साथ मिलाकर खाने से उच्च पोषण युक्त आहार प्राप्त किया जा सकता है ।
- **सब्जियो का चूर्ण प्रयोग करना**
- हरी पत्तेदार सब्जियों को सुखाकर पाउडर बनाकर अथवा सीधे ही लुगदी बनाकर दलिया अथवा चपाती या चावल में मिलाकर खाया जा सकता है इससे प्रोटीन एव लोहा तत्व की अतिरिक्त मात्रा प्राप्त हो जाती है ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को इस तथ्य पर गौर करना चाहिये कि बहुत से स्थानीय आहार (यथा लापसी सत्तू आदि) पोषणीय मान बढ़ाने में सहायक होते है । अत: ऐसे तरीकों को प्रोत्साहित कर गर्भावस्था, प्रसूतिकाल तथा स्तनपान अवधि में महिला का पोषण स्तर सुधारा जा सकता है।

3.4 भोजन की स्वच्छता

भोजन की स्वच्छता का अभिप्राय भोज्य पदार्थो के उत्पादन स्थल से लेकर आहार ग्रहण करने तक स्वच्छता बनाये रखने से है, चूंकि भोजन की अस्वच्छता अनेक रोगों अथवा संक्रमणों का

कारण बन सकती है अत: भोजन स्वच्छता शृंखला (food clean chain) का पालन किया जाना जरूरी है । जिसके अर्न्तगत खाद्य पदार्थो के उत्पादन, संग्रहण परिवहन, परिरक्षण, पाककला या निर्माण, भोजन परोसने तथा आहार ग्रहण करने तक सभी स्तरो पर भोजन को संदूषण तथा सक्रमणों से मुक्त रखने हेतु स्वच्छता का अधिकतम स्तर बनाये रखने का प्रबन्ध किया जाता है ।

भोजन की स्वच्छता में इन तथ्यों पर ध्यान देना आवश्यक है :-

- खाद्य पदार्थों विशेषकर फल एवं सब्जियों की कृषि में सिंचाई हेतु सीवरेज के दूषित जल का उपयोग नहीं होना चाहिए ।
- भोज्य पदार्थों का परिवहन उपयुक्त तापक्रम पर तथा सुरक्षित पैकिग में किया जाना चाहिए।
- परिरक्षण एवं संग्रहण में संक्रमण तथा संदूषण से बचाव की उचित व्यवस्था होनी चाहिए ।
- कुछ खाद्य पदार्थ जैसे - दूध, मांस, मछली, सब्जियाँ इत्यादि संक्रमण फैलाने के मुख्य उत्तरदायी हैं, अत: इनकी स्वच्छता हेतु विशेष व्यवस्था की जानी चाहिए, कुछ उपाय निम्न प्रकार हैं :-

– रोग ग्रस्त जानवरों का दूध एवं माँस प्रयुक्त नहीं करना चाहिए ।

घरेलू स्तर पर दूध को उबालकर रखना उसे निरापद बनाने का अच्छा साधन है, व्यावसायिक स्तर पर पाश्चुरीकरण के माध्यम से दूध को संरक्षित किया जाना चाहिए ।

- फल एवं सब्जियाँ, ताजे तथा उन्हें अच्छी तरह धोकर ही उपयोग में लेना चाहिए, कटे या सड़े फल-सब्जियों का प्रयोग नहीं करना चाहिए ।
- मछलियों, मांस आदि का ताजा होना आवश्यक है मछलियों का परिरक्षण तथा मांस के बूचडखानों एवं विक्रय स्थलों पर स्वच्छता का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए ।
- सभी खाद्य पदार्थो को मक्खियों, रोग वाहक जीवो से बचाने हेतु ढककर रखा जाना चाहिए ।
- रसोई गृह एवं भोजन संचालनकर्ताओ की साफ-सफाई पर निगरानी रखना जरूरी है, रसोई गृह मे पानी की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए ।
- भोजन परोसने तथा आहार ग्रहण करने में व्यक्तिगत स्वास्थ्य के नियमों का पालन करना चाहिए।
- पोषण शिक्षा में भोजन की सफाई तथा स्वच्छता श्रंखला पर विशेष महत्व दिया जाना चाहिए ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रसूता के घर विशेषकर रसोई का अवलोकन करते रहना चाहिये । अस्वच्छता एवं अस्वास्थ्यप्रद स्थितिया पाई जाने पर उन पर रोक लगाने का प्रयास करना चाहिये । लगातार पोषणीय शिक्षा से प्रसूता के भोजन की स्वच्छता में वृद्वि किया जाना संभव है ।

3.5 आयरन, फॉलिक एसिड, खनिज एव विटामिनों का गर्भावस्था में महत्व

आपने पढ़ा कि गर्भावस्था में लगभग सभी पोषक तत्वों की आवश्यकताऐ बढ जाती हैं । जिसमें आयरन एवं फॉलिक एसिड सहित अन्य खनिज एवं विटामिनों का गर्भावस्था में अतिमहत्वपूर्ण स्थान है । यहाँ इनमें से कुछ के विषय में और अधिक जानकारी दी जा रही है ।

(1) आयरन (लौह तत्व)

यह गर्भावस्था में महत्वपूर्ण खनिज है व निम्न काम आता है -

- **रक्त निर्माण**
- हमारे रक्त में लाल व सफेद कोशिकायें होती हैं । लाल कोशिकाओं में हीमोग्लोबिन नामक पदार्थ होता है जो प्राणवायु आक्सीजन ग्रहण कर शरीर के हर अंग को पहुँचाता है । हीमोग्लोबिन लौह (हीम) व ग्लोबिन से बनता है । ग्लोबिन एक प्रकार का प्रोटीन है । हीमोग्लोबिन के कारण रक्त लाल होता है । शरीर में लौह की कमी के कारण हीमोग्लोबिन की मात्रा कम हो जाती है व इस स्थिति को एनीमिया कहते हैं ।

– गर्भास्थ शिशु के रक्त निर्माण

– एन्जाइम निर्माण

- **लौह की कमी**
- इससे रक्त अल्पता अर्थात एनीमिया होता है । एनीमिया के मुख्य तीन स्तर होते हैं । अति व मध्य तीव्रता के एनीमिया से माता व शिशु दोनों की जान को खतरा रहता है । एनीमिया के कारण माता में कमजोरी, काम करने की शक्ति नष्ट होना, सूजन, प्रसवकाल में रक्तस्त्राव सदमा अधिक होना, संक्रमण, कमजोर व समयपूर्व शिशु जन्म इत्यादि अनेक समस्यायें होती हैं । शिशु द्वारा माता के रक्त से लौह अवशोषित होने के कारण एनीमिया की तीव्रता गर्भावस्था में बढ जाती है । एनीमिक माता का बालक भी एनीमिक हो जाता है।

चित्र : प्रतिदिन आयरन, फॉलिक एसिड की गोलियां लेना

आयरन के स्त्रोत

– **शाकाहारी**

- अंकुरित अनाज व दालें, सोयाबीन, उड़द, रागी, बाजरा, गेहूँ
- पत्तेदार हरी सब्जियाँ जैसे चौलाई, पालक, सरसों का साग, पत्ता, गोभी, पुदीना
- अन्य सब्जियाँ जैसे आलू टमाटर, बैंगन, गाजर, चुकंदर
- गुड़, सूखे मेवे, खजूर, किशमिश इत्यादि

– **मांसाहारी**

- मांस, मछली, कलेजी, चिकन

2. कैल्शियम यम

यह हमारे शरीर का आवश्यक खनिज है व निम्न काम आता है :-

- कैल्सियम यानि चूना हमारी अस्थियों व दातों में मौजूद होता है । यह इनके निर्माण, मजबूती व रखरखाव हेतु आवश्यक तत्व है ।
- अन्य सामान्य क्रियाएं जैसे हृदय गति, रक्तजमाव, मांसपेशी, संकुचन, तन्त्रिका की संवेदनशीलता आदि में कैल्सियम आवश्यक होता है ।
- शिशु विकास में भी कैल्सियम, आवश्यक होता है । चौथे महीने में शिशु की अस्थियों व दाँतों की नींव पड़ती है इस कारण इसकी आवश्यकता बढ जाती है। कैल्सियम के साथ फासफोरस खनिज भी आवश्यक होता है।
- **कैल्सियम की कमी**

इसके फलस्वरूप बालकों में रिकेट्स (Rickets) व माताओं में अस्थिमद्दता यानि ओस्टीयोमलेशिया नामक बीमारियाँ होती हैं जिसमें शरीर के विभिन्न भाग की अस्थियाँ नरम व कमजोर पड़ने के कारण मुड़ जाती हैं । शरीर का ढाँचा बिगड़ता व झुकता है । माँस पेशियों में अनियमित संकुचन व बायटें आते हैं ।

कैल्सियम के स्त्रोत

- दूध यहं सबसे महत्वपूर्ण स्त्रोत है । एक लीटर दूध में लगभग 1000 मिलीग्राम कैल्सियम होता है ।
- सब्जियाँ जैसे टमाटर, गाजर, आँवला, नींबू
- फल जैसे सीताफल, सेव, सूखे मेवा
- अन्य जैसे तिल, दालें, रागी, बाजरा, मछली इत्यादि

3. फोलिक एसिड

यह हमारे शरीर में निम्नक्रियाओ में काम आता है -

– रक्त निर्माण
– कोशिका निर्माण
– भ्रूण विकास

फोलिक एसिड की कमी

- इसकी कमी से एनीमिया होता है । इस प्रकार का एनीमिया सिर्फ आयरन लेने से ठीक नहीं होता है। इसलिये गर्भावस्था में आयरन की गोली के साथ फोलिक एसिड मिलाया जाता है । इसकी कमी से बार बार स्वत: गर्भपात, प्रीमेव्योर शिशु जन्म, कमजोर शिशु इत्यादि होते हैं । कभी कभी इसकी कमी से भ्रूण विकास विकृत हो जाता है ।
- **फोलिक एसिड के स्त्रोत**
- यह शाकाहारी पदार्थो में पाया जाता हैं व उनमें इसकी मात्रा भी बहुत कम होती है । जैसे पत्तेदार हरी सब्जियाँ, मटर, सन्तरे इत्यादि जबकि माँसाहारी पदार्थो में यह लीवर, गुर्दा, अण्डे आदि में पाया जाता है ।
- **मैग्नीशियम**
- मैग्नीशियम विशेष रूप से मस्तिष्क, सुषुम्ना रन्तु (Spinal cord) तथा सभी तन्त्रिकाओं के सामान्य रूप से कार्य करने के लिए आवश्यक है । इसकी कमी से गर्भावस्था में महिला को नींद नहीं आती है, वह जरा- सा शोर सुनकर उछल जाती है, हाँथ पैर काँपने लगते हैं एवं उसका दिल घबराने लगता है । गर्भावस्था में 1 ग्राम मैग्नीशियम की प्रतिदिन-आवश्यकता होती है ।
- **मैग्नीशियम के स्त्रोत**
- मैग्नीशियम दूध, अण्डा, पनीर, हरी सब्जियों में तथा सबसे अधिक केले में पाया जाता है ।
- विटामिनों का महत्व, कार्य, स्त्रोत पोषणीय आवश्यकता तथा कमी के प्रभावों के बारे में जानकारी हेतु प्रथम पाठ्यक्रम की पांचवी इकाई सैदर्भित करें ।

3.6 पोषणीय कमी: गर्भावस्था एवं शिशु पर प्रभाव

माँ के पोषण संबंधी स्तर का प्रभाव उसकी प्रजनन क्षमता पर पड़ता है विशेषकर बच्चे पर । महिला स्वस्थ होती है तथा संतुलित आहार खाती है तो वह गर्भावस्था अच्छी तरह बिताकर एक स्वस्थ तथा सामान्य बच्चे को जन्म देती हैं दूसरी ओर यदि माँ पोषणीय कमी से ग्रस्त होती है तो उसके लिए हमें खराब स्वास्थ्य तथा माँ और बच्चे की मृत्यु के रूप में भारी कीमत चुकानी पड़ सकती

हम जानते है कि मातृ कुपोषण तथा बच्चे के जन्म के समय अल्प वजन का आपस में संबंध है। 2.5 किलोग्राम से कम वजन के नवजात शिशु, कम आय वर्ग में पाए जाते है क्योंकि उनमें ही कुपोषण अधिक पाया जाता है । सामान्य वजन के पैदा होने वाले शिशुओं की अपेक्षा कम वजन वाले शिशुओं में मृत्यु की अधिक संभावना होती है । मृत्यु दर अधिक होने के साथ साथ जन्म के समय अल्प वजन वाले बच्चों में संक्रमण अधिक होने की संभावना हो सकती है ।

- मस्तिष्क की कोशिकाएँ कम हो सकती हैं ।
- विकास दर कम हो सकती है ।
- मंदबुद्धि होने की संभावना अधिक हो सकती है ।

माँ में विशिष्ट पोषक तत्वों जैसे लौह तत्व, फोलिक अप्ल की कमी के कारण भी जन्म के समय अल्प वजन हो सकता है ।

इसी प्रकार गर्भवती महिलाओं में रकताल्पता (एनीमिया) अधिक पाई जाती है । गंभीर एनीमिया के कारण समय पूर्व प्रसव (गर्भावस्था के 37 सप्ताह से पहले प्रसव) तथा जन्म के समय अल्पवजन हो सकता है । माँ के लिए भी खतरा हो सकता है । एनीमिया से पीड़ित गर्भवती महिलाओं की प्रसव के समय मृत्यु भी अधिक होती है ।

कुपोषण के परिणाम स्वरूप निम्नलिखित रोग हो सकते हैं । जैसे :

- क्वाशिओर्कर
- सूखा रोग (मैरसमस)
- जीरोफ्यैल्मिया
- पोषणीय रक्ताल्पता
- गलगण्ड (गाइटर) इत्यादि ।

अत: पोषणीय कमी से निम्नलिखित प्रभाव माता एवं शिशुओ मे देखने को मिल सकते हैं -

- विटामिनों एवं खनिज तत्वों की कमी से होने वाले विभिन्न रोग ।
- मातृ मृत्यु, शिशु मृत्यु दर अधिक होना ।
- जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy) कम होना ।
- व्यक्तियो की उत्पादकता दर कम होना ।
- राष्ट्र के स्वास्थ्य स्तर में गिरावट अथवा 'स्वस्थ नागरिक-स्वस्थ राष्ट्र' की अवधारणा को ठेस पहुँचना ।

  विटामिनों का महत्व, कार्य स्त्रोत पोषणीय आवश्यकता तथा कमी के प्रभावों के बारे में जानकारी हेतु प्रथम पाठ्यक्रम की पांचवी इकाई संदर्भित करें ।

3.7 सारांश

जन्म के समय शिशु के वजन तथा उसके बाद के विकास पर मातृ पोषण संबंधी स्तर का बहुत प्रभाव पड़ता है । अधिकांश भारतीय गर्भवती महिलाएँ कम वजन तथा छोटे कद वाली होती हैं तथा गर्भावस्था के दौरान उनका वजन उतना नहीं बढता जितना बदला चाहिए । परिणाम स्वरूप गर्भवती महिलाओं में पोषण की कमियों से सबन्धित बीमारियो के कारण मातृ मृत्युएं होती हैं । गर्भवती महिलाओं के पोषण स्तर में सुधार लाने के लिए आहार संबंधी अनुपूरकों के अलावा उचित प्रसव पूर्व देखभाल की आवश्यकता है विशेषकर उन महिलाओं की जो अधिक खतरे की श्रेणी मे आती हैं । इस प्रकार इस इकाई में हमने प्रसूति विज्ञान सहायिका के लिए गर्भावस्था एवं प्रसूतिकाल तथा स्तनपान अवस्था में पोषण सम्बन्धी विभिन्न तथ्यों का महत्व बताने का प्रयास किया है ।

3.8 प्रश्न

1. बताइए कि निम्नलिखित कथन सही है या नहीं ।

   (क) स्त्री के शरीर में भूण की वृद्धि प्लेसेन्टा नामक अंग में होती है । (सही/गलत)

   (ख) भूण सभी आवश्यक पोषक तत्व माँ के भोजन से प्राप्त करता है । (सही/गलत)

   (ग) गर्भावस्था के दौरान रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा बढ जाती है । (सही/गलत)

(घ) एक ऐसी स्त्री जिसका वजन गर्भावस्था मे 7 किग्रा बढता है, उसके द्वारा एक स्वस्थ बच्चे को जन्म देने की संभावना होती है । (सही/गलत)

(ङ) गर्भावस्था के दौरान भ्रूण में विटामिन ए का काफी भंडार जमा हो जाता है । (सही/गलत)

(च) गर्भावस्था के पहले त्रिमास से ही कैलोरी तथा प्रोटीन की आवश्यकताएं बढ़ जाती हैं। (सही/गलत)

(छ) गर्भावस्था में विटामिन बी की आवश्यकता नहीं बढ़ती है । (सही/गलत)

(ज) गर्भावस्था के विभिन्न चरण (अर्थात् तीनों त्रिमास) पोषक तत्वों की आवश्यकता को प्रभावित करते हैं । (सही/गलत)

2. गर्भावस्था में विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता क्यों बढ़ जाती है, स्पष्ट कीजिए ।
3. गर्भावस्था के दौरान स्त्री के आहार में किए जाने वाले किन्हीं चार परिवर्तनो की सूची बनाएँ।
4. रिक्त स्थान भरें :-

(क) गर्भावस्था के दौरान.................... में भरपूर खाद्य पदार्थ खाने से सुबह-सुबह होने वाली परेशानी से बचा जा सकता है ।

(ख) .... तथा..................... का सम्मिश्रण अच्छी कोटि की प्रोटीन प्रदान करता है।

(ग) एक गर्भवती स्त्री को .... तथा ....की प्रचुरता वाले खाद्य पदार्थ खाने चाहिए ।

(घ) गर्भावस्था के दौरान .... मात्रा में किंतु ....आहार दिये जाने चाहिए ।

(ङ) गर्भावस्था के दौरान भारीपन को दूर करने के लिए ....युक्त तथा खाद्य पदार्थ खाने से बचें ।

5. निम्न रिक्त स्थानों को भरें :

(क) निम्न आय वर्ग की भारतीय गर्भवती महिलाओं को वजन.................. केवल बढ़ता है।

(ख) मातृ कुपोषण का अर्थ है .... का कुपोषण ।

(ग) गर्भावास्था के दौरान सामान्य महिला का .... किलोग्राम वजन बढता है ।

(घ) गर्भावस्था के दौरान .... किलोग्राम से कम शारीरिक वजन खतरे का घटक है ।

6. गर्भवती महिलाओं की उन स्थितियों की सूची बनाएँ जो शिशुओ के जन्म के समय के वजन को प्रभावित कर सकती
7. गर्भावस्था के दौरान चार मुख्य खतरे वाले कारकों के नाम बताएँ ।
8. "आवश्यकता' ' व पोषण तत्वों की ' 'प्रस्तावित दैनिक मात्राओं" में आपसी अंतर बताइए ।
9. भोजन की स्वच्छता का गर्भावस्था मे क्या महत्व है? -
10. आयरन एवं फॉलिक एसिड के कार्य एव स्त्रोतों का वर्णन करें ।
11. प्रसूति विज्ञान सहायिका की पोषण सम्बन्धी जिम्मेवारियों का वर्णन कीजिये ।

ब्लॉंक - II

इकाई- 4 पर्यावरण एवं प्रसूति स्वास्थ्य

इकाई - 5 परिवार कल्याण एव नियोजन

इकाई - 6 स्वास्थ्य सांख्यिकी

इकाई-4 पर्यावरण एवं प्रसूति स्वास्थ्य

इकाई की रूपरेखा

4.0 प्रस्तावना

4.1 उद्देश्य

4.2 पर्यावरण : परिभाषा एवं घटक

4.2.1 भौतिक पर्यावरण

4.2.2 जैविक पर्यावरण

4.2.3 सामाजिक पर्यावरण

4.3 संक्रामक रोग तथा उनसे बचाव के सामान्य उपाय

4.3.1 संक्रामक रोगों का वर्गीकरण

4.3.2 बचाव के उपाय

4.4 संक्रामक रोगों की सूचना देना

4.5 जल-आपूर्ति एवं जल की स्वच्छता

4.5.1 जल की स्वच्छता

4.5.2 जल-आपूर्ति के स्त्रोत

4.6 आवास, संवातन, तापक्रम एवं प्रसूति स्वास्थ्य

4.6.1 आवास एवं संवातन

4.6.2 तापक्रम

4.6.3 प्रकाश

4.7 अपशिष्ट पदार्थो का निस्तारण

4.7.1 निस्तारण की विधियॉ

4.8 सारांश

4.9 बोध प्रश्न

4.0 प्रस्तावना

इस इकाई की अध्ययन सामग्री प्रसूता के स्वास्थ्य का पर्यावरण से संबन्ध को दर्शाती है जिसके कारण पर्यावरण के विभिन्न घटकों को संतुलित रूप से आत्मसात करने से विभिन्न संक्रामक रोगों से बचाव तथा प्रसूता के स्वास्थ्य लाभ करने में मदद मिलती है ।जैसे-

– पर्यावरण एव प्रसूति स्वास्थ्य के सम्बन्ध से सुखी परिवार बनाया जा सकता है ।
– विभिन्न संक्रामक रोगों के बचाव एवं नियन्त्रण मे सहायता मिलती है ।
– संक्रामक रोगों को महामारी मे परिवर्तित होने से रोका जा सकता है ।
– जल की स्वच्छता एवं जल आपूर्ति के कारण जल से होने वाली विभिन्न बीमारियों से बचाव किया जा सकता है ।

- प्रसूति स्वास्थ्य का आवास, संवातन, तापक्रम प्रकाश से सम्बन्ध एवं इनकी उपयोगिता की जानकारी होना ।
- व्यर्थ / विशिष्ट पदार्थों के निस्तारण की विधियों के बारे में जानकारी होना । इन्हीं सब बिन्दुओं को इस इकाई में सम्मिलित किया गया है ।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के बाद प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं को पर्यावरण एवं प्रसूति स्वास्थ्य के आपसी सबन्धों के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकेगी । प्रसूता की देखभाल करते समय प्रसूति विज्ञान सहायिकाएं पर्यावरण के विभिन्न घटकों की वास्तविक जानकारी रखते हुए उनका सही सदुपयोग कर सकती हैं जिससे प्रसूति का स्वास्थ्य सामान्य बनाएँ रखने में मदद मिलती है । इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् वे निम्न बिन्दु सीख पायेंगी -

1. पर्यावरण की परिभाषा एवं उसके विभिन्न घटक ।
2. विभिन्न संक्रामक रोग तथा उनसे बचाव के सामान्य उपाय ।
3. संक्रामक रोगों की सूचना हेतु महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता / पटवारी आदि को जानकारी देना।
4. जल आपूर्ति जल की स्वच्छता ।
5. आवास, संवातन, तापक्रम, प्रकाश आदि एवं प्रसूति स्वास्थ्य ।
6. व्यर्थ / अपशिष्ट पदार्थों के निस्तारण की विभिन्न विधियों के बारे में जानकारी प्राप्त होना।

4.2 पर्यावरण: परिभाषा एवं घटक

परिभाषा: पर्यावरण शब्द परि+आवरण से बना है । अर्थात, जो हमें चारों ओर से घेरे हुए है, वह हमारा पर्यावरण है । पर्यावरण के प्रत्येक वर्ग की अपनी शक्तियाँ, प्रक्रियाएँ व अवयव होते है । अर्थात् पर्यावरण वह परिवृत्ति (Set of Surrounding) है जो हमें चारो ओर से घेरे हुए है । इस परिवृत्ति में मनुष्य के चारों ओर के तथ्य (Facts), वस्तुएं (Object), स्थितियाँ (Situations) आदि सम्मिलित है

घटक : पर्यावरण को तीन घटकों में विभाजित किया जा सकता है -

(1) भौतिक या प्राकृतिक पर्यावरण

(2) जैविक पर्यावरण

(3) सामाजिक पर्यावरण

4.2.1 भौतिक पर्यावरण

वे भौतिक शक्तियाँ जिनके सम्पर्क में मनुष्य प्रतिदिन आता है और जो उसके विकास, स्वास्थ्य तथा आयु पर प्रभाव डाल सकती हैं । अर्थात् वायु भोजन, जल, मकान, व्यवसाय, मौसम, जलवायु आदि भौतिक पर्यावरण में सम्मिलित किये जा सकते हैं ।

4.2.2 जैविक पर्यावरण

इसमें अन्य मनुष्यों, पशुओं, कीड़ों, परजीवियों व सूक्ष्म जीवों से सम्पर्क तथा पोषाहार का स्तर इत्यादि आते हैं ।

4.2.3 सामाजिक पर्यावरण

इसमें ऐसे कारक तथा परिस्थितियाँ सम्मिलित रहती है जो कि सांस्कृतिक मूल्य, प्रथाओं, आदतों, विश्वास, अभिवृत्तियों (Attitudes), आर्थिक स्थिति, धर्म तथा जीवन स्तर आदि से सम्बन्धित होती हैं ।

4.3 संक्रामक रोग तथा उनसे बचाव के सामान्य उपाय

संक्रामक रोग एक ऐसी अस्वस्थता है जो किसी संक्रमणशील रोगजनक (Pathogen) अथवा उसके विषैले उत्पादों के कारण उत्पन्न होती हैं रोग जनक कारक व्यक्ति में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष तरीकों से संचालित होते हैं ।

4.3.1 संक्रामक रोगों का वर्गीकरण

संक्रामक रोगों को कई प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है कुछ मुख्य वर्गीकरण निम्न हैं -

1. संक्रामक स्थल के आधार पर (According to Place of Infection)

– समुदाय जनित संक्रामक रोग
– चिकित्सालय जनित संक्रामक रोग

2. संक्रामक कारक के आधार पर (According to Infectious agent)

– जीवाणु संक्रमण
– वाइरल संक्रमण
– फंगल संक्रमण
– प्रोटोजोअल संक्रमण
– कृंतक या रैबीज संक्रमण
– रिकेट्सिअल संक्रमण
– माइको प्लाज्मा संक्रमण

3. संक्रमण के संचरण के आधार पर (According to transmission of Infection)

– श्वसनीय संक्रमण (क्षय रोग, मीजल्स)
– आहारीय संक्रमण (हैजा, पोलियो)
– रोग वाहक द्वारा फैलने वाले रोग (प्लेग)
– रोगाणु आरोपण से संचालित रोग (कुष्ठ, यौन रोग)

4.3.2 बचाव के उपाय

संक्रामक रोगों के बचाव के सामान्य उपायों को निम्नानुसार वर्णित किया जा सकता है -

(अ) निगरानी (survevillance) ।

(ब) संक्रमण के स्त्रोत या संग्रह पर नियन्त्रण करना ।

(स) संचरण के मार्ग अवरूद्ध करना ।

(द) प्रवणशील (Susceptible) जनसंख्या को सुरक्षा प्रदान करना ।

(य) सामाजिक रोग निरोधन (socisl prophylaxis) ।

(र) स्वास्थ्य शिक्षा

(अ) निगरानी (survevillance)

- इसका मुख्य उद्देश्य संक्रामक रोगो से बचाव अथवा सुरक्षा करना है इसके मुख्य भाग हैं
- संक्रमण के स्त्रोत एवं संचरण का मार्ग ज्ञात करना ।
- संक्रमित रोगियों. संवेदनशील (प्रवणशील) पोषकों, एवं सम्पर्को को चिन्हित करना,
- रोग निरोधक के उपायों का मूल्यांकन करना ।

(ब) संक्रमण के स्त्रोत या संग्रह पर नियंत्रण करना

इसका उद्देश्य संक्रमण के स्त्रोत या संग्रह का पता लगाकर रोग के प्रसार पर नियन्त्रण पाना है इसमें निम्न उपाय शामिल हैं -

शीघ्रनिदान (Early dignosis) :- रोग के उपचार, जानपदिक रोग परीक्षणों, रोग के वितरण, समय तथा रोग से बचाव हेतु संक्रामक रोग का तत्काल निदान करना आवश्यक है।

पृथक्करण (Isolation) :- इसका उद्देश्य रोग का समुदाय में स्थानान्तरण रोकना है । संक्रमण की अवधि तक रोगी को अन्य व्यक्तियों से अलग रखना ही पृथक्करण है ।

उपचार (Treatment) - इसमें संक्राक्क रोगों का उपयुक्त औषधियों से शीघ्र उपचार करना शामिल है संक्रामक रोगों का उपचार, व्यक्तिगत स्तर पर अथवा जनसमुदाय स्तर पर किया जा सकता है । उपचार से संचरण पर प्रभावी रोक लगायी जा सकती है ।

विसंक्रमण (Disinfection) - संक्रमित रोगी के मल, मूत्र, थूक, रक्त शरीर द्रवों (Body Fluids) तथा अन्य संदूषित वस्तुओं का उपयुक्त विसंक्रमण, रोगों के फैलाव को रोकता है।

(स) संचरण के मार्ग अवरूद्ध करना

संक्रामक रोग शृंखला की निम्न कडियां (Chain)हैं इनमें से किसी एक को तोड़कर संक्रमण के फैलाव पर रोक लगाई जा सकती है ।

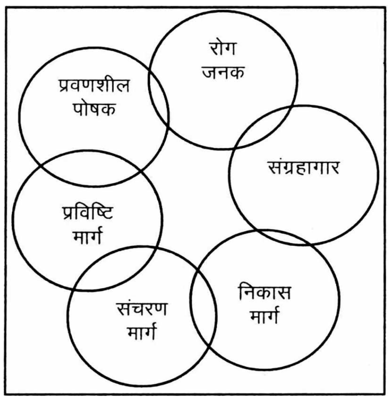

चित्र : कंक्रामक रोग श्रृंखला

संक्रामक रोग शृंखला का विवरण निम्न प्रकार है.

1. रोगजनक (Causative or infections agent)

– बैक्टीरिया
– वाइरस
– प्रोटोजोआ
– फंगल
– रिकैट्सिअल
– कृमि

2. संग्रहागार

– मानव
– पशु
– पर्यावरण

3. निकास मार्ग

– श्वसन मार्ग
– आत्र मार्ग
– शरीर के अन्य तंत्र
– कुत्तों, मच्छरों, कृन्तकों आदि का काटना

4. संचरण मार्ग

– प्रत्यक्ष
– अप्रत्यक्ष

5. प्रविष्टि मार्ग

– संग्रह स्थल से जीवाणुओं के बाहर आने के मार्गो से ही संक्रामक की प्रविष्टि भी सम्भव है।

6. प्रबणशील पोषक

– व्यक्ति की आयु, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य तथा पोषण का स्तर
– जीवाणुओं की संख्या
– लिम्फोसाइट्स की संख्या तथा कार्य सामर्थ्य
– रक्तोत्पत्ति विषयक (Hematopoietic) कारक
– जीवाणुओं के सम्पर्क में आने की अवधि ।

इसी प्रकार फोमाइट्स (Fomites) खाद्य पदार्थ (Food Stuffs), अँगुलियाँ (fingers), मक्खियाँ (Flies), मल (faeces) अर्थात 5F द्वारा प्रसारित संक्रमणों पर रोक लगाकर, संक्रामक रोगों की प्रभावी रोकथाम सम्भव है ।

(द) प्रवणशील (Susceotible) जनसंख्या को सुरक्षा प्रदान करना -

इसका उद्देश्य संवेदनशील, कमजोर अथवा रोग से ग्रस्त होने की आशंका वाले व्यक्तियों को सुरक्षा कवच प्रदान करना है, इसमें शामिल हैं ।

– टीकाकरण अथवा सक्रिय प्रतिरक्षण के द्वारा व्यक्तियों की प्रतरोधक क्षमता बढ़ाना या रोग की आशंका अथवा स्थिति में प्रतिसीरम के रूप में तैयार प्रतिरक्षी प्रदान करना ।

- रोग निवारण चिकित्सा (Chemoprophylaxis) से व्यक्ति की संक्रामक रोगों से सुरक्षा प्रदान करना ।
- स्वास्थ्य शिक्षा द्वारा जन सहयोग प्राप्त करना ।

(य) सामाजिक रोग निरोधक (Social Prophylaxis)

इनमे वे सभी सामान्य तथा अप्रत्यक्ष उपाय शामिल हैं जिनके द्वारा संक्रामक रोगों पर प्रभावी नियंत्रण पाया जा सकता है

- संक्रामक रोगों से जुडे अंधविश्वासों को दूर करना
- स्वच्छ जलापूर्ति एव उत्तम निकासी व्यवस्था
- पोषण स्तर मे सुधार करना एवं सामुदायिक स्वच्छता पर ध्यान देना
- व्यक्तिगत स्वास्थ्य एव स्वच्छता का स्तर बढाना
- शिक्षण स्तर, विशेषकर महिला शिक्षा को बढावा देना
- प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल में संक्रामक रोगों की रोकथाम पर विशेष ध्यान देना
- संवैधानिक प्रावधानों तथा कानूनों का सहारा लेकर संक्रामक रोग श्रृंखला पर प्रहार करना
- संक्रामक रोग बचाव एवं नियन्त्रण कार्यक्रमों का बेहतर संचालक तथा इस हेतु समुचित बजट उपलब्ध कराना

(र) स्वास्थ्य शिक्षा

संक्रामक रोगों से जुडे उपरोक्त सभी बिन्दुओं पर, जनसामान्य को शिक्षित किये बिना संक्रामक रोगों से बचाव एवं उन पर नियन्त्रण पाना कठिन है अत: जनसंचार माध्यमों का सही प्रयोग, प्राथमिक शिक्षा से ही रोग बचाव का अध्ययन तथा निगरानी में जन सहभागिता से ही संक्रामक रोगों में प्रभावी कमी की जा सकती है ।

4.4 संक्रामक रोगों की सूचना देना

अधिसूचना का उद्देश्य संक्रमण के फैलाव पर नियंत्रण हेतु कार्यवाही करना है । प्रत्येक देश अपने स्तर पर कुछ रोगों को अधिसूचित करता है । संक्रामक रोगों का पता लगते ही स्वास्थ्य तथा प्रशासनिक अधिकारियों तक तत्काल सूचना पंहुचाने हेतु सबंधित व्यक्ति को उत्तरदायी बनाया जाता है । समय पर अधिसूचना से रोग महामारी बनने से पूर्व ही नियन्त्रित किया जा सकता है । रोग की सूचना देने मे स्वास्थ्य कर्मियों के अतिरिक्त स्थानीय निकाय, शिक्षक, पटवारी, ग्रामसेवक, स्थानीय व्यक्ति आदि की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है । प्रसूति विज्ञान सहायिका को इस विषय मे अत्यन्त सतर्क रहना चाहिये तथा अपने गांव या कार्यक्षेत्र में किसी भी रोग के एक दम फैलाव होने अथवा असामान्य स्थितियां होने पर सरकारी तंत्र को जानकारी देनी चाहिये । विशेष रूप से क्षेत्र में तैनात ए.एन.एम. /पटवारी / ग्राम सेवक को रोग के फैलने की तत्काल सूचना देनी चाहिये ।

रोगी का नाम और पता, आयु लिंग, निदान, लक्षण प्रारम्भ होने की तारीख और अब तक किये गये उपाय, ये सब अधिसूचना में शामिल होने चाहिए । अधिसूचना वाले रोगों की सूची अलग अलग स्थान पर अलग होती है । सामान्यत: इसमे जन स्वास्थ्य के महत्व वाले रोग शामिल किये जाते हैं ।

4.5 जल आपूर्ति एवं जल की स्वच्छता

जल, जीवन का मूलभूत आवश्यक तत्व है, बिना जल के जीवन की कल्पना असंभव है किन्तु मानवीय उपयोग हेतु जल शुद्ध एवं स्वच्छ होने के साथ स्वास्थ्यवर्द्धक भी होना चाहिए ।

4.5.1 स्वच्छ एवं स्वास्थ्यवर्द्धक जल में निम्न विशेषताएँ होनी चाहिए:

- जल रोगोत्पादक कारकों (Pathogenic Agents) से मुक्त होना चाहिए ।
- यह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक रासायनिक पदार्थो से मुक्त हो ।
- स्वाद में अच्छा लगे अर्थात् इसकी गंध प्रीतिकर, रंग एव तापमान उपयुक्त हो, तथा
- यह घरेलू कार्यो में उपयोग किया जा सके ।

यहां यह स्पष्ट करना जरूरी है कि मानवीय उपयोग में पेयजल, रसोई कार्य, व्यक्तिगत स्वच्छता (स्नान, आदि) की आवश्यकता का जल सम्मिलित है किन्तु पेयजल एवं रसोई कार्यो के लिए प्रयुक्त किया जाने वाला जल पेयता (Potable) की कसौटी पर भी खरा उतरना चाहिए । उपरोक्त मापदंडों की पूर्ति न करने वाला जल प्रदूषित माना जाता है तथा इसको मानवीय उपयोग में प्रयुक्त करना खतरनाक हो सकता है ।

व्यक्तिगत तथा परिवेशगत स्वारथ्य के लिए पर्याप्त जल आपूर्ति की आवश्यकता होती है । जल आपूर्ति के सबंध में निम्न लक्ष्य निर्धारित किए हैं :-

- समुदाय के सारे स्थानों पर नल का पानी उपलब्ध होना चाहिए ।
- जल का दबाव हर समय बना रहना चाहिये ।
- सभी कार्यो के लिए पर्याप्त मात्रा में जल प्रदान किया जाना चाहिए ।
- पीने के जल के गुण का स्तर निश्चित तथा लागू किया जाना चाहिये ।
- जल के स्त्रोतों को दूषित होने से बचाया जावे ।
- सही प्रबंध के अनुसार जल योजनाओं का स्वतन्त्र रूप से संचालन होना चाहिए ।
- जल आपूर्ति के स्तर का निरीक्षण किया जाना चाहिये ।

4.5.2 जलपूर्ति के स्त्रोत

जल के तीन मुख्य स्त्रोत हैं :-

(1) वर्षा का जल

(2) पृथ्वी की सतह पर जल (अ) कृत्रिम झीलें
(ब) नदी, नाले
(स) पोखर और तालाब

(3) भूमिगत जल (अ) उथले कुएं
(ब) गहरे कुएं
(स) झरने

निम्नलिखित तरीकों से सुरक्षित रूप से जल की आपूर्ति की जा सकती है :-

- गहरे कुए में हैंड-पंप लगाना (इंडिया मार्क II और इंडिया मार्क III हैण्ड पम्प)

– सीधा कार्य करने वाला पंप (डायरेक्ट ऐकशन पंप / तारापंप लगाना)
– स्वच्छ कुएं
– खुले कुओ को क्लोरीन डालने वाले बर्तन (पॉट क्लोरीनेटर) से साफ करना या उनका संक्रमण
– दूर करना ।
– घर मे रखे जाने वाले घड़ों या मटको को क्लोरीनयुक्त करना (क्लोरीन डालना)

इस हेतु कुछ उपायों अर्थात् फिटकरी का प्रयोग, जल को उबालना आदि का घरेलू स्तर पर प्रयोग किया जा सकता है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को इस तथ्य पर ध्यान देना आवश्यक है कि जल की अस्वच्छता अनेक जल जनित बीमारियों का कारण है । प्रसूति स्वास्थ्य हेतु जल की उपयुक्त मात्रा तथा उसका सुरक्षित होना जरूरी है ।

4.6 आवास, संवातन, तापक्रम आदि एवं प्रसूति स्वास्थ्य

आवास, संवातन, तापमान, प्रकाश आदि का प्रसूति के स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है । यदि प्रसूता शारीरिक स्वच्छता के साथ वातावरणीय पर्यावरण स्वच्छता का भी ध्यान रखा जाता है तो प्रसूता एवं शिशु दोनों का स्वास्थ्य अच्छा व निरोग होता है तथा प्रसूतिकावस्था की जटिलताएँ नहीं होती हैं ।

आवास एवं संवातन

आवास से तात्पर्य आश्रय देने वाला "भौतिक ढाँचा" मात्र ही नहीं है । उसमें प्रसूता और परिवार के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक कल्याण के लिए आवश्यक समस्त जरूरी सुविधायें, सेवाऐं, उपकरण और साधन भी शामिल हैं ।

आवास द्वारा निम्नलिखित आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिये ।

(i) **भौतिक आवश्यकतायें :** इसमें सम्मिलित हैं - उपयुक्त ऊष्म वातावरण, शुद्ध वायु, सचुचित प्रकाश और संवातन, 40-50 डेसीबिल से कम शोर सार और विश्राम, मनोरंजन तथा व्यायाम की सुविधाऐं ।

(ii) **मनोवैज्ञानिक आवश्यकतायें :** उपयुक्त स्वच्छता और पारिवारिक जीवन के लिए एकान्त अत्यंत आवश्यक है ।

(iii) **स्वास्थ्य आवश्यकतायें :** स्वच्छ और समुचित जल आपूर्ति, मल और अन्य गंदगी के सुरक्षित निपटारे की सुविधायें, नहाने धोने की सुविधा, भोजन तैयार करने, पकाने और संग्रह की सुविधायें तथा कीड़ो, कृन्तकों और कीटों से मुक्ति ।

(iv) **सुरक्षात्मक आवश्यकतायें :** दुर्घटनायें. आग, गैस और अन्य खतरों के दृष्टिकोण से सुरक्षित होना चाहिए ।

(v) **संवातन :** कमरे के बाहर व भीतर की हवा की अदला-बदली । इसमें भीतर की स्थिर और दूषित हवा का स्थान बाहर की ताजी हवा ले लेती है । संवातन में वायु, तापमान, आर्द्रता, वेग और शुद्धता भी शामिल है ।

संवातन के दो प्रकार हैं :-

प्राकृतिक संवातन : यह कार्य प्रकृति में क्रियाशील कुछ शक्तियों द्वारा होता है जैसे वायु फैलाव और तापमान । प्राकृतिक संवातन मुख्यत: खिडकी और दरवाजों से “पारगामी संवातन” (Cross Ventilation) उपलब्ध होता है ।

कृत्रिम संवातन: इसके निम्न प्रकार हो सकते हैं :-

- निर्वातक संवातक (Exhaust Ventilation)
- पूर्ण संवातक (Plenum Ventilation)
- संतुलित संवातन (Balanced Ventilation)
- वातानुकूलन (Air Conditioning)

4.6.2 तापक्रम

तापक्रम का व्यक्ति के स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है । प्रसूता के स्वास्थ्य हेतु कमरे का तापमान उपयुक्त होना जरूरी है । कमरों मे यदि ताजी हवा नही आती है तो कमरे की हवा धीरे धीरे दूषित हो जाती है । ऐसी स्थिति में कमरे में बैचेनी महसूस होती है । कमरे में हवा के रासायनिक परिवर्तन के साथ में भौतिक परिवर्तन भी सम्मिलित हैं । ये है: -

- **तापमान में वृद्धि**: मनुष्य की शरीर से निकलने वाली गर्मी से हवा का तापमान बढता है ।
- **आर्दता में वृद्धि** :आर्द्रता का अर्थ है नमी । श्वसन और पसीने के द्वारा मनुष्य के शरीर से नमी बाहर निकलती है।
- **वायु की हलचल में कमी :** भीड़ के कारण हवा कीं हलचल में बाधा पहुँचती है ।
- **शरीर की गंध:** मनुष्य के शरीर से अप्रिय गंध निकलती है, जैसे - पसीने की गंध ।
- **जीवाणु प्रदूषण :** नाक, मुँह, गले और श्वसन पथ से जीवाणु बाहर निकलते रहते हैं ।

अत: प्रभावी तापमान का अर्थ उस तापमान से है जो चैन या बैचेनी उत्पन्न करता है । शारीरिक आराम के तापीय मानक निम्नानुसार हैं :-

स्थितियां	**प्रभावी तापमान (सेंटीग्रेड में)**
सुखद एवं शीतल	20 डिग्री
आरामदेह एवं शीतल	21 से 24 डिग्री
आरामदेह	25 से 27 डिग्री
गरम	27 डिग्री +

प्रसूता के स्वारथ्य हेतु तापीय आराम की अवस्था होनी आवश्यक है

4.6.3 प्रकाश

- कमरे में पर्याप्त प्रकाश होना चाहिये जिससे काम करते समय नेत्रों पर जोर न पडे ।
- कमरे में प्रकाश का वितरण समान होना चाहिये ।
- प्रकाश अत्यधिक चमक या चकाचौंध पूर्ण नही होना चाहिये, इससे नेत्रों को क्षति पहुँचती है।

– प्रकाश के दृष्टि क्षेत्र में छाया नहीं होनी चहिये ।
– प्रकाश का स्त्रोत स्थिर होना चाहिये, झिलमिलाना नहीं चाहिये ।

- **प्राकृतिक प्रकाश :** यह मुख्यत: आकाश और अंशत: पराबर्तन से प्राप्त होता है । यह दिन का समय, ऋतु, मौसम, और बादलों पर निर्भर रहता है । प्राकृतिक प्रकाश की व्यवस्था में निम्न बातों का ध्यान देना चाहिये :-

– एक समान प्रकाश के लिए घर की दिशा सूर्य की स्थिति के अनुसार सही होनी चाहिये।
– मकान के समीप अवरोध नहीं होने चाहियें ।
– मकान की खिडकियो का आकार और प्रकृति सुनियोजित होनी चाहियें ।
– चौडी खिडकी, ऊँची खिडकी की अपेक्षा अधिक प्रकाश देती है । साधारणतया खिड़कियाँ का क्षेत्रफल कमरे के क्षेत्रफल का दसवा भाग होना चाहिये ।
– बहुत अधिक परदे प्राकृतिक प्रकाश में बाधक हैं ।
– रंगीन पुताई की अपेक्षा सफेद पुताई अधिक प्रकाश में सहायक है ।
– प्रकाश के बेहतर परावर्तन के लिए कमरों की छत हमेशा सफेद रहनी चाहिये ।

- **कृत्रिम प्रकाश :**इसके मुख्य स्त्रोत निम्न हैं
  – जल विद्युत
  – तापीय विद्युत
  – पवन विद्युत
  – ट्यूब लाइट

कृत्रिम प्रकाश *उपलब्धता* के आधार पर प्रयोग मे लाया जा सकता है । यह भी ध्यान रखना चाहिए कि - विद्युत बल्व की अपेक्षा ट्यूब लाइट की खपत मे बचत होती है और इसका प्रकाश शीतल और सुविधाजनक होता है ।

अत: उपरोत्त वर्णित वातावरणीय कारकों का सम्बन्ध प्रसूता के अच्छे स्वास्थ्य की प्राप्ति के लिए अत्यन्त आवश्यक है ।

4.7 व्यर्थ /अपशिष्ट पदार्थो का निस्तारण

पर्यावरण में व्यर्थ / अपशिष्ट पदार्थों की' उपस्थिति स्वास्थ्य के लिए खतरा है । इसका कारण है कि:

– व्यर्थ / अपशिष्ट पदार्थ सड़ता है और मक्खियों को बढाता है ।
– चूहों और कीडे मकोड़ों को आकर्षित करता है ।
– व्यर्थ /अपशिष्ट पदार्थ मे रहने वाले रोगजनक जीवाणु मक्खियों और धूल, हवा के द्वारा फिर
– से मनुष्य के भोजन में पहुँच सकते है ।
– वायु, जल और मिट्टी प्रदूषण की संभावना बढ़ती हैं ।

अत: व्यर्थ / अवशिष्ट पदार्थो को जल्दी इकट्ठा कर, दूर ले जाकर सफाई से समाप्त कर देना चाहिये ।

4.7.1 पदार्थो के निस्तारण की विधियां:

कचरे के निस्तारण की अनेक विधियों मे से, किस विधि का उपयोग किया जावे यह उपलब्ध स्थान तथा संसाधनो पर निर्भर करता है । कचरे की मात्रा, प्रकार तथा नगरीय एव ग्रामीण क्षेत्र के आधार पर कचरे के निस्तारण हेतु अलग-अलग तरीके अपनाये जा सकते हैं । मुख्यत: निम्न विधियाँ प्रयुक्त की जाती है -

1. लघु स्तर की विधियां :

घरेलू ग्रामीण क्षेत्र तथा शिविरों से एकत्र कचरे का निस्तारण निम्न प्रकार कर सकते हैं.

(अ) **जलाना :** कचरे को प्रतिदिन खुले में जला दिया जाता है ।

(ब) **पशुओं को खिलाना** : असक्रमित खाद्य सामग्री जैसे बचा हुआ भोजन, फल, जूठन आदि पशुओं को खिलाई जा सकती है ।

(स) **गाडना:** एक 1.5 मीटर चौडी तथा 2 मीटर गहरी खाई खोदते हैं, प्रतिदिन कचरा डालकर 20-30 सेमी. मिट्टी की परत से उसे ढक देते हैं । जब यह खाई जमीन की सतह से 4 सेमी. रह जावे तो उसे अच्छी तरह से बंद कर देते हैं । उपयोग हेतु दूसरी खाई खोद देते हैं 4 से 6 माह बाद पहली खाई को खोद कर खाद प्राप्त की जा सकती

(द) **खाद के गड्डों का प्रयोग:** यह भी गाडने जैसी प्रक्रिया है किन्तु इसमें गोबर, घर का समस्त कूड़ा करकट घर के पिछवाड़े या अहाते में खोदे गये गड्ढे में डाला जाता है । प्रतिदिन कचरा डालने के बाद कुछ मिट्टी डाल दी जाती है । पूर्ण भरने के बाद गड्ढे को बन्द कर दिया जाता है तथा दूसरे गड्ढे का उपयोग करते हैं । पहले गड्ढे को 4 से 6 माह बाद खोदकर, खाद को खेती के काम में ले सकते है ।

2. वृहद स्तर की विधियाँ :

(अ) भस्म करना या इंसीनरेशन: यह कचरे के निपटान का सर्वोत्तम तरीका है । जलाने से पूर्व कचरे में से टीन, काँच, रेत इत्यादि को अलग कर लेना चाहिए । जलाने के लिये भस्मको (Incinerators) का उपयोग किया जाता है । भस्मको में प्रतिदिन 250 से 450 किग्रा. कचरा जला सकते हैं ।

- **भस्मीकरण के लाभ**

– कचरे की मात्रा 1/4 रह जाना

– कम स्थल की आवश्यकता

– प्रारंभिक निवेश महँगा होता है तत्पश्चात् खर्च कम आता है

– कचरे को जलाने से उत्पन्न पदार्थ 'क्लिकर' सीमेन्ट, सड़कें इत्यादि बनाने में काम आ सकती है ।

- **भस्मीकरण की हानियाँ**

– चिमनी की ऊँचाई कम होने पर वायु प्रदूषण होता है ।

– कचरे की छंटनी में समय एवं श्रम लगता है ।

– श्रमिकों को संक्रमण का खतरा रहता है ।

- **पाटना या डम्पिंग**

इस विधि में कूडे को निचली सतह वाली भूमि में डालते हैं जिससे भूमि को पाटा जा सकता है कूड़ा सडकर खाद बन जाता है किन्तु डम्पिंग स्थल मैदान, आवासीय स्थलों से काफी दूर होना चाहिये ।

- **गुण :** भूमि समतल बन जाती है तथा बाद में कृषि के उपयोग मे ली जा सकती है ।
- **दोष :**

– कृन्तकों तथा मक्खियों के लिए मैदान खुला होता है ।
– डम्पिंग मैदान के आसपास दुर्गन्ध और वायु प्रदूषण पाया जाता है ।
– हवा के प्रवाह के कारण कचरा बिखर सकता है तथा सतह का ऊपरी जल प्रदूषित हो सकता है अत: पर्यावरण प्रदूषण के कारण, डम्पिंग का प्रयोग कम होता जा रहा है ।

(स) नियंत्रित टिपिंग

यह स्वास्थ्यकारी विधि है किन्तु इसके लिये पर्याप्त भूमि उपलब्ध होनी चाहिये । इसमें 2-3 मीटर गहरी तथा 4 से 12 मीटर चौडी कचरे की मात्रा के अनुसार समुचित लम्बाई की खाई खोदी जाती है । इसमें कचरा डाला जाता है तथा मिट्टी से ढक दिया जाता है इस कार्य में रासायनिक, भौतिक एव जैविक परिवर्तनो के कारण 4 से 6 माह बाद कचरा अच्छी खाद मे परिवर्तित हो जाता है ।

गुण :

– स्वास्थ्यकारी विधि है ।
– पर्याप्त मात्रा में खाद मिलना ।
– मक्खियों तथा कृन्तकों की समस्या नही होना ।

दोष :

– अधिक भूमि की आवश्यकता होना ।
– खाई के निकट जल स्त्रोत होने पर जल का संदूषित होना ।
– मशीन के अभाव में कूडे को मिट्टी से ढंकना, श्रमसाध्य कार्य होना ।

(द) कूड़ा खाद बनाना या कम्पोस्टिंग

इस विधि से कूडा कचरा तथा मल-मूत्र का निस्तारण एक साथ कर सकते हैं । कूड़े का जैव पदार्थ, जीवाणुओं की क्रिया के कारण बिखर जाता है । सडने की क्रिया पूर्ण होने पर प्राप्त खाद, कृषि कार्यो के लिए बहुमूल्य होती है । कम्पोस्टिंग, ऐनरोबिक विधि अथवा वायुजीवी या एरोबिक विधि द्वारा सम्पन्न की जा सकती है ।

4.8 सारांश

प्रसूता के अच्छे स्वास्थ्य के लिए स्वच्छ पर्यावरण अति आवश्यक है जिसके अर्न्तगत व्यक्तिगत स्वच्छता का स्तर बढाकर विभिन्न संक्रामक रोगों से बचाव किया जा सकता है। जिससे प्रसूता के साथ शिशु का स्वास्थ्य भी अच्छा बना रहता है । अधिसूचना के माध्यम से विभिन्न संक्रामक बीमारियों को महामारी का रूप लेने से पूर्व नियन्त्रित किया जा सकता है । पर्यावरण के विभिन्न घटकों की जानकारी होने से स्वास्थ्य की उच्चतम उपलव् उपलब्धि प्राप्त

की जा सकती है । इस प्रकार वर्णित इकाई की पाठ्य सामग्री से प्रसूति विज्ञान सहायिका, प्रसूता के स्वास्थ्य का संरक्षण एवं संवर्धन कर सकती है ।

4.9 प्रश्न

1. पर्यावरण को कितने भागों में विभाजित किया जा सकता है?
2. विभिन्न संक्रामक रोगों को सूचीबद्ध कीजिये ।
3. संक्रामक रोगों को अधिसूचित करने से क्या लाभ होता हे?
4. जल की स्वच्छता क्या है, वर्णित करो ।
5. जल के स्त्रोत कौन कौन से हैं, नाम लिखिये ।
6. प्रसूता के अच्छे स्वास्थ्य के लिये कौन, कौनसी आवश्यकतायें होती हैं?
7. प्राकृतिक प्रकाश की व्यवस्था में किन बातों का ध्यान रखना चाहिये?
8. व्यर्थ / अपशिष्ट पदार्थो का निस्तारण नहीं करने से स्वास्थ्य सम्बन्धी क्या क्या खतरे हो सकते है?
9. व्यर्थ / अपशिष्ट पदार्थो के निस्तारण की विधियों को सूचीबद्ध कीजिये ।
10. व्यर्थ / अपशिष्ट पदार्थो के निस्तारण की भस्मीकरण विधि के लाभ बताइये ।

इकाई-5 परिवार कल्याण एवं नियोजन

इकाई की रूपरेखा

5.0 प्रस्तावना

5.1 उद्देश्य

5.2 परिवार कल्याण अर्थ एवं अवधारणा

5.2.1 परिवार नियोजन की परिभाषाएं

5.2.2 परिवार नियोजन का महत्व

5.2.3 परिवार नियोजन के पक्ष

5.2.4 परिवार नियोजन के उद्देश्य

5.2.5 राष्ट्रीय जनसंख्या नीति

5.2.6 परिवार नियोजन के क्षेत्र

5.2.7 छोटे परिवार की अवधारणा

5.3 जनसंख्या विस्फोट

5.3.1 राजस्थान एवं जनसंख्या विस्फोट

5.4 प्रजनन योग्य दम्पत्ती

5.4.1 प्रजनन योग्य दम्पत्ती पंजिका

5.5 परिवार नियोजन के विभिन्न साधन (गर्भ निरोधक विधियां)

5.5.1 गर्भ निरोधक की विशेषताएं

5.5.2 गर्भ निरोधक साधनों का वर्गीकरण

5.5.3 परिवार नियोजन के विविध विकल्प

5.5.4 अस्थायी विधियां

(अ) यांत्रिक साधन: कण्डोम - फीमेल कण्डोम

(ब) रासायनिक साधन

(स) हार्मोन युक्त साधन, माला एवं माला डी-सेंटक्रॉमन

(द) हार्मोन युक्त अन्य साधन

(य) अन्तर्गर्भाशयी साधन, कोपर टी

(र) गर्भधारण पश्चात् के साधन, मासिक चक्र नियमन/गर्भपात/एम.टी.पी. (M.T.P)

(ल) विविध विधियां

5.5.5 स्थायी विधियाँ

(अ) महिला नसबंदी

(ब) पुरूष नसबंदी

5.6 परिवार कल्याण कार्यक्रम में प्रसूति विज्ञान सहायिका की भूमिका
5.7 सारांश
5.8 प्रश्न

5.0 प्रस्तावना

प्रजनन स्वास्थ्य की गुणवत्ता बढाने में परिवार कल्याण एवं नियोजन का महत्वपूर्ण स्थान है । परिवार नियोजन से अवांछित गर्भधारण, बच्चों के अनचाहे जन्म पर रोक तथा जनसंख्या की वृद्धि रोकी जा सकती है । स्वाभाविक तौर पर इन सब के चलते प्रसूति सेवाओं पर भार कम पडेगा तथा उनकी गुणवत्ता मे बढोतरी होगी । अनेक कारणों से हमारा देश जनसंख्या विस्फोट की अवस्था से गुजर रहा है । अत: प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रसूति स्वास्थ्य सेवाओं के साथ-साथ परिवार कल्याण एवं परिवार नियोजन की सेवाओं से पूरी तरह परिचित होना आवश्यक है ।

प्रस्तुत इकाई के विभिन्न भागों में परिवार कल्याण की अवधारणा सहित परिवार नियोजन की विभिन्न स्थायी एवं अस्थायी विधियों तथा उनमें प्रसूति विज्ञान सहायिका की भूमिका पर चर्चा की जा रही है ।

5.1 उद्देश्य

परिवार स्वास्थ्य सेवाएं किसी भी देश की स्वास्थ्य सेवाओं की रीढ कही जा सकती हैं । परिवार स्वास्थ्य सेवाओं का मुख्य लक्ष्य परिवार कल्याण है एवं परिवार की भलाई तथा विकास हेतु परिवार नियोजन एक महत्वपूर्ण घटक है । प्रसूति विज्ञान सहायिका को परिवार कल्याण एवं परिवार नियोजन संबधी विभिन्न अवधारणाओं तथा तथ्यों की जानकारी होनी आवश्यक है ।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के विषय में जान सकेगी तथा सम्बंधित प्रश्नों का उत्तर देने में समर्थ हो सकेगी ।

1. परिवार कल्याण के अर्थ एवं अवधारणा को जानना ।
2. परिवार नियोजन के उद्देश्यों की जानकारी ।
3. जनसंख्या विस्फोट की समस्या को समझना ।
4. प्रजनन योग्य दम्पती के विषय में जानना ।
5. परिवार नियोजन हेतु उपयोग में ली जाने वाली विभिन्न स्थायी / अस्थायी विधियों के बारे में जानना ।
6. परिवार कल्याण कार्यक्रम में स्वयं की भूमिका जानना ।

5.2 परिवार कल्याण : अर्थ एवं अवधारणा

परिवार कल्याण के विभिन्न क्षेत्र हैं, इसमें जनसंख्या वृद्धि पर रोक, परिवार के संबंध में योजनाओं से बढकर परिवार की समस्त स्वास्थ्य देखभाल से संबंधित विषय सम्मिलित हैं । सही अर्थो में परिवार कल्याण, परिवार की कल्याणकारी अवधारणा पर आधारित है जिसके माध्यम से नागरिकों के स्वास्थ्य की गुणवत्ता तथा राष्ट्र के स्वास्थ्य स्तर को बढाया जा सकता है । परिवार कल्याण जीवन की गुणवत्ता (quality of life) में सुधार लाता है ।

परिवार कल्याण हेतु परिवार नियोजन आवश्यक है । परिवार नियोजन का अभिप्राय परिवार के संबंध में ऐसी योजनाएं बनाना है जिनके माध्यम से दम्पती अपने परिवार के आकार को सीमित रख, परिवार कल्याण का लक्ष्य प्राप्त कर सकें । प्रारम्भ में परिवार नियोजन का शाब्दिक अर्थ संतति निग्रह (Birth control) अथवा जन्मों पर नियंत्रण तक ही माना जाता था । यह अर्थ भ्रमपूर्ण तथा नकारात्मक सोच पर आधारित है । वास्तव में परिवार नियोजन का आशय, दम्पतियों द्वारा बच्चों के जन्म का स्वयं की इच्छा से नियोजन है अर्थात बच्चे का जन्म उनकी इच्छा के अनुसार ही होना चाहिए । यह कहा जा सकता है कि परिवार की संख्या का नियोजन अर्थात उत्तरदायित्वपूर्ण अभिभावकता (Responsible Parenthood) ही परिवार नियोजन है । परिवार नियोजन के द्वारा जन्मों पर नियंत्रण रख, परिवार के आकार को बढ़ने से रोका जा सकता है, जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित किया जा सकता है तथा परिवार कल्याण की ओर बढा जा सकता है । इस प्रकार परिवार नियोजन, परिवार कल्याण का एक आवश्यक भाग है। यहाँ यह स्पष्ट करना भी आवश्यक है कि परिवार नियोजन के स्थान पर परिवार कल्याण अवधारणा को स्वीकार किये हुए लगभग तीस वर्ष हो रहे हैं, फिर भी परिवार कल्याण के स्थान पर अथवा उसके समानार्थक अब भी परिवार नियोजन शब्दावली (Term) व्यापक प्रचलन में है ।

5.2.1 परिवार नियोजन की परिभाषाएं:

परिवार नियोजन की विभिन्न परिभाषाएं हैं, इनमें से कुछ यहाँ दी जा रही हैं । विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक विशेषज्ञ समिति के अनुसार परिवार नियोजन वे प्रक्रियाएं हैं जो व्यक्तियों एवं दम्पतियों को निम्न लक्ष्य प्राप्ति में सहायक हों:

- अवांछित जन्मों पर रोक ।
- वांछनीय संतान की प्राप्ति ।
- दो बच्चों के जन्म के बीच में अन्तराल ।
- परिवार में बच्चों की संख्या निश्चित रखना, एवं
- माता पिता की आयु के अनुसार संतानोत्पत्ति का समय निश्चित करना ।

एक अन्य विशेषज्ञ समिति का मानना है कि परिवार नियोजन चिंतन एवं रहने का एक तरीका है जो कि व्यक्तियों अथवा दम्पतियों द्वारा ज्ञान, प्रवृति एवं जिम्मेदारी पूर्ण निर्णयों तथा कल्याण हेतु स्वेच्छा से अपनाया जाता है ।

संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार - परिवार नियोजन मानव का मूलभूत अधिकार है जो कि परिवार स्वास्थ्य सेवाओं का एक महत्वपूर्ण अंग है । जनसंख्या पर बुखारेस्ट सम्मेलन में भी यह स्वीकार किया गया कि व्यक्ति एवं दम्पती अपने बच्चों की संख्या तथा उनमें अन्तराल रखने हेतु उत्तरदायी एवं स्वतन्त्र हैं । परिवार नियोजन हेतु इन्हें सूचना, शिक्षा एवं साधन प्राप्त करने का मौलिक अधिकार है ।

5.2.2 परिवार नियोजन का महत्व

परिवार कल्याण की प्राप्ति में परिवार नियोजन की महत्वपूर्ण भूमिका है । परिवार नियोजन के कुछ महत्व इस प्रकार हैं -

- परिवार के स्वास्थ्य स्तर मे वृद्धि करना ।
- महिला सशक्तिकरण तथा समानता हेतु मातृ एवं बाल स्वास्थ्य में बढोतरी ।
- गरीबी कम होना, बेरोजगारी की समस्या का समाधान ।
- सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं का समाधान ।
- देश का आर्थिक विकास सुनिश्चित होना ।
- व्यक्तिगत स्वास्थ्य तथा राष्ट्र का स्वास्थ्य स्तर बढ़ना ।

5.2.3 परिवार नियोजन के पक्ष

यह उल्लेखनीय है कि जीवन में अधिकांश पक्षों का परिवार कल्याण से गहरा सम्बन्ध है । भारत जैसे विकासशील तथा अधिक जनसंख्या वाले देश में परिवार नियोजन का स्वास्थ्य सेवाओं पर बहुत अधिक भार एवं प्रभाव है । परिवार नियोजन से प्रभावित होने वाले कुछ महत्वपूर्ण पक्ष निम्न प्रकार हैं -

- **स्वास्थ्य पक्ष**

  परिवार नियोजन से महिला मृत्यु, मातृत्व मृत्यु दर एवं मातृत्व रूग्णता को कम किया जा सकता है । कुछ स्थितियों में गर्भावस्था के कारण महिलाओ को गम्भीर संकट का सामना करना पड सकता है । हमारे देश में गर्भावस्था एवं प्रसव से सम्बन्धित महिलाओं की मृत्यु का आकडा, विकसित राष्ट्रों की तुलना में 10 से 20 गुना अधिक है । परिवार नियोजन के माध्यम से प्रसवो की सख्या में कमी, अवांछित जन्मो पर रोक, बच्चों मे अन्तराल तथा सही समय पर गर्भधारण की सुनिश्चितता से महिला स्वास्थ्य की सुरक्षा बढाई जा सकती है । साथ ही जनसंख्या वृद्धि पर प्रभावी रोक एव जनसंख्या की गुणवत्ता (Quality of Population) में बढोतरी की जा सकती है।

- **बाल स्वास्थ्य**

  परिवार का आकार कम होने से बच्चों की सार संभाल तथा पोषण अच्छा रहता है, उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास सही हो पाता है । बच्चों को जन्मजात विकृतियों (Congenital Defects) से बचाया जा सकता है। परिवार नियोजन से देश की भावी संतति का स्वास्थ्य स्तर बढाया जा सकता है तथा शिशु मृत्यु दर (IMR) एवं बाल मृत्यु दर (Child Mortality Rate) मे अपेक्षित कमी संभव है।

- **आर्थिक पक्ष**

  “कम संतान सुखी इंसान” का नारा परिवार नियोजन के आर्थिक पक्ष पर पडने वाले प्रभाव को दर्शाता है । बेरोजगारी की समाप्ति, वस्तुओं की उपलब्धता, प्रति व्यक्ति आय, राष्ट्रीय आय में वृद्धि के लिए छोटा परिवार होना जरूरी है । यह कहना बिल्कुल सही है कि परिवार

नियोजन की सफलता मे ही व्यक्ति, परिवार एवं राष्ट्र की आर्थिक उन्नति का राज छिपा है।

- **राजनैतिक पक्ष**

  अधिक जनसंख्या से "जनसंख्या घनत्व" (Population Density) बढ़ता है। विभिन्न जाति, धार्मिक आदि दबाव समूहों की संख्या में बढोतरी होती है। जिनके चलते राजनैतिक व्यवहार एवं शासन प्रणाली प्रभावित होती है । राजनैतिक प्रणाली में सुधार तथा उसके कल्याणकारी पक्ष को मजबूत करने के लिए परिवार नियोजन आवश्यक है ।

- **सामाजिक पक्ष**

  परिवार नियोजन तथा परिवार का आकार सीमित रखने से समाज में उन्नति होती है । सामाजिक संरचना प्रगतिशील हो जाती है । समाज में अच्छी एवं उच्च शिक्षा के अवसर बढते हैं । पोषण एवं रहन सहन के स्तर में बढोतरी होती है । सामाजिक विषमताएं कम होकर समाज में समानता एव समरसता बढ़ती है । वैवाहिक सम्बंधों में स्थायित्व तथा नागरिकों के व्यक्तित्व का विकास होता है ।

  इस प्रकार परिवार नियोजन का महत्व मात्र स्वास्थ्य तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह देश की राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं आर्थिक परिस्थितियो को भी प्रभावित करता है । अत: परिवार नियोजन देश की सभी अर्थो में उन्नति हेतु आवश्यक है ।

5.2.4 परिवार नियोजन के उद्देश्य

परिवार नियोजन के मुख्यत : 2 लक्ष्य हैं :

1. परिचालन लक्ष्य
2. जनसांख्यिकी लक्ष्य

परिचालन लक्ष्य

- स्वेच्छा से छोटे परिवार के प्रतिमान को अपनाने हेतु प्रोत्साहन ।
- गर्भो के मध्य अन्तराल रखने की प्रेरणा ।
- प्रजनन योग्य दम्पतियों को गर्भनिरोधक साधनों की आसान आपूर्ति सुनिश्चित करना ।
- निर्धारित जनसांख्यिकी लक्ष्यों की पूर्ति हेतु चिकित्सा एव शल्य क्रिया (ऑपरेशन) सुविधाओं की व्यवस्था करना ।

परिवार कल्याण को विस्तृत अर्थ प्रदान कर इसमें मातृ स्वास्थ्य एव शिशु जीवितता, महिलाओं का स्तर, रोजगार, महिला साक्षरता एवं शिक्षा, गरीबी उन्मूलन तथा सामाजिक आर्थिक विकास कार्यक्रमों का समावेश भी किया गया है ।

- **जनसांख्यिकी लक्ष्य**

  परिवार नियोजन के जनसांख्यिकी लक्ष्य, राष्ट्रीय जनसंख्या नीति के ही महत्वपूर्ण अंग होते हैं। जिनमे जनसंख्या नीति के साथ साथ ही परिवर्तन होता रहता है। इनका वर्णन आगे दिया जा रहा है।

5.2.5 राष्ट्रीय जनसंख्या नीति

भारत सरकार ने 15 फरवरी 2000 को राष्ट्रीय जनसंख्या नीति (NPP-2000) को अपना लिया है, नीति के अनुसार टिकाऊ विकास (Sustainable development) को बढावा देने के लिए जनसंख्या का स्थिरीकरण करना अत्यन्त आवश्यक है, इस नीति में प्रजनन एव बाल स्वास्थ्य को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है ।

- **राष्ट्रीय जनसंख्या नीति के उद्देश्य:**

  राष्ट्रीय जनसंख्या नीति-2000 के उद्देश्यों को निम्न 3 भागों में वर्गीकृत कर सकते हैं:

तात्कालिक उद्देश्य:

– गर्भनिरोधक, स्वास्थ्य तंत्र तथा स्वास्थ्य कर्मियों की पूरी न हो पाई मांगों की ओर ध्यान देना, तथा

– प्रजनन तथा बाल स्वास्थ्य देखभाल के लिए सेवा संगठन तथा आपूर्ति की व्यवस्था करना।

मध्य अवधि उद्देश्य :

– सन् 2010 तक समग्र प्रजनन दरों को पुनर्स्थापन स्तरों (Replacement) तक लाना।

दीर्घकालीन उद्देश्य:

टिकाऊ आर्थिक उन्नति, सामाजिक विकास और पर्यावरणात्मक सुरक्षाओं के अनुरूप सन् 2045 तक जनसंख्या का स्थिरीकरण करना ।

- **जनसांख्यिकी उद्देश्य**

  नवीन जनसंख्या नीति-2000 के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सन् 2010 तक प्रत्येक मामले में पूर्ण किये जाने वाले निम्न राष्ट्रीय सामाजिक-जनसांख्यिकी लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं :

1. प्रजनन एव बाल स्वास्थ्य (RCH), स्वास्थ्य तंत्र, कार्मिकों तथा आपूर्ति संबंधी आधारित तंत्र की पूरी न हो सकी मांगों की ओर ध्यान देना ।
2. 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क स्कूली शिक्षा का प्रावधान करना । स्कूल छोडने वाले बच्चों की दर लडकों एवं लडकियों दोनों के मामले में घटा कर 20 प्रतिशत से कम लाना ।
3. शिशु मृत्यु दर, को घटा कर प्रति 1000 जीवित शिशु जन्मों पर 30 से कम के स्तर पर लाना ।
4. मातृ मृत्यु दर को घटा कर प्रत्येक 100000 जीवित शिशु जन्मों पर 100 से कम के स्तर पर लाना ।
5. टीकाकरण से रोके जा सकने वाले सभी रोगों के संबंध में बच्चों के व्यापक रोग प्रतिरक्षण (यूनिवर्सल इम्यूनाइजेशन) के लक्ष्यो को प्राप्त करना ।
6. लडकियों की विवाह आयु इस प्रकार बढाना कि उनका विवाह 18 वर्ष से पहले न किया जावे और अच्छा हो कि विवाह 20 वर्ष की आयु के बाद किया जावे ।

7. कुल प्रसवों का 80 प्रतिशत, संस्थागत प्रसवों (हॉस्पिटलो या स्वास्थ्य संस्थान प्रसव) के तौर पर तथा सभी प्रसवो को प्रशिक्षित स्वास्थ्य कर्मियों द्वारा किये जाने के लक्ष्य को प्राप्त करना ।
8. अनेक विकल्पों से युक्त प्रजनन नियंत्रण और गर्भनिरोध के लिए परामर्श, जानकारी तथा सेवाओं की सामान्यजन तक उपलब्धता सुनिश्चित करना ।
9. जन्म-मृत्यु विवाह और गर्भावस्था के शत प्रतिशत पंजीकरण के लक्ष्यों की पूर्ति करना ।
10. एड्स के विस्तार पर अंकुश लगाना, साथ ही प्रजनन मार्ग संक्रमण (Reproductive Tract Infection) तथा यौन संचारित संक्रमणों (Sexually Transmitted Infection) एवं राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण सगठन के सम्बंधो में अधिक एकीकरण को बढावा देना ।
11. संक्रामक रोगों (Communicable Diseases) का निवारण और नियत्रण ।
12. प्रजनन और बाल स्वास्थ्य (RCH) सेवाएं उपलब्ध कराने तथा परिवारों तक पंहुचाने में भारतीय चिकित्सा पद्धतियों (आयुर्वेदिक आदि) को समिल्लित करना ।

- **राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग (National Population Commision)**

  प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग का गठन किया गया है । यह आयोग जनसंख्या नीति के क्रियाकलापों पर निगाह रखेगा तथा समीक्षा करेगा । प्रदेशों के सभी मुख्यमंत्री, सम्बंधित केन्द्रीय मंत्रालयों और विभागों के प्रभारी मंत्री, जनसांख्यिकी विशेषज्ञ, सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्मिक तथा गैर सरकारी संगठन, इस आयोग के सदस्य बनाये गये हैं ।

  राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 के क्रियान्वयन के बाद यह आशा की जा रही है कि सन् 2010 तक जनसंख्या अनुमानों सम्बंधी तकनीकी समूह द्वारा अनुमानित जनसंख्या116 करोड के स्थान पर 110 करोड होनी चाहिये। (नोट सन् 2001 में भारत की जनसंख्या 102 करोड हो गई है।)

  यह भी आशा की जा रही है कि इस नीति के क्रियान्वयन के बाद सन् 2010 तक जन्म दर घट कर 27 प्रति हजार, शिशु मृत्यु दर घट कर 30 प्रति हजार तथा समग्र प्रजनन दर घट कर 2.1 प्रति महिला हो जाएगी ।

5.2.6 परिवार नियोजन के कार्य क्षेत्र

विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक विशेषज्ञ समिति के अनुसाए परिवार नियोजन के कायक्षेत्र में निम्न विषय हैं ।

- जन्मों में उचित अन्तराल
- जन्मों की सीमित संख्या
- प्रजनन तंत्र के रोगों का निदान
- पूर्व वैवाहिक परीक्षण / परामर्श
- गर्भ परीक्षण
- अविवाहित माताओं को सेवा देना ।
- यौन शिक्षा
- आनुवांशिकी परामर्श
- अभिभावक मार्गदर्शन
- वैवाहिक मार्गदर्शन
- दत्तक सेवाऐं

– प्रथम जन्म की तैयारी करना ।

– आर्थिक एवं पोषण सम्बन्धी शिक्षा ।

छोटे परिवार की अवधारणा या प्रतिमान (Small Family Norm)

हमारे देश में परिवार नियोजन का उद्देश्य छोटे परिवार या सीमित परिवार के प्रतिमान को स्वेच्छा से स्वीकार करना है । छोटे परिवार की अवधारणा के निम्न पक्ष हैं :

– लड़का-लडकी एक समान

– दूसरा बच्चा 3 वर्ष के पश्चात एवं

– व्यापक प्रतिरक्षण या टीकाकरण

किसी भी परिवार का आकार बच्चों की संख्या से ही निर्धारित होता है । परिवार नियोजन के प्रतीक त्रिभुज Δ का सम्बन्ध 3 बच्चों के परिवार से है यद्यपि वर्तमान में 2 बच्चों का प्रतिमान मान्य है । किन्तु Δ की आकृति परिवार नियोजन का - लोगो (Logo) अथवा स्थायी पहचान बन गई है । छोटे परिवार की अवधारणा के अनुसार सन् 2050 तक भारत की जनसंख्या 1 अरब 30 करोड तक ही सीमित रखनी है । वर्तमान स्थितियों मे जनसांख्यिकी का यह लक्ष्य प्राप्त करना कठिन प्रतीत होता है । छोटे परिवार के प्रतिमान के कुछ नारे इस प्रकार हैं :

– बच्चे दो या तीन बस (1970) में प्रचलित नारा

– हम दो-हमारे दो अथवा बच्चे दो ही अच्छे

– लड़का - लडकी एक समान

– एक बच्चा - घर संसार (आधुनिक नारा)

इस विषय में यह उल्लेखनीय है कि राजस्थान की ग्यारहवीं विधानसभा (6 नवम्बर 2000) के सदस्यों ने छोटे परिवार की अवधारणा के प्रति अपना संकल्प पेश कर देश के राजनैतिक इतिहास में अनूठी पहल की है । इसी प्रकार राजस्थान सरकार ने नियम बनाकर सरकारी नौकरियों, पदोन्नतियों में 2 बच्चों से अधिक नहीं होने की शर्त लागू कर दी है । प्रसूति विज्ञान सहायिका को छोटे परिवार की अवधारणा का संदेश घर घर तक पहुंचाना चाहिये तथा स्वयं भी छोटा परिवार रखकर आदर्श प्रस्तुत करना चाहिये ।

- **सीमित परिबार के लक्ष्य में बाधाएँ**

– जितने हाथ-उतना काम की मान्यता अर्थात अधिक संतान ।

– अधिक आय के साधन मानना ।

– बच्चों को भगवान की देन मानना ।

– बच्चों को बुढ़ापे की लाठी समझना ।

– लिंग असमानता, पुरूष प्रधान सोच, लडके को लड़की पर प्रमुखता देना ।

- **धार्मिक कारण**

– हिन्दुओ में अंतिम संस्कार हेतु बेटे की चाह ।

– मुस्लिमों के एक वर्ग द्वारा गर्भ निरोधक / परिवार नियोजन को धर्म के खिलाफ समझना।

– ईसाइयों के कुछ वर्गो द्वारा गर्भपात को पाप मानना ।

– अशिक्षा, अन्ध विश्वास एवं बेराजगारी ।
– मनोरंजन के साधनों का अभाव होना ।

5.3 जनसंख्या विस्फोट

देश की जनसंख्या का नागरिकों के स्वास्थ्य, रहन-सहन के स्तर, राजनीतिक प्रणाली तथा अर्थतंत्र से गहरा रिश्ता होता है । इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता है कि पूरे विश्व में जनसंख्या तेजी से वृद्धि हुई है । किन्तु भारत जैसे विकासशील देश में जनसंख्या वृद्धि समस्त आर्थिक प्रगति एवं विकास को लील रही है । भारत की जनसंख्या के बारे में निम्न तथ्यों पर गौर करना आवश्यक है

– भारत का क्षेत्रफल विश्व के क्षेत्रफल का मात्र 24 प्रतिशत है जबकि विश्व की कुल जनसंख्या का 16.87 प्रतिशत, भारत की जनसंख्या है ।
– भारत से अधिक आबादी वाला दुनिया में केवल एक देश चीन है । एक अनुमान के अनुसार सन् 2030 तक हम जनसंख्या के मामले में चीन से भी आगे निकल जायेंगे ।
– भारत की जनसंख्या जो 1901 में 23.8 करोड थी, वह बढकर 100 वर्षो मे अर्थात 2001 में 102.70 करोड हो गई है ।
– वर्ष 1991 से लेकर 2001 तक अर्थात पिछले दस वर्षों में देश की जनसंख्या में 18 करोड़ की बढ़ोतरी हुई है । यह निरपेक्ष वृद्धि ब्राजील की कुल जनसख्या से अधिक है जबकि ब्राजील जनसंख्या के हिसाब से विश्व का पांचवा सबसे बडा देश 'है ।
– भारत की जनसंख्या 1 मार्च 2001 को 1 अरब पार कर गई है । अत: अब हम अरबपति हो
  गये हैं। किन्तु संसाधनों की उपलब्धता की तुलना में हमारे लिए यह कोई गर्व की बात नही है।
– 1951-1981 के मध्य मृत्यु दर लगभग घटने किन्तु जन्म दर स्थिर रहने से जनसंख्या में
  अत्यधिक तेजी से वृद्धि हुई है ।
– राष्ट्रीय स्तर पर जनसंख्या मे 45% की वृद्धि दो से अधिक बच्चे होने के कारण है।
– जनसंख्या में प्रतिवर्ष लगभग 1 करोड 60 लाख लोग बढ़ जाते हैं । जिससे कपड़े, आवास, भोजन, शिक्षा, स्वास्थ्य, स्कूल, आदि जैसे अतिरिक्त संसाधनो की मांग अधिक हो जाती है।

जनसंख्या में वृद्धि के अनेक कारण हैं जिनमें प्रमुख ऊँची जन्मदर या परिवार नियोजन के लक्ष्य पूर्ण नहीं होना, स्वास्थ्य सेवाओं की बढोतरी एवं जागरूकता के कारण घटी हुई मृत्यु दर तथा राजनैतिक इच्छा शक्ति का अभाव इत्यादि हैं । यद्यपि कुछ सिद्धांतकार यह सिद्ध करने का प्रयास करते हैं कि उपलब्ध श्रम शक्ति, प्रचुर प्राकृतिक ससांधन या नियोजन की कमी के कारण जनाधिक्य या अधिक जनसंख्या दिखाई देती है । किन्तु हमें वास्तविकता स्वीकार करने मे कोई दिक्कत नही होनी चाहिये कि बेकारी, गरीबी, अशिक्षा या शिक्षा का कम प्रतिशत,

निम्न स्वास्थय स्तर, आवासों का अभाव, महंगाई, महिलाओ की दयनीय स्थिति, बढी हुई शिशु एवं मातृ मृत्यु दर इत्यादि जनसंख्या विस्फोट के स्पष्ट प्रमाण हैं ।

जनसंख्ये विस्फोट से हमारे आर्थिक विकास पर गहरी चोट लगी है तथा आर्थिक समृद्धि एवं राजनैतिक प्रभुत्व का सपना अभी कोसों दूर है ।

5.3.1 जनसंख्या एवं राजस्थान

राजस्थान की जनसंख्या वृद्धि दर देश की तुलना में काफी अधिक रही है । 1951 से 2001 के 50 वर्ष के अंतराल में राज्य की जनसंख्या में 255 प्रतिशत की वृद्धि हो चुकी है । जबकि इससे पहले के 50 वर्षो में यह वृद्धि मात्र 55 प्रतिशत ही थी ।

भारत देश के संदर्भ में राजस्थान की जनसंख्या प्रतिशत आगे दी गई निम्न तालिका से स्पष्ट होती है ।

जनसंख्या में प्रतिशत वृद्धि

वर्ष	राजस्थान	भारत
1951-61	26.20	21.51
1961-71	27.83	24.80
1971-81	32.29	24.65
1981-91	28.44	23.85
1991-2001	28.33	21.34

पिछले दशक (1991-2001)में भी भारत की जनसंख्या वृद्धि दर में 2.51 प्रतिशत की कमी 1981-91 की तुलना में दर्ज की गई किन्तु राज़रस्थान में यह कमी केवल 0.11 प्रतिशत ही रही। हालांकि सकारात्मक तौर पर जन्म एवं मृत्युदर दोनों में कमी आई है किन्तु जन्म दर की कमी, मृत्यु दर की तुलना में बहुत कम है एवं इनके बढ़ते अंतर ने, राज्य में जनसंख्या विस्फोट का रूप ले लिया है।

जनसंख्या विस्फोट के कारण राजस्थान राज्य में निम्न परिणाम दिखाई दे रहे हैं ।

- बेरोजगारी
- बढती जनसख्या के कारण लगभग 35 लाख नये व्यक्ति हर वर्ष रोजगार बाजार में प्रवेश करते हैं। इनमें से मात्र 30 हजार को रोजगार प्राप्त होता है ।
- खाद्यान्न की प्रति व्यक्ति घटती उपलब्धता
- राज्य में खाद्यान्न में 2 प्रतिशत की दर से वार्षिक वृद्धि होने के उपरांत भी खाद्यान्न की प्रति व्यक्ति उपलब्धता घट रही है । 1961 में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न की उपलब्धता 241 किग्रा से कम होकर वर्ष 1991 में केवल 192 किलों के आस पास रह गई ।
- पानी की आवश्यकता में बढ़ोतरी
- राज्य में 1951 में केवल 3 करोड़ मनुष्यों एव पशुओं को पानी की आवश्यकता थी । जो अब बढकर लगभग 9 करोड़ के आसपास हो गई है ।

- राज्य में ग्रामीण निर्धनता 26.5%(1993-94)जबकि शहरी निर्धनता 31.4%(1997)आंकी गई है।
- आवासीय समस्या
- जनसंख्या मे वृद्धि के कारण आवास समस्या बढती जा रही है । वर्तमान में सामान्य आवास सुविधा जुटाने हेतु 20 लाख मकानों की अतिरिक्त आवश्यकता है ।
- उपरोक्त सभी स्थितियाँ इस बात की ओर स्पष्ट संकेत करती हैं कि राजस्थान प्रदेश देश के अन्य राज्यों की तुलना में जनसंख्या विस्फोट की समस्या से अधिक ग्रस्त हैं तथा जनसंख्या के मामले में बीमारू राज्यों की श्रेणी में आता है ।

5.4 प्रजनन योग्य दम्पती

ऐसे विवाहित दम्पती जिनमें पत्नी की आयु 15 से 45 वर्ष के मध्य हो, प्रजनन योग्य या पात्र दम्पती कहलाते है । परिवार नियोजन की सेवाएं प्रदान करने हेतु ऐसे दम्पती सबसे अधिक पात्रता रखते हैं । एक मोटे तौर पर भारत मे 1660 करोड प्रजनन योग्य दम्पती हैं इनमें से लगभग 20 प्रतिशत 15-24 वर्ष के आयु वर्ग में हैं । (नोट - कुछ विशेषज्ञ प्रजनन आयु वर्ग समूह को 15 से 49 वर्ष के मध्य मानते हैं) पहले प्रजनन वर्ग में से, 2 से 3 जीवित बच्चे वाले दम्पतियो के वर्ग को लक्ष्य दम्पती (Target Couples) कहा जाता था किन्तु वर्तमान में प्रजनन योग्य अथवा पात्र दम्पती की शब्दावली ही प्रचलन में है ।

प्रजनन योग्य दम्पतियों को निम्न 3 श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है.

प्रथम वर्ग - विवाह के प्रथम 5 वर्ष वाले दम्पती ।

द्वितीय वर्ग- जिनका वैवाहिक जीवन 5-15 वर्ष हो

तृतीय वर्ग - जिनका वैवाहिक जीवन 15-30 वर्ष हो ।

5.4.1 प्रजनन योग्य दम्पती पंजिका (Eligible Couple Register)

इस रजिस्टर में प्रजनन योग्य या पात्र दम्पतियो के बारे में सम्पूर्ण विवरण होता है ।

ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत नर्सों एव अन्य स्वास्थ्य कर्मियों के लिए प्रजनन योग्य दम्पती पंजिका को नवीनतम बनाये रखना आवश्यक है । यह रजिस्टर क्षेत्र सर्वेक्षण के द्वारा बनाया जाता है तथा परिवार नियोजन सेवाओं हेतु तथ्य एवं सूचनाएं उपलब्ध कराता है । गृह मुलाकात के दौरान इस रजिस्टर की प्रविष्टियों को सही करते रहना चाहिये ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रजनन योग्य दम्पती रजिस्टर को नवीन बनाये रखने तथा उसकी देखभाल मे महत्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिये। अपने क्षेत्र में होने वाले विवाह, बच्चों के जन्म, तलाक, गांव मे नये आने वाले अथवा गाव से बाहर जाने वाले दम्पतियो इत्यादि के बारे में प्रसूति विज्ञान सहायिका को सही सूचनाएं रखनी चाहिये तथा महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (A.N.M.) अथवा पात्र दम्पती रजिस्टर की देखभाल करने वाले अन्य स्वास्थ्यकर्मी को नवीन तथ्यो से अवगत कराते रहना चाहिये ।

5.5 परिवार नियोजन के विभिन्न साधन या गर्भनिरोधक विधियाँ

यहाँ परिवार नियोजन के विभिन्न साधनों का अर्थ ऐसे उपायों से है जिनके द्वारा अवांछित जन्मों को रोका जा सके तथा जनसंख्या स्थिरीकरण के लक्ष्यों की प्राप्ति हो सके अर्थात परिवार नियोजन के साधनों के प्रयोग से गर्भ निरोधन (Contraception) किया जा सकता है या गर्भधारण से बचाव किया जा सकता है ।

गर्भ निरोधन को प्रजनन क्षमता का नियमन (Fertility regulation) कह सकते हैं । स्त्री-पुरूष संसर्ग के उपरान्त शुक्राणु (स्पर्म) तथा डिम्ब (ओवम) के मिलन या संयोजन को रोक कर गर्भधारण को रोकना संभव है । यह लक्ष्य डिम्बक्षरण (ovulation) में रूकावट अथवा महिला जनन अगों मे शुक्राणुओं की उपस्थिति को रोक कर अथवा नष्ट कर प्राप्त किया जा सकता है। गर्भधारण से सुरक्षा अथवा गर्भनिरोधन के लिए जिन साधनों का उपयोग किया जाता हैं, उन्हें गर्भनिरोधक ((Contraception) कहते है।

5.5.1 आदर्श गर्भनिरोधक की विशेषताएं

- गर्भधारण को रोकने में सक्षम हो ।
- स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित हो ।
- उपयोग हेतु चिकित्सीय सलाह की आवश्यकता न हो ।
- आवश्यकता होने पर इसके प्रभाव को समाप्त किया जा सके अथवा प्रतिवर्ती (reversible) हो एवं वांछित गर्भधारण संभव हो सके ।
- कीमत कम हो ।
- लम्बे समय तक उपयोग में आने वाला हो ।
- आसानी से उपलब्ध हो ।

वर्तमान में अनेक गर्भनिरोधक उपलब्ध होने के बाद भी, हम यह कह सकते हैं कि उपरोक्त सभी विशेषताओं को पूर्ण करने वाला कोई आदर्श गर्भनिरोधक साधन उपलब्ध नही हैं । यद्यपि इस हेतु लगातार अनुसंधान किये जा रहे हैं ।

5.5.2 गर्भनिरोधक साधनों का वर्गीकरण

गर्भनिरोधक साधनों को कई प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है । इन्हें निम्न प्रकार की श्रेणियों में रख सकते हैं

- प्राचीन एवं आधुनिक
- प्राकृतिक एवं कृत्रिम
- अन्तराल एव स्थायी (spacing and terminal)
- पुरूषों के लिए एवं महिलाओं के लिए ।
- अस्थायी एवं स्थायी (Temporary and Permanent)

यहां गर्भनिरोधक साधनों को स्थायी एवं अस्थायी साधन या विधियों में रख कर सारणी के अन्तर्गत प्रदर्शित किया गया है ।

5.5.3 परिवार नियोजन के विविध विकल्प

दम्पती गर्भनिरोधकों का प्रयोग करके अवांछित गर्भधारण से बच सकते हैं। गर्भनिरोधकों का प्रयोग प्रजनन जीवन के विभिन्न चरणों में किया जा सकता है। विवाह के तुरंत बाद विशेष रूप से पति या पत्नी मे कोई भी 22 वर्ष से कम का हो, तो कण्डोम और खाई जाने वाली गर्भनिरोधक गोलियो जैसे अस्थाई तरीके अपना कर पहले गर्भधारण मे विलम्ब किया जा सकता है। पहले और दूसरे बार के गर्भधारण में पर्याप्त अन्तर रखने के लिए कण्डोम, खाई जाने वाली गर्भनिरोधक गोली और आईयूडी (जैसे कॉपर-टी आदि) का इस्तेमाल किया जा सकता है । दूसरे बच्चे के जन्म के बाद दम्पती कुछ वर्षो तक जब तक कि बच्चा बडा और स्वस्थ न हो जाए, नसबंदी कराने से पहले आईयूडी और गर्भनिरोधक गोलिगों का इस्तेमाल कर सकते हैं ।
प्रत्येक गर्भनिरोधक तरीके के अपने कुछ लाभ और हानियां हैं । स्वास्थ्य कार्यकर्ता या प्रसूति विज्ञान सहायिका को दम्पतियो को गर्भनिरोधकों का प्रयोग करने के बारे में उन्हें प्रेरित करते समय उपलब्ध प्रत्येक तरीके तथा विकल्प के लाभ और हानि के बारे में स्पष्ट रूप से बतलाना चाहिये । दम्पतियों को उनकी अपनी स्थितियों के अनुसार सबसे उपयुक्त लगने वाले तरीके का इस्तेमाल करना चाहिये ।

5.5.4 अस्थायी विधियां

(अ) यांत्रिक साधन (Mechanical Devices)

- **कंडोम**

  कंडोम को व्यापक रूप से जाना जाता है और यह दुनिया भर के पुरूषों द्वारा इस्तेमाल किया जाने वाला गर्भ निरोधक तरीका है । यह गर्भधारण रोकने के अलावा पुरूषों और महिलाओं का यौन संचारित रोगों तथा एचआईवी /एड्स से भी बचाव करता है । कंडोम निरोध नाम से प्रचलित है ।

  भारत सरकार ने तीन सार्वजनिक वितरण हेतु ब्राण्डों के कडोम उपलब्ध कराए हैं - नया चिकनाईयुक्त निरोध, डीलक्स निरोध, सुपर डीलक्स निरोध ।

  ये सामाजिक विपणन कार्यक्रम के अन्तर्गत बाजार में रियायती दामों पर उपलब्ध हैं । निरोध सभी सरकारी अस्पतालों स्वास्थ्य सुविधा केन्द्रों सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और उपकेन्द्रों पर निःशुल्क उपलब्ध है ।

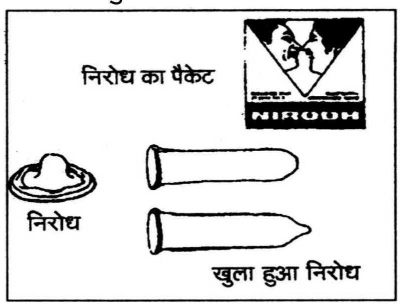

चित्र : कंडोम

कंडोम विभिन्न ब्राण्ड नामों से बाजार में भी उपलब्ध है जैसे डीलक्स, कामसूत्र, कोहिनूर, मस्ती, मूड, उस्ताद, सावन, तमन्ना आदि ।

कण्डोम को सम्भोग से पहले पुरूष के उत्तेजित अंग (शिश्न) पर चढ़ाया जाता है । इसे प्रयोग करने से पहले अन्दर' की हवा निकाल लेनी चाहिए । योनि से निकालते समय इसे सावधानी पूर्वक हटाना चाहिए ताकि सहवास के बाद योनि में वीर्य गिरने न पाए । यौन सम्बंध बनाते समय हर बार नया कण्डोम इस्तेमाल किया जाना चाहिए ।

कण्डोम ठीक तरह से इस्तेमाल किए जाने पर गर्भनिरोधक का कारगर तरीका हो सकता है । कण्डोम शुक्राणु को योनि में प्रविष्ट होने से रोकता है । ठीक तरह से इस्तेमाल न करने तथा कभी कभार इसके फट जाने से यह असफल रहता है । कण्डोम की असफलता दरों में भिन्नता है।

कण्डोम के प्रयोग से यौन संचारित रोगों और एड्स से सुरक्षा मिलती है ।

कण्डोम के लाभ -

– इन्हें आसानी से इस्तेमाल किया जा सकता है ।
– सुरक्षित और किफायती ।
– इस्तेमाल करने में आसान, चिकित्सीय देखरेख की आवश्यकता नही ।
– कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं ।
– ठीक तरह से इस्तेमाल किए जाने पर यौन संचारित रोगों तथा एचआईवी / एड्स से कारगर सुरक्षा ।

कण्डोम की हानियां -

– यौन संसर्ग के मध्य फटने अथवा फिसलने की आशंका ।
– सहवास अनुभूति संबंधी कुछ शिकायतें ।
– असफलता की दर 2-3 प्रतिशत ।

- **फीमेल कण्डोम (फेमीडोम)**

यह महिलाओं के प्रयोग हेतु बनाया गया सबसे नवीन तथा सरल साधन है । महिला निरोध (फेमीडोम) महिलाओं को गर्भधारण से मुक्ति के साथ प्रजनन मार्ग संचारित अनेक समस्याओं तथा यौन सम्बंधी रोगों से भी बचाता है ।

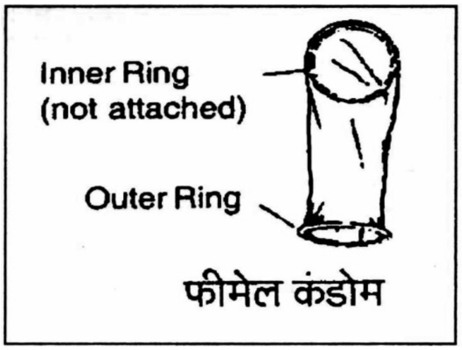

चित्र : महिला कंडोम

(ब) रासायनिक साधन (Chemical Devices)

यह महिलाओं के प्रयोग हेतु है तथा इस श्रेणी में झागदार गोलियां, क्रीम, घुलनशील फिल्म आदि आते हैं । वर्तमान में इनका प्रयोग काफी कम हो गया है अथवा कण्डोम आदि के साथ इन्हें अतिरिक्त गर्भनिरोधक सुरक्षा के तौर पर प्रयोग करते हैं । समागम से कुछ समय पूर्व इन्हें योनि में रखना होता है । योनि में जलन, अधिक असफलता इत्यादि के कारण भी इन्हें महिलाओं द्वारा नापसन्द किया जाता है ।

(स) हॉर्मोनयुक्त साधन (Hormonal Methods)

हॉर्मोन युक्त गर्भनिरोधक जन्मों में अन्तराल रखने के प्रभावी एवं अति प्रचलित साधन है । हॉर्मोनयुक्त गोलियों (पिल्स) की लोकप्रियता का अनुमान इस तथ्य से भली भांति लगाया जा सकता है कि इस समय विश्व में लगभग 100 मिलियन और भारत में लगभग 8.2 मिलियन महिलाएं इन गर्भनिरोधक खाने वाली गोलियों का उपयोग कर रही हैं । इन गोलियों में मुख्यत: इस्ट्रोजन (oestrogen), प्रोजेस्टोजेन (Progestogen) हॉर्मोन का प्रयोग होता है । अनेक आविष्कारों के पश्चात् पुरूषों के लिए सुरक्षित गर्भनिरोधक गोली उपलब्ध नहीं हो सकी हैं । महिलाओं के लिए प्रयोग की जाने वाली गर्भनिरोधक गोली आसान, सुरक्षित कारगर, बच्चों के जन्म में अंतराल रखने हेतु उपयुक्त साधन है । ये दैनिक अथवा साप्ताहिक उपयोग हेतु हो सकती हैं । ये गोलियां सरकार द्वारा निम्न ब्रांडों में उपलब्ध कराई जा रही हैं:-

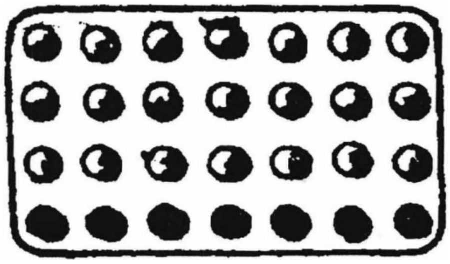

चित्र : ओरल पिल्स

(i) **माला-एन:** यह सरकारी अस्पतालों, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और उपकन्द्रों के माध्यम से निशुल्क वितरित की जाती है ।

(ii) **माला-डी:** यह गोली सामाजिक विपणन योजना के अन्तर्गत केमिस्ट की दुकानों, पंसारी की दुकानों, पान की दुकानो आदि के माध्यम से प्रति पैकेट 2 रूपए के बहुत ही रियायती मूल्य पर बेची जाती है । इन गोलियों के इस्तेमाल को और बढावा देने के लिए इन कम्पनियों को अपने ब्राण्ड नाम की गर्भनिरोधक गोलिया बेचने की भी अनुमति प्रदान की गई है । ऐसी गोलियां 'एक रोज', 'पर्ल', 'मोती', 'च्वइस' आदि के रूप में बेची जा रही है । इनके प्रत्येक चक्र की कीमत 3 रूपये से 7 रूपये तक है । माला एन और माला डी के प्रत्येक पैकेट में 28 गोलियां (21 सफेद हार्मोनल गोलियां तथा 7 संतरे के रंग वाली रंगीन गोलियां) होती हैं ।

- **गोलियों (पिल्स) की कार्यप्रणाली**

ये गोलियां गर्भाशय मुख को संकरा करके डिम्बाशय से डिम्ब को आने से रोकती हैं और गर्भाशय के आंतरिक परत में प्रत्यारोपण को प्रभावित करती हैं ।

गर्भनिरोधक गोलिया गर्भधारण को रोकने में लगभग शत प्रतिशत सफल रहती हैं । ये गोलियां लेते समय महिला का मासिक चक्र नियमित रहता है । रक्तस्त्राव सामान्यतया कम हो सकता है और मासिक चक्र के दौरान कोई दर्द नहीं होता है । जब महिला गर्भवती होना चाहे तो उसे केवल ये गोलियां लेनी बन्द कर देनी होती है । इन्हें जब तक चाहें, लगातार इस्तेमाल किया जा सकता है ।

चित्र : मला - गर्भ-निरोध गोलियां

- **गर्भनिरोधक गोलियों के इस्तेमाल के प्रतिकूल लक्षण**

  यद्यपि खाई जाने वाली गर्भनिरोधक गोलियां युवा और स्वस्थ महिलाओ के लिए सुरक्षित गर्भनिरोधक है, फिर भी यह सलाह दी जाती है कि इसे इस्तेमाल करने वाली महिला को सेवन आरम्भ करने के तीन माह के अन्दर डाक्टर से अपनी जांच करा लेनी चाहिए । निम्नलिखित मे से किसी एक स्थिति के होने पर महिलाओं को ये गोलियां नही लेनी चाहिए ।

– गर्भधारण की सम्भावित / निश्चित स्थिति ।
– अनियमित, बिना कारण योनि से रक्तस्त्राव होने पर ।
– 6 माह से कम के शिशु को स्तनपान कराने पर ।
– हृदय रोग / वेनस थोम्बोसिस बीमारी ।
– उच्च रकत दाब
– मधुमेह
– गर्भावस्था के दौरान अथवा पिछले 6 महीनों में पीलिया हुआ हो ।
– यकृत और पित्ताशय रोग ।
– रक्ताल्पता की सम्भावना / गम्भीर स्थिति ।

महिलाएं यदि अन्य गर्भनिरोधक उपयुक्त न पाएं तो निम्नलिखित स्थितियों में सावधानीपूर्वक चिकित्सीय देखदेख में खाई जाने वाली गर्भनिरोधक गोलियो का उपयोग कर सकती हैं ।

– 40 वर्ष से अधिक आयु । यदि वे धूम्रपान करती हैं तो 35 वर्ष से अधिक आयु ।

– तेज सिरदर्द ।
– माइग्रेन
– मिरगी
– तीव्र एलर्जी
– मोटापा

- **गोली लेने की विधि**

महिला गर्भनिरोधक गोली को मासिक धर्म के 5वे दिन से लेना आरम्भ कर सकती है (रकतस्राव के पहले दिन को पहला दिन मान कर) पहली गोली 'स्टार्ट' चिन्हित से शुरू करें । निशान के अनुसार दिन की एक गोली लेना जारी रखे । गोली खास समय पर रात्रि भोजन के बाद अथवा सोने से पहले ली जा सकती है । 21 दिन तक एक-एक सफेद गोली लेने के बाद अगले 7 दिन तक संतरे के रंग वाली गोली दिन मे एक बार लेनी है । संतरे के रंग वाली गोली लेते समय मासिक धर्म चक्र नियमित रहेगा । ऐसी स्थिति में भी गोली लेना न छोडें ।

जब सतरे के रंग वाली गोलियां समाप्त हो जाएं तो नए पैकेट से उसी तरह शुरू करें जैसा पहले बतलाया गया है । नया पैकेट संतरे के रंग वाली अंतिम गोली लेने से पहले एक ही दिन से शुरू किया जाना है चाहे मासिक धर्म चल रहा हो अथवा शुरू न हुआ हो ।

गोलियों का एक पैकेट हमेशा तैयार रखा जाना चाहिए ताकि अगली गोली बिना कोई नागा किए ली जा सके । गर्भ धारण को रोकने के लिए गोली नियमित रूप से और निरन्तर लेना जरूरी है । यदि गर्भधारण करना चाहें तो इन गोलियों का प्रयोग बन्द कर दें ।

यह याद रखना जरूरी है कि प्रति दिन एक गोली तब तक लेना जरूरी है जब तक गोलियों का पैकेट समाप्त नहीं हो जाता और उसके खत्म होते ही अगला पैकेट आरम्भ करें ।

- **यदि गोली लेना भूल जाएं**

यदि किसी रात गोली लेना भूल जाएं तो अगले दिन जैसे ही याद आए गोली ले लें । अगली गोली रात को हमेशा की तरह लें । दूसरे शब्दों मे गोली छूट जाने के बाद अगले दिन दो गोली लेनी होंगी । यदि गोली दो-तीन बार लेनी छूट जाए तो गोली लेना जारी रखें लेकिन अगले चक्र के आरम्भ होने तक निरोध जैसे गर्भनिरोधक तरीकों का उपयोग भी करें।

- **लाभकारी प्रभाव**

खाई जाने वाली गर्भनिरोधक गोलियों का नियमित इस्तेमाल गर्भधारण के रोकने में बहुत प्रभावकारी होने के साथ साथ इनके कई लाभप्रद प्रभाव भी हैं:

– ये मासिक धर्म चक्र को नियमित करती हैं, मासिक धर्म के शुरू होने के पहले के तनाव को दूर करती हैं । ऐसे समय में होने वाले रक्तस्त्राव में कमी लाती हैं । इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप में रक्ताल्पता की सम्भावना कम करती हैं ।
– इन गोलियों के इस्तेमाल से गर्भाशय के बाहर गर्भधारण की घटनाओं में कमी आती है जो कि जान -लेवा स्थिति होती है

– इससे सुसाध्य स्तन कैंसर, डिम्बाशय सिस्ट तथा महिलाओं मे चार सबसे आम कैंसरों - (i) गर्भाशय का कार्सीनोमा (ii) डिम्बाशय का कार्सीनोमा (iii) स्तन-कार्सीनोमा तथा (iv) सर्विक्स कार्सीनोमा से भी सुरक्षा मिलती है ।

- **प्रतिकूल प्रभाव**

  इस समय इस्तेमाल किए जा रहे कम खुराक वाली गोलियों के प्रतिकूल प्रभाव बहुत कम हैं । फिर भी कुछ सूचित प्रभाव इस प्रकार हैं -

  खाई जाने वाली गर्भनिरोधक गोली इस्तेमाल करने वाली महिलाओं को अनुभव होने वाले छोटे-मोटे प्रतिकूल प्रभाव मतली, उल्टी, स्तनों का नरम होना, सिरदर्द, अवसाद, साधारण रक्तचाप (जो गोलियां बन्द करने के बाद प्राय: नहीं होता), वजन बढ़ना, रक्तस्राव आदि हैं जबकि गोलियों के बड़े प्रतिकूल प्रभाव बहुत कम हैं । सूचित प्रभावों में उच्च रक्तचाप का अधिक खतरा, दिल का दौरा अथवा बेनस थ्रोम्बोसिस हैं । ये जटिलताएं 35 वर्ष से अधिक उम्र की महिलाओं में, जो धूम्रपान करती हैं और जो 5 वर्ष से अधिक समय से इन गोलियों का इस्तेमाल कर रही हैं, हो सकती हैं । भारत में इन गोलियों की अधिकांश उपयोगकर्ता युवतियां होती हैं जो धूम्रपान नहीं करती हैं और 5 वर्षो तक गोलियों का इस्तेमाल भी नही करती हैं इसलिए इनके प्रतिकूल प्रभाव बहुत कम हैं ।

- **डॉक्टर से कब परामर्श लें**
- यह सलाह दी जाती है कि खाई जाने वाली गर्भनिरोधक गोली का इस्तेमाल करने वाली महिला को डॉक्टर की सलाह लेनी चाहिए, यदि -

– संतरे रंग की गोली लेते समय दो लगातार चक्रों में मासिक धर्म नहीं हो ।
– प्रतिकूल प्रभाव लम्बे समय तक बने रहे और निम्नलिखित शिकायते हों -
– पेट में तेज दर्द
– छाती में दर्द
– सांस लेने मे कठिनाई
– सिरदर्द
– तीव्र दर्द
– दृष्टि में कमी
– पांवों में तेज दर्द या गोलियों के सेवन करने से सूजन

- **गर्भ निरोधक गोलियों के लाभ**

– सही तरीके से लेने पर अवांछित गर्भधारण से सुरक्षा में बहुत कारगर ।
– मासिक धर्म नियमित होता है, मासिक रक्तस्त्राव कम, मासिक धर्म के समय कम कष्ट ।
– किशोरावस्था से लेकर रजोनिवृति तक किसी भी उम्र में इस्तेमाल की जा सकती हैं ।
– गोलियो का सेवन बन्द कर देने के बाद प्रजनन वापस ।
– डिम्बाशय और गर्भाशय कैंसर तथा गर्भाशय से बाहर गर्भधारण को रोकन में सहायक ।
– श्रोणिदाहक रोगों को रोकने में मदद ।
– इस्तेमाल करने में आसान ।

- **गर्भनिरोधक गोलियों के बारे मे मिथक / भ्रांतियाँ -**

मुँह से खाई जाने वाली गोलियों से संबंधित कुछ मिथक हैं । परन्तु सच्चाई बिल्कुल अलग है । प्रसूति विज्ञान सहायिका तथा स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को लाभार्थियों के दिमाग से शंकाओं को दूर करने का प्रयास अवश्य करना चाहिए ।

मिथक	वास्तविकता
1. गोलियों से कैंसर हो सकता है	– गोलियाँ डिब्बाशय और गर्भाशय के कैंसर से बचाव करती हैं – स्तन कैंसर के बढ़ते जोखिम का कोई खतरा नहीं
2. गोलियों से बांझपन होता है।	– गोलियों से स्थाई बांझपन नहीं होता है । – गोलियों का सेवन बंद करने के बाद ज़्यादातर महिलायों मैं प्रजनन शक्ति वापिस आ जाती हैं
3. गोलियां महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं ।	– वर्तमान मै प्रयोग मै आने वाली गोलियों मै बहुत कम हार्मोन होते है, और इनसे बड़ी जटिलताएं नहीं होती है। – लाखों महिलाओं पर हुए परीक्षणों से यह सिद्ध हुआ है कि जब सावधानीपूर्वक और जांच करके इन गोलियों को दिया जाता है तो इसके दुष्परिणाम स्थायी नहीं होते हैं । – गर्भधारण और बच्चे को जन्म देने की अपेक्षा गोलियां लेना सुरक्षित है ।
4. बच्चे में विकृति हो सकती है	– यदि गर्भावस्था के निदान से पहले गोलियों का प्रयोग कर लिया जाता है तो भी भ्रूण में असामान्यताओं का खतरा नहीं होता है ।
5. गोलियों को बीच-बीच में रोक देना चाहिए	– गोलियों का सुरक्षित प्रयोग लगातार तब तक किया जा सकता है जब तक कि इच्छा हो। – दूसरे गर्भनिरोधक के प्रयोग के बिना गोलियों को रोक देने से अवांछित गर्भधारण भी हो सकता है ।

गर्भ निरोधक गोलियों की हानियाँ

– यौन संचारित रोगों के प्रति सुरक्षा प्रदान नहीं करती ।
– छोटे-मोटे विपरीत प्रभाव जैसे मतली, सिरदर्द, स्तनों का नरम होना और रक्तस्त्राव ।
– बहुत कम मामलों में आघात, पैरों की गहरी नसों में रक्त के थक्के अथवा दिल का दौरा ।
– उच्च जोखिम पर वे महिलाएं होती हैं जिनको उच्च रक्तचाप होता है और जिनकी आयु 35 वर्ष से ज्यादा होती है और धूम्रपान भी करती हैं ।
– रोज गोली लेने की बाध्यता ।

(iii) खाई जाने वाली साप्ताहिक गर्भनिरोधक गोली : सेंटक्रोमन

केन्द्रीय औषध अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा विकसित साप्ताहिक गर्भनिरोधक गोली सेंटक्रोमन एक नान-स्टीरोइडल और नान-हार्मोनल गर्भनिरोधक गोली है जो मतली, उल्टी, चक्कर जैसे आनुवंशी प्रभावों अथवा मोटापन थ्रोम्बोटिक घटनाओं जैसे अन्य प्रभावों से वस्तुत: मुक्त है । इसे उन सभी प्रजनक आयु समूह की महिलाओं को दिया जा सकता है जो अपने बच्चों में अंतराल रखना चाहती हैं ।

पहली गोली मासिक धर्म की अवधि के पहले दिन मुख से लेनी होती है और तत्पश्चात सप्ताह में दो बार, तीन दिनों के बाद तक प्रत्येक सप्ताह, तीन महिनों तक उसके पश्चात सप्ताह में उसी दिन एक बार उस समय तक लेनी पड़ती है जब तक कि गर्भनिरोधन सुरक्षा की इच्छा हो ।

यह 'सहेली' के नाम से प्रसिद्घ है और यह बाजार में मुक्त रूप से उपलब्ध है प्रत्येक गोली में 30 मिग्रा सेंटक्रोमन विद्‌यमान होता है । इसका कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं होता है । तथापि सेंटक्रोमन का प्रयोग करने वाली 80% महिलाओं में मासिक धर्म चक्र 45 दिनों से अधिक होता है ।

(iv) असुरक्षित सहवास पश्चात ली जाने वाली गोली (इमरजेन्सी कांटासेप्टिव या पिल)

यह गोली असुरक्षित यौन सम्बन्ध, बलात्कार गर्भनिरोधक की असफलता की अवस्था मे ही आपातकाल के तौर पर ली जानी चाहिए वर्तमान मे यह ईसी (Energency Contraceptive) या आपातकालीन गर्भनिरोधक के रूप में उपलब्ध होने लगी है । सामाजिक विपणन कार्यक्रम के अन्तर्गत भी ई.सी. गोलियां स्वारथ्य केन्द्रों पर मिलने लगी है ।

(द) हार्मोन युक्त अन्य साधन

इनमें गर्भनिरोधक इंजेक्शन (जैसे नेट-इन), योनि रिंग अथवा त्वचा पर चीरा लगाकर इसमै अन्दर रखे लाने वाले कैप्सुल या रोड (Capsule/Rod) इत्यादि शामिल हैं । इनका एक गर्भनिरोधक के तौर पर एक निश्चित अवधि तक प्रभाव रहता है । इनमें गर्भनिरोधक इंजेक्शन को छोडकर अन्य लोकप्रिय नहीं हैं ।

(य) अन्तर्गर्माशयी साधन (Intra-uterine Devices)

अन्तर्गर्भाशयी विधियां परिवार नियोजन के ऐसे साधन हैं जिन्हें गर्भाशय में रखा जाता है तथा ये गर्भधारण से सुरक्षा प्रदान करते हैं । ये औषध विहीन (जैसे लूप) अथवा औषधयुक्त (जैसे कॉपर-टी) हो सकते हैं । यहाँ पर अत्याधिक प्रचलित एवं महिलाओं की पसंद Cu.T(कॉपर-टी) के विभिन्न पक्षो का वर्णन किया जा रहा है ।

- **कॉपर-टी (Cu.T)**

कॉपर T अंग्रेजी के अक्षर T(टी) आकार की छोटी युक्ति है जो पोलिथिलोन की बनी होती है जिसमें शीर्ष के चारों ओर तांबे की तार लिपटी होती है तथा शीर्ष के निचले छोर पर जुडे हुए धागे सहित दोनों क्षैतिज पर तांबे की दो नलियां होती हैं । इसे योनि मार्ग से महिलाओं के गर्भाशय में डाला जाता है । **राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम में 2002 से कॉपर-T 380"ए" का प्रयोग किया जा रहा है ।** कॉपर-T डिम्ब के प्रसार को रोकने के साथ

साथ ऊपरी जननाग मार्ग में शुक्राणओं को रोकने का कार्य करती है जिससे शुक्राणु तथा अण्डाणु के मेल मे रूकावट होती है । यह गर्भाशय की लाइनिंग में बाहय शारीरिक प्रतिक्रिया उत्पन्न करने का कार्य भी करती है जिससे गर्भाशय में अण्डाणु के आरोपण में रूकावट आती है ।

कॉपर-T अत्यधिक प्रभावी प्रतिवर्ती गर्भनिरोधक तरीकों में से एक है और यह एक बार लगाने के बाद 8-10 वर्षों तक प्रभावी रहती है । यह गर्भ की रोकथाम के लिए एक बारगी सुविधाजनक तरीका है और यौनेच्छा अथवा संभोग मे बाधा उत्पन्न नहीं करता । अभी तक केवल हाल ही की 20% विवाहित महिलाएं गर्भ की रोकथाम के तरीके के रूप में कॉपर-T का प्रयोग करती है । तीन सामान्य कमियों के कारण भारत में कॉपरा-T का प्रयोग निम्न है, पहला महिलाओं को यह सलाह नहीं दी जाती कि कुछ सप्ताह तक थोड़ी असुविधा की संभावना होगी और ऐसी असुविधा को कॉपर-Tहटाने का कारण नहीं बनाना चाहिए । दूसरा ए.एन.एम. / स्वास्थ्य कर्मियों की कार्यकुशलता अपर्याप्त है जिससे समस्याए उत्पन्न हो रही हैं जिसके कारण कॉपर-T को शीघ्र हटा दिया जाता है । तीसरा, महिलाओं की यौन संचारित रोग / जनन मार्गीय संक्रमण के लिए जांच नहीं की जा रही है । ऐसी महिलाओं में कॉपर-T लगाने से अत्यधिक जटिलताएं उत्पन्न हो जाती हैं जिसके कारण कॉपर-टी को शीघ्र हटा दिया जाता है । सर्वाधिक सामान्य प्रभाव लंबे समय तक रक्तस्त्राव, पेट में मरोडें आदि होना है । तथापि अधिकांश महिलाओं में सामान्य मासिक धर्म पैटर्न प्रयोग के 3-6 महीनो के भीतर पुन: सामान्य हो जाता है ।

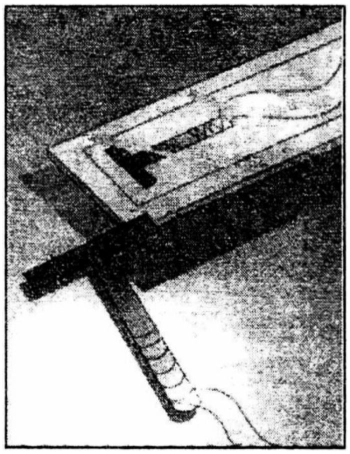

चित्र : कॉपर टी

- **कॉपर-T लगवाने का समय**

प्रजनन आयु समूह वाली कोई भी महिला, जो दो बच्चों के बीच अंतराल रखना चाहती हो अथवा गर्भधारण से बचना चाहती हो, वह कॉपर-टी लगवा सकती है । यह दो बच्चों वाले उन दम्पतियो के लिए भी उपयुक्त है जिनके छोटे बच्चे की उम्र 5 वर्ष से कम है और वे नसबंदी करवाने का निर्णय लेने से पहले इस तरीके को अपना सकते हैं । कॉपर-टी लगाने का सुरक्षित एवं इष्टतम समय मासिक धर्म के अतिम दो दिन हैं किन्तु इसे अतिम

मासिक धर्म की अवधि के 7-10 दिनों के भीतर भी लगाया जा सक्ता है । इसे गर्भ के चिकित्सीय समापन के तत्काल बाद भी लगाया जा सकता है अथवा गर्भपात के पश्चात पहले मासिक धर्म अवधि के बाद भी लगाया जा सकता है। इसे स्तनपान कराने वाली माताओं में गर्भावस्था की स्थिति न होने पर लगाया जाना चाहिए।

- **कॉपर-टी लगाने के लिए प्रति-संकेत (Contra-indications for Uc.T)**

  निम्नलिखित स्थितियों में कॉपर-टी नही लगाई जानी चाहिए :-

– गर्भावस्था
– 8 ग्राम % से कम हीमोग्लोबिन वाली रक्ताल्पता
– अत्यधिक और अनियमित मासिक धर्म रक्तस्त्राव
– सक्रिय जननमार्गीय संक्रमण
– गर्भाशय के बाहर गर्भधारण का पूर्व-इतिहास
– सीजेरियन सेक्शन का पूर्व इतिहास
– हृदय रोग, मधुमेह इत्यादि जैसी चिकित्सा विकृतियां या रोग

- **कॉपर-टी लगवाने का स्थान**

  कॉपर-टी लगाने की सुविधा सभी सरकारी अस्पतालों /स्वास्थ्य केन्द्रो, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों और उप-केन्द्रों पर उपलब्ध है और इसे चिकित्सा अधिकारी अथवा प्रशिक्षित महिला स्वास्थ्यकर्मी द्वारा लगाया जाता है ।

- **प्रतिकूल प्रभाव**

1. कॉपर-टी लगवाने के बाद एक सप्ताह अथवा इससे अधिक की अवधि तक थोड़ा रक्तस्त्राव हो सकता है किन्तु यह धब्बे के रूप मे अथवा सामान्य मासिक धर्म अवधि से अधिक नहीं होता है । यदि रक्तस्त्राव अत्यधिक और लंबे समय तक हो तो प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्सा अधिकारी से परामर्श लिया जाना चाहिए ।
2. पहले कुछ दिनों तक पेट में कुछ दर्द अथवा मरोड हो सकता है जो दर्दनिवारक औषधियों से कम हो जाता है ।
3. इससे संक्रमण हो सकता है जिससे योनिस्त्राव दर्द तथा ज्वर हो सकता है ।
4. कॉपर-T बाहर निकल सकती है । यदि इसे निकाला जाए अथवा कॉपर-टी के धागे को महसूस न किया जा सके अथवा मासिक धर्म न हो, तो प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्सा अधिकारी को इसकी सूचना तत्काल दी जानी चाहिए ।
5. बहुत कम मामलों में गर्भाशय में छेद हो सकता है ।
6. कॉपर-T के अपनी जगह पर होने पर गर्भधारण कभी कभार ही हो सकता है । ऐसी स्थिति में वह महिला, कॉपर-T को हटाए बगैर भी गर्भ का चिकित्सकीय समापन, कर सकती है । यदि सामान्य से तीव्र दर्द, योनि स्त्राव दुर्गन्ध, पेट से निचले भाग में तीव्र दर्द अथवा मरोड़ हो जो उपचार से ठीक न हो रहा हो तो कॉपर-T हटाने का अनुरोध भी किया जा सकता है । यदि महिला की दूसरे बच्चे की इच्छा हो तो कॉपर-T हटाया जा सकता है ।

- **परामर्श**

किसी भी महिला को कॉपर-T लगाने की सलाह देने से पहले, महिलाओं / दम्पतियो को निम्नलिखित जानकारी दी जानी चाहिये । इस परामर्श सेवा में प्रसूति विज्ञान सहायिका / ए.एन.एम. तथा अन्य स्वास्थ्यकर्मी प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं ।

1. यह परिवार नियोजन के सर्वाधिक प्रभावी तथा प्रतिवर्ती तरीकों में से एक है ।
2. बच्चों में अंतराल रखने का यह एक आदर्श तरीका है क्योंकि यह स्तनपान कराने वाली महिलाओं में दूध की गुणवत्ता पर कोई प्रभाव नहीं डालती है ।
3. इच्छा होने पर इसे आसानी से हटाया जा सकता है ।
4. यह लम्बे समय तक लगातार गर्भधारण सुरक्षा प्रदान करती है ।
5. इसे लगाने की प्रक्रिया सरल है और इसे लगाने का इष्टतम समय मासिक धर्म की अवधि के अंतिम दो दिन अथवा एमटीपी के तत्काल बाद है लेकिन इसे अंतिम मासिक धर्म अवधि के पश्चात 7- 10 दिनो के भीतर लगाया जा सकता
6. यह यौन सुख, कामशक्ति पर प्रभाव नहीं डालती है और न ही पति को क्षति पहुंचाती है।
7. एक महिला में कॉपर-T हटाने के पश्चात गर्भधारण करने की संभावनाओं पर प्रभाव नहीं डालती है ।
8. आई यू डी लगाने वाली महिला द्वारा धागे की स्वत: जांच अनिवार्य है ।
9. कॉपर-T से कैंसर नहीं होता है ।
10. इसकी विफलता की संभावना 1-3% है ।
11. कभी कभार गर्भाशय में छेद हो सकता है ।

- **लाभ**

– एक बारगी का अत्यधिक प्रभावी तरीका, जिसमें याद रखने के लिए कुछ नही है ।
– लम्बे समय तक चलने वाली, एक बार लगाने के बाद यह 8-10 सालों तक चलती है ।
– यौन सम्बन्धों में बाधा उत्पन्न नहीं करती है ।
– तत्काल प्रतिवर्ती (बाहर निकाली जा सकती है)

- **हानि**

– मासिक धर्म के दौरान रक्तस्त्राव अथवा धब्बों, मरोड़ों अथवा दर्द के रूप में मुख्यत: पहले तीन महीनों के दौरान, मासिक धर्म परिवर्तन जैसे सामान्य प्रभाव पाये जा सकते हैं ।
– कॉपर-टी का बाहर निकल जाना ।

र) गर्भधारण के पश्चात साधन (Post Conceptinoal Methods)

ये गर्भ समापन विधियां हैं तथा इस हेतु मासिक चक्र नियमन या प्रेरण एवं गर्भपात के तरीके अपनाये जाते हैं, जिनका संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है -

- **मासिक चक्र नियमन**

मासिक चक्र नियमन मे मासिक ठहराव के 6 से 14 दिन के मध्य गर्भाशयी अन्तर्वस्तुओं (Uterine Contents) का आचूषण (Aspiration) कर लिया जाता है, यह प्रारम्भिक गर्भपात के समान ही है।

- **गर्भपात (Abortion/MTP)**

भ्रूण के स्वतंत्र जीवित रहने की अवस्था से पूर्व ही गर्भ का समाप्त होना, गर्भपात है । यह अवधि लगभग 28 सप्ताह होती है । गर्भपात अनेक कारणों से करवाये जाते हैं । संतति नियंत्रण भी इनमें से एक है, मातृ मृत्यु एवं रूग्णता दर को कम करने हेतु भारत सरकार ने गर्भपात के विषय में कानून बनाकर (1971) इसे चिकित्सकीय स्वरूप एवं मान्यता प्रदान की है । जिसे चिकित्सकीय गर्भ समापन (M.T.P.)कहते हैं । जो कि परिवार नियोजन कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण पक्ष है ।

- **गर्भ का चिकित्सकीय समापन (Medical Termination of Pregnancy-M.T.P)**

  गर्भपात को कानूनी रूप प्रदान करने के लिये भारत सरकार ने गर्भ चिकित्सकीय समापन कानून 1971 में पारित किया तथा 1975 में इसे संशोधित किया। यह निम्न तीन घटकों पर केन्द्रित है-

1. वे स्थितियाँ, जिनके कारण गर्भ का समापन किया जा सके ।
2. इस प्रकार के समापन हेतु अधिकृत व्यक्ति कौन है?
3. वे स्थान, जहाँ गर्भ समापन किया जा सके ।

चिकित्सकीय समापन की स्थितियाँ (conditions of M.T.P)

1. चिकित्सकीय आधार जहाँ गर्भ जारी रहने से मां का जीवन खतरे में पड़ जावे अथवा उसके शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को गम्भीर क्षति होने की आशंका हो ।
2. मानवीय आधार जहाँ बलात्कार के कारण गर्भ ठहरा हो ।
3. शिशु विकृति जहाँ शिशु के गम्भीर असामान्यताओ या विकृतियों के साथ जन्म लेने का खतरा हो ।
4. सामाजिक आर्थिक आधार जहाँ सामाजिक एवं आर्थिक वातावरण से माँ के जीवन को खतरा हो ।
5. गर्भनिरोधको की असफलता : जहाँ गर्भनिरोधक उपकरणो या साधनों की असफलता के कारण गर्भधारण हो तथा मां को मानसिक आघात पहुंचा हो ।

- **चिकित्सकीय गर्भ समापन हेतु अधिकृत व्यक्ति**

  स्त्री एवं प्रसूति रोग विज्ञान में विशेषज्ञ अथवा पंजीकृत चिकित्सक, 12 सप्ताह के गर्भ का समापन कर सकते हैं, जबकि 20 सप्ताह तक गर्भसमापन हेतु 2 पंजीकृत चिकित्सको का होना आवश्यक है। संशोधित नियम 1975 के तहत जिले के मुख्य चिकित्सा अधिकारी को, किसी चिकित्सक को गर्भ समापन की योग्यता प्रमाण पत्र देने हेतु अधिकृत किया गया है।

- **गर्भसमापन स्थल एवं सहमति पत्र**

  गर्भपात राजकीय एवं गैर राजकीय चिकित्सा संस्थानों में किया जा सकता है किन्तु इस हेतु जिले के मुख्य चिकित्सा अधिकारी से प्रमाण पत्र लेना आवश्यक है । महिला का व्यस्क होना तथा गर्भ समापन हेतु सहमति पत्र पर उसके हस्ताक्षर होना आवश्यक है । 18 वर्ष से कम अथवा 18 वर्ष से अधिक की अविवाहित युवती के गर्भ समापन हेतु संरक्षक की लिखित सहमति आवश्यक है । गर्भपात सेवाओं को अत्यन्त गोपनीय रखा जाता है ।

- **गर्भपात की हानियां**

– रक्तस्त्राव
– संक्रमण (स्थानीय व दैहिक)
– मनोवैज्ञानिक एवं धार्मिक समस्याऐं
– गर्भाशय वेधन (Perforation of Uterus)

(ल) विविध विधियां

(i) ब्रहमचर्य या यौन संसर्ग नहीं

ब्रहमचर्य के द्वारा गर्भधारण से शत प्रतिशत मुक्ति सम्भव है । यह विधि भारत के ऋषि-मुनियों द्वारा प्रतिपादित यौन संयम की पराकाश्ता है । गृहस्थ दम्पती कठोर श्रम एवं इन्द्रिय निग्रह के द्वारा ही गर्म निरोध की इस विधि को अपना सकते हैं । व्यवहारिक तौर पर यह विधि अनुपयुक्त है ।

(ii) सम्भोग अपक्रम या अन्तरित समागम (Coitus Interruptus)

यह भी प्रजनन रोकने का पुराना तरीका है। समागम में स्खलन से पूर्व, पुरूष, जनन अंग (शिश्न) को योनि से बाहर निकाल वीर्यपात करता है। इस विधि हेतु स्त्री पुरूष को सतत् अभ्यास तथा संयम की आवश्यकता होती है तथापि इसकी असफलता दर बहुत अधिक है। इसके अतिरिक्त इस तरीके से श्रोणि संकुलन (Pelvic congestion), चिंता, मानसिक तनाव जैसी जटिलताऐं उत्पन्न हो सकती हैं ।

(iii) संतति निग्रह टीका (Birth Control Vaccine)

पुरूषों एवं महिलाओं के लिए, ऐसे टीके की खोज जारी है जो प्रभावी गर्भनिरोधक का कार्य कर सके, साथ ही आवश्यकता होने पर प्रजनन क्षमता पुन: अर्जित की जा सके; अभी तक इस विषय मे सफलता का प्रतिशत नहीं है ।

(iv) मासिक चक्र गणना आधारित साधन (Devices Related to Menstrual Cycle calculation) -

- **सुरक्षित काल (Safe Period)**

इसे कैलेण्डर प्रणाली भी कहते हैं । मासिक धर्म के व सप्ताह पूर्व तथा एक सप्ताह बाद तक सुरक्षित अवधि समझी जाती है अर्थात 28 दिन के नियमित मासिक चक्र वाली महिला के लिये प्रथम 10 दिन तथा मासिक धर्म से पूर्व 7 दिन (अतिम 7 दिन) यौन समागम हेतु सुरक्षित माने जा सकते हैं । इस विधि की असफलता दर लगभग 24 प्रतिशत है । मासिक चक्र की अनियमितता तथा गणना की जटिलता के कारण सुरक्षित अवधि सबसे अधिक असुरक्षित अवधि हो सकती है ।

(v) आनुवांशिकी अभियांत्रिकी (Genetic Engineering)

टीकों के द्वारा सतति निग्रह तथा आनुवांशिकी अभियांत्रिकी की सहायता से गर्भ निरोधकता प्राप्त करने के प्रयास जारी हैं किन्तु इस दिशा में अनेक अनुसंधानों के बाद भी सुरक्षित सफलता प्राप्त नहीं हो पाई है। सन् 2010 तक परिवार नियोजन के साधनों में बाई सैक्यूअल बिकनी, कंडोमयुक्त अडरपैट, एरासोल स्प्रे, जैल इत्यादि विकसित होने की संभावनाए हैं ।

5.5.5 परिवार नियोजन की स्थायी विधियाँ (Permanent Method of Family Planning)

पुरुष अथवा महिला का बंध्यीकरण (Sterilzation) गर्भनिरोधन की स्थायी विधियां हैं । पुरूषों में इसे नसबंदी या वैसेक्टोमी (Vasectomy)तथा महिलाओं मे नसबंदी (नलबदी) या टयूबैक्टोमी (Tubectomy)कहते हैं । बंध्यीकरण हेतु व्यक्ति का चयन कुछ प्रतिमानो के आधार पर किया जाता है । पुरूष एवं महिला नसबदी का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है ।

(अ) महिला नसबदी (Tubectomy)

नसबदी अधिकांश महिलाओं के लिए आकर्षक विकल्प है क्योंकि उन्हें भविष्य मे कुछ नहीं करना होता और यह एक बारगी प्रक्रिया हे । तथापि यह अनिवार्य है कि नसबंदी कराने का निर्णय विचारपूर्वक और स्वेच्छा से किया जाए ।

औसतन अधिकतम सख्या में नसबंदी तब की जाती है जब स्त्री की आयु लगभग 28-37 वर्ष के भीतर होती है । यह वह आयु है जब वे अपना इच्छित पारिवारिक आकार पूरा कर लेती हैं ।

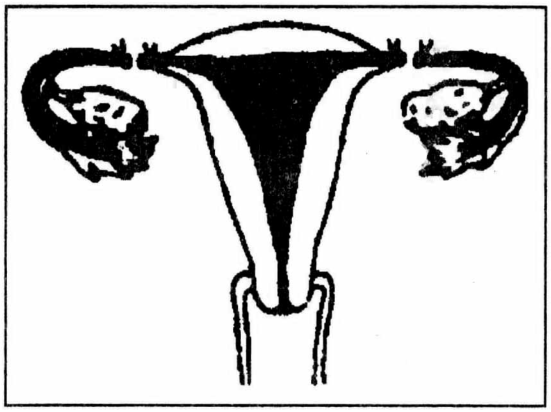

चित्र : महिला नाशबंदी

लोगों के द्‌वारा नसबंदी न चुनने के मुख्य कारणों में से एक यह है कि वे नसबंदी के लिए अस्पताल नहीं जा सकते और इसे उसी दिन ही पूरा होने की आशा नहीं कर सकते क्योंकि स्वास्थ्य केन्द्रों में रोजाना अधिकांश नसबन्दी सुविधाएँ उपलब्ध नहीं होतीं । इस कमी को पूरा करने के लिए कैम्प एप्रोच शुरू की गई थी और अनेक राज्यों मे यह अभी मुख्य तंत्र (मैकेनिजम) है। प्रत्येक सप्ताह एक निर्धारित दिन को सभी जिला अस्पतालों, प्रथम रेफरेल एककों (एफआरयू), सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों में नसबंदी सेवा देने का प्रयत्न किया जा रहा है । इस प्रयोजनार्थ उपकरणों और आपरेशन कक्ष के उन्नयन के लिए धन दिया जा रहा है । बडी संख्या में चिकित्सा और परा-चिकित्सा कर्मियों को प्रशिक्षण देने के लिए व्यवस्था की जा रही है ।

(i) फैलोपीयन ट्‌यूब तक पहुंचने के सामान्य तरीके

(क) **परम्परागत टयूबेक्टोमी -** यह सीमित अथवा सामान्य संवेदनाहरण की स्थिति में उदरीय छेदन द्‌वारा किया जाता है और इसमे शल्य क्रिया के पश्चात 3-5 दिनो की अवधि तक

रूकना आवश्यक होता है । इस प्रक्रिया में फैलोपीयन ट्यूब के एक भांग के, दोनों छोरों से काटा जाता है और कटे हुए छोरों के सिरो को बांध दिया जाता है ।

(ख) **मिनी लैप्रोटोमी (उदरछेदन) -** यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें 2.5-3 सेमी, लम्बे प्यूबिक हेयर लाइन के 2.5 सेमी. ऊपर एक लघु उदरछेदन करने की आवश्यकता होती है और इसे अधिकांशत: सीमित संवेदनाहरण की स्थिति में किया जाता है । इस प्रक्रिया के अंतर्गत छोटी अवधि अर्थात 1-3 दिनों तक अस्पताल में भर्ती होना पड़ता है।

(ग) **लैप्रोस्कोपिक नसबंदी -** इस प्रक्रिया में एक विशेष यन्त्र का इस्तेमाल किया जाता है जिसे लैप्रोस्कोप कहते हैं । यह सिलास्टिक पदार्थ, जिसे टयूबल रिंग कहते हैं से बने छोटे छल्ले से फैलोपिन नलियों को अवरूद्ध करता है । लेप्रोरकोप को नाभि के पास बहुत छोटे छेद के माध्यम से उदरीय छिद्र में लगाया जाता है और लेप्रोस्कोप के नेत्रदर्शी के माध्यम से फैलोपिन नली को देखा जाता है ।

यह प्रक्रिया सीमित सवेदनाहरण के अंतर्गत की जाती है और यदि रोगी की स्थिति स्थिर रहती है तो उसे 6-8 घंटे के भीतर छुट्टी दे दी जाती है । यह एक अत्याधुनिक तरीका है जिसमें शल्यचिकित्सा करने वाले शल्य चिकित्सकों / स्त्री रोग विशेषज्ञों को विशेष प्रशिक्षण दिए जाने की जरूरत होती है । इस प्रक्रिया में मात्र 5-10 मिनट लगते है । हालांकि मिनी लेप्रोटोमी की सुविधाएं लगभग सभी अस्पतालों, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रो में और चुनिंदा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रो में ही की जाती है । जहाँ प्रशिक्षित लैप्रोस्कोपिक / शल्य चिकित्सकों स्त्री रोग विशेषज्ञों के दल द्वारा कैम्पों के दौरान दौरा किया जाता है ।

यह प्रक्रिया सर्वाधिक प्रभावी है फिर भी अधिकतर महिलाएं असुविधा और दर्द अनुभव करती हैं जो इस प्रक्रिया के होने के पश्चात कुछ दिनो तक होता है । यदि यह दर्द कुछ दिनों के बजाय ज्यादा देर तक हो तो चिकित्सा अधिकारी से परार्मश करना चाहिए ।

नसबंदी शरीर के कार्य करने के तरीको को प्रभावित नहीं करती है और न ही यह किसी भी तरीके से यौन जीवन को प्रभावित करती है । यह नोट किया जाए कि नसबदी यौन संचारित रोगों अथवा एड्स से बचाव नहीं करती है ।

(ii) महिला नसबंदी के लाभ

1. यह गर्भधारण के रोकथाम का एक सरल और प्रभावी स्थायी तरीका है ।
2. यह यौन जीवन को प्रभावित नही करता है ।
3. नसबंदी किसी भी महिला के हार्मोनों को प्रभावित नहीं करता है । अत: उसे पहले की भांति मासिक धर्म आना जारी रहता है ।

(ब) पुरूष नसबंदी

1. पुरूष नसबंदी (वासेक्टॉमी) उन पुरूषों के लिए परिवार कल्याण का स्थायी तरीका है जो यह इच्छा रखते हैं कि उन्हें और बच्चे नही चाहिये ।
2. यह एक सुरक्षित और त्वरित शल्यचिकित्सीय प्रक्रिया है । इसे उचित प्रक्रिया द्वारा किसी भी अस्पताल अथवा परिवार कल्याण केन्द्र में किया जा सकता है ।

3. यह बधियाकरण नहीं है । यह वृषण को प्रभावित नहीं करता है और यौनक्षमता को प्रभावित नहीं करता है ।
4. तीसरे, चौथे और पांचवे बच्चे के जन्म लेने तक नसबंदी के निर्णय को स्थगित नहीं करना चाहिए । प्रसूति विज्ञान सहायिका तथा अन्य स्वास्थ्य कर्मियों को यह महसूस करना चाहिए कि दो बच्चों के बाद नसबंदी किया जाता है तो यह जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने में सर्वाधिक योगदान देता है ।

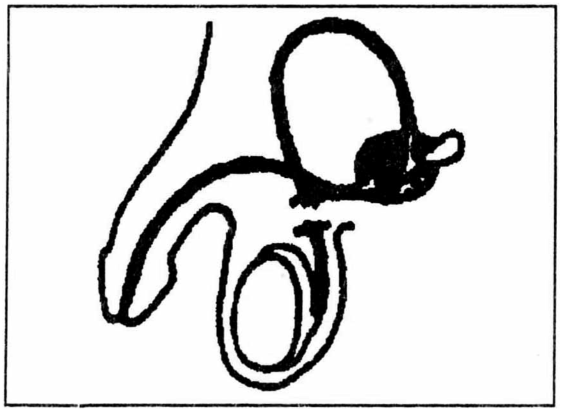

(i) प्रक्रिया

पुरूष अण्डकोष मे एक छोटा छिद्र किया जाता है, त्वचा की थैली, जो उसके वृषण से जुड़ी होती है तथा दोनों नलियों, जो वृषण से शुक्राणु ले जाती है, बंद कर दी जाती हैं । इससे शुक्राणु वीर्य से अलग हो जाते हैं । पुरूष को फिर भी लिंग उत्तेजना हो सकती है तथा वीर्य रखलित कर सकता है । उसके वीर्य से कोई महिला गर्भवती नहीं होती क्योंकि इसमे शुक्राणु नहीं होते हैं तथापि उसे वैसेक्टोमी के कारण जमा हुए शुक्राणुओ के प्रति सावधान रहने के लिए 3 महीनों की अवधि अथवा 20 स्खलनों तक कण्डोम प्रयोग करना चाहिए ।

(ii) वैसेक्टोमी की प्रभावशीलता -

- अत्यधिक प्रभावी और स्थाई प्रक्रिया के पश्चात पहले वर्ष में स्थायी विफलता दर प्रति 100 पुरूषों पर 0.15 (प्रत्येक 700 में लगभग 1) गर्भधारण है ।
- स्वीकारकर्ता यह सुनिश्चित करने के लिए कि वासेक्टोमी प्रभावी है, अपने वीर्य की जांच करा सकता है । उसे यह जांच प्रक्रिया होने के 3 महीनों के पश्चात अथवा 20 स्खलनो के पश्चात किसी भी समय करना चाहिए । यदि उसके वीर्य में शुक्राणु नहीं पाए जाते हैं तो वह अपने वीर्य के प्रति आश्वस्त हो सकता है । वह विश्वास कर सकता है कि उसकी वैसेक्टोमी सफल है ।

(iii) पुरूष नसबंदी के लाभ

1. बहुत कारगर
2. स्थाई । एक अकेली, त्वरित प्रक्रिया से जीवन भर की सुरक्षा और प्रभावी परिवार नियोजन।
3. प्रथम 20 स्खलनों अथवा पहले तीन महिनों तक, जो भी पहले हो, कण्डोम या कोई अन्य कारगर तरीके को अपनाना छोड़ कर, अन्य कुछ याद नहीं रखना ।

4. यौन सम्बन्धो में कोई बाधा नहीं । पुरूष की यौन क्षमता प्रभावित नहीं होती ।
5. अधिक कारगर, सुरक्षित, आसान प्रक्रिया, कम खर्च, कारगरता की जांच किसी भी समय की जा सकती है ।

(iv) हानियाँ

1. दर्द, अडकोष में रक्त का जमाव ।
2. स्थानीय संक्रमण -मनोवैज्ञानिक भय के कारण नपुंसकता, बैचेनी आदि ।

- **नो-स्केलपेल वासेक्टोमी (एन.एस.वी.-NSV)**

  नो-रकेलपेल वासेक्टोमी एक नई प्रक्रिया है । यह पारम्परिक प्रक्रिया से निम्न प्रकार भिन्न है

1. अंडकोष में 1 या 2 चीरे के बजाए छोटा सा छेद ।
2. विशेष सवेदनाहरण तकनीक में 2 या अधिक के बजाए सुई से केवल एक छेद ।
3. कम दर्द तथा जल्दी आराम
4. ऑपरेशन के समय में कमी
5. तुरंत, सुरक्षित और कारगर

(v) पुरूष नसबंदी का समय

पुरूष जब भी चाहे कि उसे अब और बच्चे नहीं चाहिए । दो बच्चों के बाद तरजीह । यह सलाह दी जाती है कि दम्पती 2 वर्षो के बाद 2-3 वर्षो तक कॉपर-टी या खाई जाने वाली गर्भ निरोधक गोलियों का इस्तेमाल करें और जब बच्वे स्वस्थ रहें पुरूष नसबंदी / महिला नसबंदी कराए ।

5.6 राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम में प्रसूति विज्ञान सहायिका की भूमिका -

प्रसूति विज्ञान सहायिका का मुख्य कार्य प्रसूति सेवाओं से सम्बन्धित है । वहीं पर प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं का परिवार कल्याण कार्यक्रम से अधिक रिश्ता है । अत: परिवार कल्याण का प्रत्येक कार्यक्रम अत: प्रसूति सेवाओं की गुणवत्ता बढाता है । यहाँ पर परिवार कल्याण कार्यक्रम से सम्बन्धित प्रसूति विज्ञान सहायिका की भूमिका एवं उत्तरदायित्वों को वर्णित किया गया है ।

- **सर्वेक्षण कार्य**

– महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता / अन्य स्वास्थ्य कर्मियों की सर्वेक्षण कार्य में सहायता करना ।

– स्वास्थ्य सांख्यिकी / जनसांख्यिकी के तथ्यों को एकत्र करना ।

- प्रजनन योग्य दम्पती रजिस्टर के संधारण में सहायता करना ।
- शिक्षण एवं परामर्श कार्य
- छोटे परिवार के प्रतिमान को बढ़ावा देना ।
- परिवार नियोजन के महत्व को, अपने क्षेत्र के नागरिकों के सामने प्रभावी तरीके से बताना।
- गर्भनिरोधको के उपयोग को बढ़ावा देना, उनके लाभ, हानियों के बारे में उपयोग कर्ताओं को समझाना ।

- परिवार नियोजन के ऑपरेशन अथवा स्थायी तरीको के प्रयोग हेतु परामर्श एवं प्रोत्साहन देना ।
- परिवार नियोजन शिविरों में सहायता देना ।
- शिविर स्थल की व्यवस्था में महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की सहायता करना ।
- परिवार नियोजन ऑपरेशन (नसबंदी) के दौरान स्वारथ्य कर्मियों एव चिकित्सक को सहयोग प्रदान करना ।
- परिवार नियोजन आपरेशन के पूर्व तथा पश्चात् महिला की देखभाल में सहयोग करना ।

अन्य कार्य -

- परिवार नियोजन क्लिनिकों के संचालन में स्वास्थ्य कर्मियो को सहयोग देना ।
- डिपो होल्डर (ग्रामीण क्षेत्रों में परिवार नियोजन के साधनों को रखने वाले) के रूप में कार्य करना।
  – गर्भ निरोधक गोलियां, कण्डोम इत्यादि का वितरण करना ।
  – गर्भ निरोधक साधनों के उपयोगकर्ताओं का रजिस्टर रखना ।
- अपने क्षेत्र की गर्भवती माताओं का रिकॉर्ड रखना ।
- स्थानीय नेताओं/ जन प्रतिनिधियों से सम्पर्क बनाये रखना तथा आवश्यकतानुसार परिवार नियोजन के कार्य में उनका सहयोग लेना ।
- महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता / चिकित्सक द्वारा परिवार नियोजन सम्बंधी अन्य प्रदत्त कार्यो तथा निर्देशों की पालना करना ।

5.7 सारांश

इस इकाई में हमने परिवार कल्याण की अवधारणा तथा अर्थ को समझने के साथ परिवार नियोजन के महत्व एवं उद्देश्यों पर भी चर्चा की । साथ ही जनसंख्या नीति, जनसांख्यिकी लक्ष्य, परिवार नियोजन के क्षेत्र तथा छोटा-परिवार सुखी परिवार का महत्व भी जानने का प्रयत्न किया । हमने यह भी जाना कि जनसंख्या विस्फोट का अर्थ क्या है तथा राजस्थान के संदर्भ में इसकी क्या भूमिका है । प्रजनन योग्य दम्पती का परिवार नियोजन में स्थान तथा परिवार नियोजन हेतु प्रचलित तथा नवीनतम स्थायी एवं अस्थायी विधियों के लाभ-हानि का भी हमने विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया । इन सभी पक्षों पर विचार विमर्श की तभी सार्थकता सिद्ध होगी जब प्रसूति विज्ञान सहायिका, परिवार कल्याण कार्यक्रम में अपनी भूमिका का ठीक ढंग से निर्वहन करे ।

5.8 प्रश्न

1. परिवार कल्याण एवं परिवार नियोजन से आप क्या समझती हैं?
2. परिवार नियोजन के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डालिये ।
3. परिवार नियोजन की आवश्यकता एवं महत्व के बारे में एक लेख लिखिये ।
4. परिवार नियोजन के क्या उद्देश्य हैं? इसके कार्यक्षेत्रों के नाम लिखिये ।
5. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये ।

1. राजस्थान एवं जनसंख्या विस्फोट
2. प्रजनन योग्य दम्पती
3. एक अच्छे गर्भ निरोधक की विशेषताऐं

6. परिवार नियोजन की विधियों का वर्गीकरण करें ।
7. 1. कण्डोम के लाभ व हानियाँ लिखिये ।
   2. मुख से लेने वाली गर्भनिरोधक गोलियों को वर्णित करें ।
8. "कॉपर-टी" के बारे में आप क्या जानती हैं?
9. महिला नसबंदी पर एक लेख लिखो ।
10. "परिवार कल्यागा एवं प्रसूति विज्ञान सहायिका" विवेचना करें ।

इकाई-6 स्वास्थ्य सांख्यिकी

इकाई की रूपरेखा

6.0 प्रस्तावना

6.1 उद्देश्य

6.2 सांख्यिकी एवं स्वास्थ्य सांख्यिकी

6.2.1 सांख्यिकी परिभाषा एवं अर्थ

6.2.2 सांख्यिकी के महत्व एवं कार्य

6.2.3 स्वास्थ्य सांख्यिकी

6.2.4 स्वास्थ्य सांख्यिकी के उद्देश्य

6.2.5 स्वास्थ्य सांख्यिकी के स्त्रोत

6.2.6 स्वारथ्य सांख्यिकी के घटक

6.3 जैविक सांख्यिकी (जीवन समंक)

6.3.1 जीवन समंको का उपयोग एवं महत्व

6.3.2 जीवन समंको के प्रकार

(अ) अशोधित जन्म दर

(ब) अशोधित मृत्यु दर

(स) जीवन प्रत्याशा

(द) शिशु मृत्यु दर

(य) नवजात मृत्यु दर

(र) मातृ मृत्यु दर

(ल) सामान्य प्रजनन दर

6.4 शिशु मृत्यु दर

6.4.1 शिशु मृत्यु दर का महत्व

6.4.2 शिशु मृत्यु दर अधिक होने के कारण

6.4.3 शिशु मृत्यु दर कम करने के उपाय

6.5 मातृ मृत्यु दर

6.5.1 मातृ मृत्यु दर अधिक होने के कारण

6.5.2 मातृ मृत्यु दर कम करने के उपाय

6.6 मातृ रूग्णता

6.7 जन्म-मृत्यु की सूचना तथा पंजीकरण

6.7.1 जन्म पंजीकरण के लाभ

6.7.2 मृत्यु पंजीकरण के लाभ

6.7.3 जन्म-मृत्यु पंजीकरण का समय तथा स्थान
6.7.4 जन्म-मृत्यु पंजीकरण की विधि
6.7.5 जन्म पंजीकरण सम्बंधी कुछ अन्य तथ्य
6.7.6 जन्म की सूचना देने का प्रपत्र
6.7.7 मृत्यु की सूचना देने का प्रपत्र
6.7.8 मृत जन्म प्रतिवेदन
6.8 ग्राम-स्तर पर रखे जाने वाले रिकॉर्ड
6.8.1 रिपोर्टिंग
6.8.2 रिकॉर्ड / रिपोर्ट की देखभाल या संधारण
6.9 सारांश
6.10 प्रश्न

6.0 प्रस्तावना

स्वास्थ्य सेवाओं को जन-जन तक पहुंचाने, उनके मूल्यांकन तथा स्वास्थ्य योजनाओं के निर्माण के प्रत्येक चरण में स्वास्थ्य सांख्यिकी की आवश्यकता होती है । सांख्यिकी के अभाव में वास्तविक स्वास्थ्य सार एवं विभिन्न स्तरों पर व्याप्त स्वास्थ्य समस्याओं का पता लगाना कठिन है । स्वास्थय सेवाओं से जुडे प्रत्येक संगठन चाहे वह सरकारी हों अथवा गैर सरकारी स्वैच्छिक संगठन एवं प्रत्येक स्वास्थ्य कार्यकर्ता / ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक / आशा (Acredited Social Health Activist) अथवा प्रसूति विज्ञान सहायिका इत्यादि को स्वास्थ्य सांख्यिकी, जीवन समंको तथा उनसे सम्बंधित रिकॉर्ड की जानकारी होनी आवश्यक है ।

इस इकाई मे हम सांख्यिकी, स्वास्थ्य सांख्यिकी के स्त्रोत एवं उद्देश्य, जीवन समंको के प्रकार पर चर्चा करेगें । इनके अतिरिक्त प्रसूति विज्ञान सहायिका के मुख्य कार्य प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य तथा प्रसूति सेवाओं से सम्बंधी शिशु मृत्यु दर एवं मातृ मृत्यु दर के विभिन्न पक्षों का भी विस्तारपूर्वक विश्लेषण करेंगे । साथ ही जीवन-मृत्यु की सूचना देने के महत्व तथा निर्धारित प्रपत्रों की भी जानकारी के भी सहभागी बनेंगे । इसी इकाई में ग्रामीण स्तर पर रखे जाने वाले ऐसे रिकॉर्डो का भी उल्लेख किया गया है, जिनकी देखभाल में प्रसूति विज्ञान सहायिका सहायता प्रदान कर सकती है ।

6.1 उद्देश्य

इस इकाई में हम आपको सांख्यिकी एवं स्वास्थ्य सांख्यिकी के विविध पक्षों की जानकारी प्रदान करेंगे । इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सांख्यिकी के विभिन्न पक्षों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगी तथा इनसे सम्बंधित भूमिकाओं का निर्वहन तथा निम्न के विषय में समर्थ हो सकेगी ।

1. सांख्यिकी की परिभाषा एवं अर्थ जानना ।
2. स्वास्थ्य सांख्यिकी के उद्देश्य, स्त्रोत एवं घटकों की जानकारी ।
3. जैविक सांख्यिकी अथवा जीवन समंकों के उपयोग एवं महत्व समझना ।

4. शिशु मृत्यु दर के विविध पहलुओ की जानकारी ।
5. मातृ मृत्यु दर के कारण तथा इसे कम करने के उपाय जानना ।
6. मातृ रूग्णता की जानकारी ।
7. जन्म मृत्यु की सूचना देना तथा इनसे सम्बंधित प्रपत्रो की जानकारी ।
8. ग्राम स्तर पर रखे जाने वाले रिकॉर्ड तथा उनकी देखभाल को समझना ।

6.2 सांख्यिकी एवं स्वास्थ्य सांख्यिकी

आज का युग सांख्यिकी का युग है । सांख्यिकी का प्रमुख उद्देश्य जानकारी प्रदान करना है । सांख्यिकी शब्द के अनेक अर्थ हैं । सामान्य व्यक्तियों के लिए सांख्यिकी का अर्थ संख्याओं के अध्ययन से है जिसमें समंक या डाटा(data), तथ्यों तथा मापों का विश्लेषण किया जाता है । सांख्यिकी शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के Status(स्टेटस) शब्द से हुई है जिसका अर्थ 'राजनीतिक राज्य' होता है । कुछ अन्य गणितीय वैज्ञानिकों ने सांख्यिकी को एक नवगठित विज्ञान बताया किन्तु धीरे धीरे यह संख्याओं का अध्ययन करने वाली, मानव ज्ञान की एक विशेष शाखा के रूप में प्रसिद्ध हो गई । वर्तमान में सांख्यिकी प्रत्येक क्षेत्र में उपयोग किये जाने वाली विज्ञान है जिसकी सहायता से जीवन के विभिन्न क्षेत्रों की समस्याओं पर प्रकाश डाला जा सकता है । यह कहना उचित होगा कि जहां भी सूचना अथवा जानकारी को संख्यात्मक रूप दिया जा सकता है, सांख्यिकी विधियों को आधार बनाया जाता है । अत: सांख्यिकी का क्षेत्र बहुत व्यापक है । स्वास्थ्य सांख्यिकी अथवा जनसांख्यिकी भी सांख्यिकी के महत्वपूर्ण अंग हैं ।

6.2.1 सांख्यिकी की परिभाषा एवं अर्थ

सांख्यिकी की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं है तथा अनेक विचारधाराओं, लेखकों के आधार पर इस विषय को कई प्रकार से परिभाषित किया गया है । कुछ परिभाषाएं निम्न प्रकार हैं :-

- सांख्यिकी एक विज्ञान अथवा कला है जिसका सम्बंध संख्यात्मक तथ्यों के संकलन, प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण से होता है। इनके आधार पर कुशल निर्णय लिये जा सकते है । - केने तथा कीविंग
- सांख्यिकी को संख्यात्मक जानकारी के विज्ञान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। - मेयर्स
- सांख्यिकी अनिश्चितता की परिस्थितियो मे बुद्धिमतापूर्ण निर्णय लेने की विधियों का एक समूह है।

संक्षेप में सांख्यिकी तथ्यों के संग्रहण, प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण की एक ऐसी विधि है जो ज्ञान की खोज करती है, तथ्यों एवं आकडों के समूह को सरल बनाने की तकनीक प्रदान करती है तथा अनेक प्रकार की समस्याओं के समाधान मे सहायता प्रदान करती है ।

6.2.2 सांख्यिकी के महत्व एवं कार्य

सांख्यिकी का प्रमुख कार्य जानकारी प्रदान करना है । इस आधार पर कहा जा सकता है कि मानवीय क्रियाओं / गतिविधियों का शायद ही कोई पक्ष हो जिसमे सांख्यिकीय विधियों का उपयोग नही होता है । संक्षिप्त में सांख्यिकी के महत्व एवं कार्य निम्न हैं :-

- तथ्यो / आकडों अथवा संख्याओं को सरल तथा सूक्ष्म रूप में प्रस्तुत करना ।
- तथ्यों को तुलनात्मक रूप से प्रस्तुत करना ।
- तथ्यो के सम्बंधो का अध्ययन करना ।
- व्यक्तिगत ज्ञान एवं अनुभव की वृद्धि करना ।
- परिणामों अथवा प्रभावों को मापना ।
- तथ्यों को संख्यात्मक रूप से प्रस्तुत करना ।
- तथ्यों के आधार पर पूर्वानुमान लगाना ।

सांख्यिकी तकनीको का उपयोग जीवन के प्रत्येक पक्ष मे इतना अधिक हो गया है कि सांख्यिकी के महत्व की उपेक्षा नही की जा सकती है । सांख्यिकी विधियो से हमे हर पल मार्गदर्शन मिलता रहता है । उदाहरण के लिए एक नवजात शिशु के माता पिता हर महीने यह पता लगाने का प्रयास करते हैं कि उनके बच्चे का विकास 'नॉर्मल' है अथवा नही । विकास चिन्ह (milestones) सही हैं अथवा नही । अब यह प्रश्न उत्पन्न होता कि यह नॉर्मल या सामान्य का विचार कहां से आया अथवा इसका निर्धारण कैसे हुआ । इसका उत्तर सांख्यिकी विधियों में छिपा हुआ है । इसी प्रकार विभिन्न आकस्मिक घटनाएं, बीमा, समाज सुधार, योजना निर्माण, आपदाओं अर्थशास्त्र स्वास्थ्य विश्लेषण इत्यादि में सांख्यिकी के महत्व को कम नही माना जा सकता है ।

6.2.3 स्वास्थ्य सांख्यिकी

सांख्यिकी की वह शाखा जिसमें स्वास्थ्य सम्बंधी सूचनाओं की जानकारी प्राप्त होती है, स्वास्थ्य सांख्यिकी कहलाती है । स्वास्थ्य सांख्यिकी में स्वास्थ्य संबंधी तथ्यों / आँकडों अथवा सूचनाओं का संकलन, वर्गीकरण, प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण किया जाता है । स्वास्थ्य सांख्यिकी का विस्तृत क्षेत्र है, इसमें स्वास्थ्य से सम्बंधित प्रत्येक पक्ष की जानकारी, उनका प्रदर्शन तथा विवेचन सम्मिलित है । इसमें वह हर पहलू शामिल है, जिसके द्वारा व्यक्ति, परिवार, समुदाय अथवा राष्ट्रीय स्वास्थ्य के स्तर का आकलन किया जा सके। इसमें पर्यावरण, समाज, आर्थिक, सांस्कृतिक एंव जन सांख्यिकी इत्यादि सभी कारक निहित हैं। स्वास्थ्य सांख्यिकी के माध्यम से स्वास्थ्य सेवाओ को सही प्रकार से चलाने के लिए संगठन, प्रशिक्षण, मूल्यांकन एंव शोध के लिए आवश्यक सूचनाओं का एकत्रीकरण, विश्लेषण, उपयोगीकरण एव संचरण (ट्रांसमिशन) किया जाता है।

6.2.4 स्वास्थ्य सांख्यिकी के उद्देश्य

स्वास्थ्य सांख्यिकी के प्रमुख उद्देश्यों में प्रशासनिक मूल्यांकन एव शोध सम्मिलित है । जिनके आधार पर विभिन्न स्वास्थ्य स्तरों की तुलना करना, स्वास्थ्य सम्बंधी खोज तथा स्वास्थ्य संगठनों, उनकी कार्यप्रणाली तथा स्वास्थ्य योजनाओं का मूल्यांकन किया जा सकता है ।

स्वास्थ्य सांख्यिकी के अन्य महत्व एवं उपयोग निम्न प्रकार हैं -

- सभी स्तरों के स्वास्थ्य कर्मचारियों/अधिकारियों को विश्वसनीय, नवीनतम तथा उपयुक्त सूचनाएं एवं तथ्य उपलब्ध कराना ।
- समुदाय के स्वास्थ्य स्तर का पता लगाना ।
- सामुदायिक निदान एवं सामुदायिक उपचार हेतु 'फीड बैक' देना ।
- स्वास्थ्य समस्याओं की प्राथमिकताए तय करने हेतु सूचनाएं प्रदान करना ।
- स्वास्थ्य योजनाओं एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में नियंत्रण रखना ।
- स्वास्थ्य कानूनों को लागू करवाने में सहायता देना ।
- स्वास्थ्य गतिविधियों के लिए प्रशासनिक स्तर बनाने में सहायता देना ।
- स्वास्थ्य कार्यक्रमों के मूल्यांकन हेतु समय-समय पर तथ्य एवं जानकारी प्रदान करना ।

यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि स्वास्थ्य सांख्यिकी के उद्देश्यों की प्राप्ति तथा इससे प्राप्त जानकारी के सही उपयोग के लिए स्वास्थ्य सांख्यिकी द्वारा प्रदत्त सूचनाएं तथा तथ्य वास्तविक, सरल, समस्या आधारित, जनसंख्या के सही रूप को प्रकट करने वाले, नवीनतम, फीड बैक सहित एवं आकर्षक तरीके से प्रस्तुत किये जाने चाहियें।

6.2.5 स्वास्थ्य सांख्यिकी के स्त्रोत

स्वास्थ्य सांख्यिकी में उच्च स्तर पर पदासीन स्वास्थ्य प्रबंधको /प्रशासकों से लेकर ग्रास रूट स्तर के स्वास्थ्य, नर्सिंग, पैरामेडिकल कर्मचारियों, आगनबाडी कार्यकर्ता, सामाजिक कार्यकर्ताओ. आशा (अधिकृत सामाजिक स्वारथ्य क्रिया कार्यकर्ता), प्रसूति विज्ञान सहायिका इत्यादि की प्रभावी भूमिका है । इन सभी के सहयोग से स्वास्थ्य सांख्यिकी के लिए आवश्यक जानकारी एवं तथ्यों को प्राप्त करने के कुछ प्रमुख स्त्रोत निम्न हैं -

- जनगणना (जो कि प्रति 10 वर्ष में एक बार होती है, पिछली जनगणना सन् 2001 में हुई थी । अब यह 2011 में होगी)
- जीवन समंकों (जन्म, मृत्यु, विवाह आदि) का पंजीकरण ।
- चिकित्सालय (उपकेन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, हॉस्पिटल एवं अन्य बडे सरकारी हॉस्पिटल) के रिकॉर्ड एव रिपोर्ट, निजी क्षेत्र के हॉस्पिटलो का रिकॉर्ड भी महत्वपूर्ण है ।
- रोग पंजिका (डिजीज रजिस्टर) एवं रोगो की अधिसूचना ।
- पर्यावरणीय स्वास्थ्य सम्बंधी आकडे (इनमे जल, वायु, ध्वनि, प्रदूषण इत्यादि से सम्बधित तथ्य सम्मिलित हैं ।)

- नमूना पंजीयन सर्वेक्षण (सैम्पल सर्वे) यह समय समय पर विभिन्न सरकारी /गैरसरकारी संगठनों द्वारा करवाये जाते
- जनसंख्या सर्वेक्षण ।
- स्कूल, पचायत नगर पालिकाओं, नगर निगमों के रिकॉर्ड एवं सर्वेक्षण ।
- आर्थिक योजनाएं एवं सर्वेक्षण ।
- सामाजिक सुरक्षा (जैसे बीमा, पेंशन इत्यादि) सम्बंधी योजनाए ।
- सरकारी स्वौच्छिक अथवा गैर सरकारी संगठनों से प्राप्त स्वास्थ्य सम्बंधी आकडे ।

विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त कच्चे आँकडों, तथ्यों एवं जानकारी को एकत्र कर उन्हें उपयोगी बनाया जाता है तथा आवश्यकतानुसार सम्बंधित व्यक्तियों / संस्थाओ तक पंहुचाया जाता है ।

6.2.6 स्वास्थ्य सांख्यिकी / स्वास्थ्य सूचना प्रणाली के घटक

(Components of health statistics/heatlth information system)

- जनसांख्यिकी (Demography) या जनसंख्या विज्ञान । ।
- जैविक सांख्यिकी या जीवन समंक (vital siatistics), इनका वर्णन आगे दिया गया है ।
- पर्यावरणीय स्वास्थ्य सांख्यिकी
- स्वास्थ्य से सम्बंधित संसाधन: इनमें स्वास्थ्य क्षेत्र में उपलब्ध सुविधाएं, स्वास्थ्य कर्मी, बिस्तरों एवं अन्य साधनों की उप्लब्दता निहित है ।
- स्वास्थ्य सेवाओं का उपयोग : इसमें उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं का उपभोक्ताओं /आमजनों द्वारा किये उपयोग अथवा उपयोग नहीं किये जाने सम्बंधी तथ्य एवं सूचनाएं शामिल की जाती हैं ।
- वित्तीय सांख्यिकी : इसमें स्वास्थ्य सम्बधी अर्थशास्त्र, आमद, खर्च एवं लागत आदि निहित हैं ।
- स्वास्थ्य स्तर: इसमें विभिन्न स्वास्थ्य संकेतकों (मृत्यु, रूग्णता या बीमारी, अपंगता, जीवन स्तर अथवा अन्य संकेतक) के आधार पर व्यक्ति, समुदाय एवं राष्ट्र के स्वास्थ्य स्तर का निर्धारण करना सम्मिलित है ।

6.3 जैविक सांख्यिकी अथवा जीवन समंक (वाइटल स्टेटिक्स)

जीवन समंक में विवाह, जन्म-मृत्यु, बीमारी आदि से सम्बंधी आंकडे अथवा सूचनाएं होती हैं । जिनके आधार पर जन स्वास्थ्य का स्तर अथवा स्वास्थ्य सम्बंधी विकास का अध्ययन किया जा सकता है । जीवन समंकों को जीवनांकन जन्म-मरण सम्बंधी आंकडे, अनिवार्य आंकडे अथवा जैविक सांख्यिकी के नाम से भी जाना जाता है ।

संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार - 'जीवन समंक जीवन सम्बधी घटनाओं जैसे जन्म, मृत्यु, भूण मृत्य, विवाह, तलाक, दत्तक या गोद लेना एवं न्यायिक पृथक्करण का सांख्यिकी विवरण है।'

यह कहना अधिक सही है कि जीवन समंक का अर्थ एक समुदाय में होने वाली सभी महत्वपूर्ण घटनाओ से होता है। यहां महत्वपूर्ण घटनाओं का मतलब जन्म, विवाह, मृत्यु इत्यादि से है

जिनके आधार पर समुदाय अथवा राष्ट्र का विकास एवं स्वास्थ्य का स्तर पता लगाया जा सकता है ।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि जैविक सांख्यिकी या जीवन समंक, स्वास्थ्य सांख्यिकी तथा जनसंख्या विज्ञान अथवा जनसांख्यिकी (डेमोग्रेफी) का एक प्रमुख तथा बडा भाग है ।

6.3.1 जीवन समंकों का उपयोग एवं महत्व

स्वास्थ्य सांख्यिकी का आवश्यक भाग होने के कारण जीवन समंकों का उपयोग सामान्य कार्यो तथा स्वास्थ्य सम्बंधी कार्यो में प्रमुखता से होता है । जीवन समंकों के उपयोग एवं महत्व को संक्षिप्त मे निम्न प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है

I - सामान्य उपयोग

- कानूनी आवश्यकता ।
- प्रशासकीय कार्यो में उपयोग ।
- योजना बनाने मे महत्वपूर्ण ।
- अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर योजना निर्माण, कार्यक्रम क्रियान्वयन, मूल्यांकन इत्यादि में उपयोग ।
- समाज सुधार के कार्यक्रमों की समीक्षा हेतु आवश्यक ।

II - स्वास्थ्य सम्बंधी उपयोग

- व्यक्ति, समुदाय अथवा राष्ट्र की स्वास्थ्य स्थिति जानना, समस्याओं का पता लगाने तथा उनके हल जानना ।
- स्वास्थ्य प्रशासन एवं प्रबंधन में सुधार लाना ।
- विभिन्न राष्ट्रों के स्वास्थ्य स्तर की तुलना करना ।
- स्वास्थ्य कार्यक्रमों का मूल्याकंन ।
- स्वास्थ्य कार्यो में नवीन खोज अनुसंधान करना ।

6.3.2. जीवन समंकों के प्रकार

कुछ प्रमुख जीवन समंक निम्न प्रकार हैं:

- असंशोधित जन्म दर (Crude Birth Rate-CBR)
- असंशोधित मृत्यु दर (Crude Death Rate-CDR)
- जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy)
- शिशु मृत्यु दर (Infant Mortality Rate - IMR)
- नवजात मृत्यु दर (Neonatal Mortality Rate-NMR)
- मातृ मृत्यु दर (Maternal Mortality Rate-MMR)
- सामान्य प्रजनन दर (General Fertlality Rate -GFR)

इनकी परिभाषाएं तथा गणितीय रूप निम्नलिखित हैं ।

(अ) अशोधित जन्म दर (CBR)

एक वर्ष में प्रति 1000 की अनुमानित मध्य वर्ष की जनसंख्या में हुए जीवित जन्मों की संख्या को अशोधित जन्म दर कहते हैं ।

सूत्र के रूप में — अशोधित जन्म दर = $\frac{\text{एक वर्ष में जीवित जन्मो की संख्या}}{\text{उसी वर्ष की अनुमानित मध्य वर्ष की जनसंख्या}}$ 1000x

(ब) अशोधित मृत्युदर (CDR)

एक वर्ष में प्रति 1000 की अनुमानित मध्य वर्ष जनसंख्या में होने वाली कुल मृत्युओं की संख्या को अशोधित मृत्यु दर कहते हैं ।

सूत्र के रूप मे अशोधित मृत्यु दर = $\frac{\text{एक वर्ष में होने वाली मृत्युओं की संख्या}}{\text{उसी वर्ष की अनुमानित मध्य वर्ष की जनसंख्या}}$x1000

विशिष्ट कारणों, वर्ग विशेष अथवा समयावधि में होने वाली मृत्युओं को विशिष्ट मृत्युदर के अन्तर्गत रखा जाता है ।

(स) जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy)

किसी निश्चित अवधि में कुल जनसंख्या के मृत्यु की जोखिमों के अधीन रहते हुए, एक व्यक्ति के जीवित रहने के संभावित वर्षों के औसत को जीवन प्रत्याशा कहते हैं ।

(द) शिशु मृत्यु दर (IMR)

एक वर्ष में प्रति एक हजार जीवित जन्मों पर एक वर्ष से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु की संख्या को शिशु मृत्यु दर कहते हैं ।

सूत्र के रूप में

$$\text{शिशु मृत्यु दर} = \frac{\text{एक वर्ष से कम आयु केशिशुओं की कुल मृत्युओं की सख्या}}{\text{उसी वर्ष मै जीवित जन्मो की कुल संख्या}} \times 1000$$

(य) नवजात मृत्यु दर (NMR)

एक वर्ष मे प्रति एक हजार जीवित जन्मो पर 28 दिन से कम आयु के शिशुओ की मृत्यु की संख्या को नवजात मृत्यु दर कहते है ।

सूत्र के रूप मे -

नवजात मृत्यु दर

$$= \frac{\text{एक वर्ष' मे 28 दिनों से कम आयु के नवजात शिशुओ की कुल मृत्यु संख्या}}{\text{उसी वर्षा मैं जीवित जन्मो की कुल संख्या}} \times 1000$$

(नोट - यह शिशु मृत्यु दर का एक भाग है।)

(र) मातृ मृत्यु दर (MMR)

एक वर्ष मे प्रति 1000 जीवित जन्मो पर प्रसव सम्बंधी कारणों से होने वाली माताओं की मृत्यु संख्या को मात मृत्यु दर कहते हैं ।

सूत्र के रूप मै -

$$\text{मातृ मृत्यु दर} = \frac{\text{एक वर्ष मे प्रसव सम्बधी कारणों से हुईमाताओं की मृत्यु सख्या}}{\text{उसी वर्ष में कुल जीवित जन्म}} \times 1000$$

मातृ मृत्यु दर को प्रति 10,000 अथवा प्रति 1,00,000 जीवित जन्मों पर भी व्यक्त किया जा सकता है ।

(ल) सामान्य प्रजनन दर (GFR)

एक वर्ष में 15-49 आयु वर्ग समूह (प्रजनन आयु) की प्रति एक हजार महिलाओं पर जीवित जन्मों कई संख्या को सामान्य प्रजनन दर कहते है।

सूत्र के रूप में

सामान्य प्रजनन दर= $\frac{\text{एक वर्ष में जीवित जन्मों की संख्या}}{15-49 \text{ वर्ष की आयु वर्ग समूह की महिलायों की संख्या}}$ x 1000

आगे के पृष्ठों में प्रसूति विज्ञान सहायिका के कार्य क्षेत्र से विशेष रूप से सम्बंधित जीवन समंक: शिशु मृत्यु दर, मातृ रूग्णता एव मात मृत्यु दर के बारे मे और अधिक जानकारी दी जा रही है ।

6.4 शिशु मृत्यु दर (आई.एम.आर.)

यह एक आनुपातिक दर है जो किसी एक वर्ष मे प्रति 1000 जीवित जन्मों पर एक वर्ष से कम आयु के बच्चों की होने वाली कुल मृत्युओ की सख्या व्यक्त करती है । चूंकि एक वर्ष से छोटे बच्चे 'शिशु' (Infant) कहलाते हैं । अत: इसमें नवजात (जन्म से 4 सप्ताह या 28 दिवस के अन्दर) शिशुओं की होने वाली मृत्युओं की संख्या भी सम्मिलित है । अन्य विकसित राष्ट्रों की तुलना में भारत में शिशु मृत्यु दर अधिक है । (देखें सारणी)

सारणी : कुछ देशों की शिशु मृत्यु दर (IMR)

	देश का नाम	शिशु मृत्यु दर (संदर्भ वर्ष 2005)
1	भारत	67
2	अमेरिका	7
3	ब्रिटेन	7
4	जापान	3
5	फ्रांस	4
6	न्यूज़ीलैंड	6
7	स्विटजरलैण्ड	3
8	थाईलैण्ड	24
9	श्रीलंका	17
10	पाकिस्तान	83
11	बांग्लादेश	51

6.4.1 शिशु मृत्यु दर का महत्व

- यह समुदाय अथवा राष्ट्र के स्वास्थ्य स्तर को प्रकट करने वाला महत्वपूर्ण संकेतक है ।
- यह नागरिकों के जीवन स्तर को बताने वाला प्रतीक है ।
- यह प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य सेवाओं की सफलता अथवा असफलता नापने वाला संकेतक है ।
- शिशु मृत्यु दर अन्य स्वास्थ्य संकेतकों की तुलना में स्वास्थ्य कार्यक्रमों से शीघ्र प्रभावित होता
- है।

– शिशु मृत्यु दर के लिए रोगों का एक विशेष समूह (बच्चों की छह जानलेवा बीमारी) मुख्यतः उत्तरदायी होता है ।
– यह जन सांख्यिकी तथा स्वास्थ्य सांख्यिकी के लिए महत्वपूर्ण संकेतक है ।
– शिशु मृत्यु दर में भारतवर्ष के विभिन्न राज्यों में भी काफी अन्तर है । सन् 2000 की सूचनाओं के अनुसार बिहार (62) मध्यप्रदेश (88) राजस्थान (79) उत्तरप्रदेश (83) जैसे बीमारू राज्यों में यह उच्च है जबकि केरल (14) पंजाब (52) तमिलनाडु (51) महाराष्ट्र (48) तथा पं. बंगाल (51) में यह तुलनात्मक रूप से कम है ।

6.4.2 शिशु मृत्यु दर अधिक होने के कारण

यहां पर शिशु मृत्यु की उच्च दर होने के कारणों को दो वर्गो; प्रमुख कारण एवं संभावित कारणों के अन्तर्गत वर्णित किया गया है

(क) प्रमुख कारण :

– 6 जानलेवा बीमारियां (टेटनस, डिपथीरिया काली खांसी, तपेदिक, पोलियो एवं खसरा) एवं अन्य संक्रामक रोग (एड्स सहित)
– कुपोषण एवं कुपोषण जनित रोग उदाहरणार्थ मैरसमस, क्वाशिओक्योर इत्यादि ।
– अतिसार (दस्त) एव निर्जलीकरण (डिहाइड्रेशन) ।
– शिशुओ के साथ होने वाली दुर्घटनाएं, विषाक्ताता (जैसे भोजन विषाक्तता)
– जन्म के समय कम वजन होना ।
– अप्रशिक्षित दाईयो द्वारा प्रसव कराना ।
– मां द्वारा स्तनपान नहीं कराना ।
– मातृ एवं शिशु स्वास्थय सेवाओं की ग्रास-रूट या ग्रामीण क्षेत्रो मे पर्याप्त पहुंच नहीं होना, शहरी एव ग्रामीण स्तर पर स्वास्थ्य सेवाओ की विसंगति।
– अस्वास्थ्यप्रद पर्यावरण
– सही रेफरल सेवाओ का अभाव

(ख) संभावित कारण.

- **चिकित्सकीय कारण**

  इनमे प्रसव सम्बन्धी जटिलताएं जैसे प्रसूति के दौरान शिशुओं को लगने वाले चोटें, श्वासरोध (Asphyxia), समय से पूर्व उत्पन्न अथवा पूरी तरह से परिपक्व नहीं होने वाले शिशु (Premature), बच्चों के जन्मजात रोग एवं विकृतियां (जैसे मल द्वार का छिद्र नही होना), संक्रमण, आत्र, आमाशय एवं श्वसन आदि रोग तथा संक्रामक रोग शामिल हैं । इन सभी के कारण ही शिशु काल का ग्रास बन जाता है । मृत जन्म(Still birth) भी शिशु मृत्यु दर बढाते हैं।

- **जैविक कारण**

इनमें अत्यधिक उम्र में या कम उम्र मे ही गर्भधारण, बच्चों के जन्म में बहुत कम अन्तराल होना, परिवार का आकार अधिक होना अथवा बच्चों का अपरिपक्व जन्म होना शामिल है ।

- **सामाजिक कारण**

  इसमें धर्म (हिन्दू और मुसलमानों में शिशु मृत्यु दर अधिक होना, ईसाईयों में कम पाई जाती है।), मां की कम शिक्षा, लिंग (बालिकाओ की मृत्यु अधिक होती है।) मतभेद या लडके लड़की में अन्तर करना, बालिका भ्रूण हत्या अन्धविश्वास, कम आयु में ही विवाह, विघटित परिवार, गरीबी, बेकारी, यातायात के साधनों की कमी, अशिक्षा इत्यादि कारण सम्मिलित हैं ।

6.4.3 शिशु मृत्यु दर कम करने के उपाय

शिशु मृत्यु दर कम करने हेतु विभिन्न स्तरों पर प्रयास किये जाने की आवश्यकता है । शिशु मृत्युओं को रोकने में सहायक कुछ महत्वपूर्ण उपाय निम्नलिखित हैं-

– शिशु रोगों का शीघ्र निदान एवं उपचार ।
– परिवार नियोजन का महत्व स्थापित करना ।
– प्रसवपूर्व एवं प्रसव उपरांत माताओं के आहार पर विशेष ध्यान क्ऐना ।
– स्तनपान को बढ़ावा देना ।
– सुरक्षित एवं संस्थागत प्रसव को बढ़ावा देना ।
– बालकों की संक्रमण से सुरक्षा तथा प्रभावी टीकाकरण ।
– शिशुओं के विकास एवं वृद्धि की समय समय पर मानीटरिंग करना ।
– बच्चों के लिए सुरक्षित एवं स्वास्थ्यप्रद वातावरण उपलब्ध कराना ।
– प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य का प्रभावी उपयोग करना ।
– स्वास्थ्य शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा, परिवार जीवन शिक्षा को सामान्य शिक्षा का आवश्यक अंग बनाना ।
– दाइयो को प्रशिक्षित करना ।
– आशा, प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं का महत्व स्थापित करना ।

6.5 मातृ मृत्यु दर (एम- एम. आर.)

गर्भावस्था अथवा प्रसव कारणों से महिला की मृत्यु होना, मातृ-मृत्यु के अन्तर्गत आती है अर्थात गर्भ से लेकर गर्भ समापन या प्रसव के उपरांत 42 दिनों तक की अवधि में यदि किसी महिला की मौत हो जाती है तो उसे मातृ मृत्यु कहते हैं ।

तुलनात्मक रूप से देखा जावे तो विश्व के विकसित देशों की तुलना में भारत की मातृ मृत्यु दर बहुत अधिक है । मातृ मृत्यु दर की गणना एक हजार प्रति जीवित जन्मों के स्थान पर 10,000 अथवा 1,00,000 जीवित जन्मों पर भी की जाती है । भारत की मृत्यु दर तथा कुछ अन्य प्रमुख देशों की मात मृत्युदर की तुलना निम्न सारणी द्वारा स्पष्ट की गई है ।

सारणी : कुछ देशें की मातृ मृत्यु दर (MMR)

	देश का नाम	मातृ मृत्यु दर प्रति 100000 जीवित जन्म (संदर्भ वर्ष 2005)
1	भारत	407
2	अमेरिका	14
3	ब्रिटेन	11
4	जापान	10
5	चीन	56
6	सिंगापुर	15
7	स्विटजरलैंड	7
8	थाईलैंड	44
9	श्रीलंका	92
10	नेपाल	740
11	बांग्लादेश	380

6.5.1 मातृ मृत्यु दर अधिक होने के कारण

मातृ मृत्यु के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं, उनमें से कुछ प्रमुख कारण नीचे वर्णित हैं ।

(क) प्रसूति से सम्बन्धित कारण

– प्रसव पूर्व, पश्चात अथवा प्रसव के दौरान होने वाले भारी रक्तस्राव
– प्रसव में रूकावट ।
– असुरक्षित गर्भपात ।
– संक्रमण ।
– गर्भावस्था की विषाक्तता या टौक्सीमिआ (Toxaemin of Pregnancy)
– अप्रशिक्षित / अकुशल व्यक्तियों द्वारा प्रसव कार्य ।
– गर्भावस्था की अवधि में होने वाले रोग ।
– हृदय रोग ।
– मधुमेह, उच्च रक्तचाप (बिगडी हुई स्थिति मे)
– गुर्दे (किडनी) एवं यकृत (लीवर) के रोग ।
– कैंसर
– दुर्घटनाएं
– गर्भवती माता में कुपोषण

(ख) अन्य कारण -

– अधिक उम्र अथवा कम उम्र की गर्भावस्था (20 से कम तथा 30 से अधिक आयु के उपरांत गर्भधारण मातृ मृत्यु दर की संभावनाएं बढाता है।)

– बहुप्रसव (मल्टीपैरा) या अधिक प्रसव होना ।
– गरीबी, अशिक्षा, अस्वच्छ पर्यावरण. लापरवाही ।
– गर्भावस्था में कम अन्तराल होना या जल्दी गर्भ ठहरना ।
– बच्चों के जन्म से जुड़ी गलत तथा भ्रमपूर्ण धारणाए (जैसे पुत्र मोह, सामाजिक कुप्रथाए, अन्धविश्वास इत्यादि)

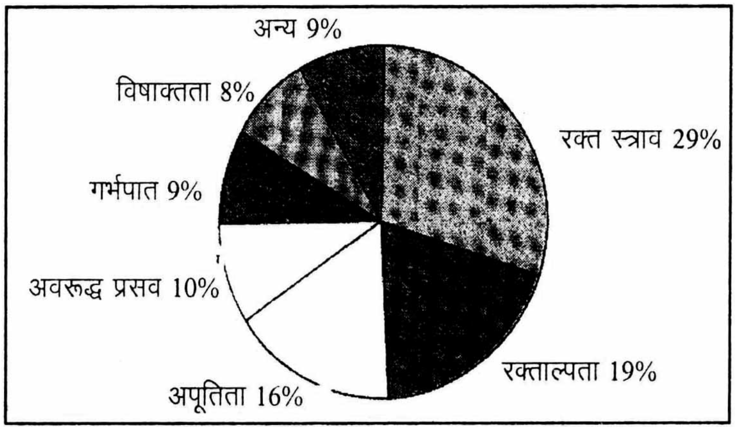

चित्र : मातृ मृत्यु के विभिन्न कारण

(स्त्रोत भारत सरकार के स्वास्थ्य मन्त्रालय की रिपोर्ट 2004-2005)

– संचार एवं यातायात के साधनों की कमी (जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्र से प्रसव काल में, रैफरलसेवाओं हेतु आना नही हो पाता है
– उपयुक्त प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव ।
– स्वास्थ्य केन्द्रों एव प्रशिक्षित स्वास्थ्य कर्मियों की कमी ।
– स्वास्थ्य केन्द्रों पर गर्भावस्था एवं प्रसव सम्बन्धी उपकरण, संसाधनों की कमी होना ।

भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय के एक सर्वेक्षण के अनुसार मातृ मृत्युदर के प्रमुख कारण यहां एक वृत के माध्यम से दिखाये गये है ।

6.5.2 मातृ मृत्युदर कम करने के उपाय

मातृ मृत्यु दर कम करना जनस्वास्थ्य से सम्बन्धित सभी व्यक्तियों, स्वयंसेवी संस्थाओं, राज्य एवं केन्द्र सरकार, यहां तक कि विश्व स्वास्थ्य संगठन के प्रमुख एजेन्डा या विषय सूची में है । मातृ मृत्यु दर कम करने हेतु अनेक सामाजिक तथा चिकित्सकीय प्रयासों की आवश्यकता है, उनमे से कुछ उपाय निम्न प्रकार हैं -

– प्रजनन स्वास्थय सेवाओ को मजबूत करना, उनकी पहुंच ग्रासरूट स्तर तक पहुंचाना ।
– गर्भावस्था का शीघ्र पंजीकरण ।
– प्रसवपूर्व, अन्त: प्रसव एवं प्रसवोत्तर सेवाओं का स्तर बढाना ।
– प्रसव पूर्व (एंटिनेटल) अवस्था में कम से कम 3 बार चेकअप ।
– गर्भावस्था में अतिरिक्त तथा पूर्ण पोषण युक्त आहार देना ।
– गर्भावस्था में संक्रमण, रक्तस्त्राव, मलेरिया, एनीमिआ (रक्त की कमी) से बचाना ।

- प्रसूति काल मे प्रसव जटिलताओं जैसे कुप्रस्तुति (Malpresentetion), गर्भावस्था विषाक्तता (Eclampsia), रक्त स्त्राव (Haemorrnage), गर्भाशय विदारण (Ruptured uterus) आदि से बचाना ।
- गर्भावस्था के दौरान होने वाले अथवा माता में पूर्व से ही उपस्थिति रोगों यथा डायबिटीज, ब्लडप्रेशर, गुर्दे के रोगों का समय पर निदान करना तथा उपचार देना ।
- टेटनस से बचाव हेतु प्रतिरक्षण ।
- साफ एवं स्वच्छ डिलीवरी की व्यवस्था करना ।
- संस्थागत डिलीवरी या हॉस्पिटल डिलीवरी पर अधिक जोर देना तथा ग्रामीण प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं को प्रसव हेतु पूर्णतया सुसज्जित करना ।
- परिवार नियोजन को बढावा देना ।
- मातृ स्वास्थ्य शिक्षा पर ध्यान देना ।
- उच्च मातृ मृत्युदर के लिए उत्तरदायी सभी सामाजिक कारणों का पता लगाना तथा उनका निराकरण करने का प्रयास करना ।
- ग्रामीण / शहरी क्षेत्रों में कार्यरत परम्परागत दाइयों / एवं प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं को समुचित प्रशिक्षण देना ।

6.6 मातृ रूग्णता (Maternal Morbidity)

मातृ मृत्यु दर के पीछे मूल कारण माताओ की अस्वस्थता अथवा रूग्णता होती है । माताओं के रोग अथवा उसकी अस्वस्थता का यदि समय पर उपचार, न हो तो अनेक जटिलताएं उत्पन्न हो जाती है । जिनके चलते गर्भावस्था अथवा प्रसव काल में मृत्युओं की संख्या बढ़ जाती है । मातृ रूग्णता के कारणों में वे सभी परिस्थितियाँ सम्भावित हैं जिनके कारण उच्च मातृ मृत्यु दर पाई जाती है ।

मातृ रूग्णता हेतु गर्भावस्था में होने वाले रोगों की.सभावनाएं, अधिसूचनाएं, गर्भावस्था में हॉस्पिटल में भर्ती होना, छुट्टी या डिस्वार्ज होना, अस्पताल में रूकने की अवधि, बहिरंग या आउटडोर विभाग में गर्भावस्था में दिखाने आने की दर इत्यादि को देखा जाता है । यह स्पष्ट है कि मातृ रूग्णता के कारण मातृ मृत्युओं की सख्या मे बढोतरी होती है । अत: मातृ रूग्णता के सभी प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष एवं संभावित कारणों की जांच पड़ताल कर, उनका समय पर निराकरण किया जाना जरूरी है । मातृ रूग्णता के घटते प्रतिशत से जहां एक ओर मातृ मृत्यु दर पर अंकुश लगेगा, वहीं प्रजनन एवं प्रसूति स्वास्थ्य सहित महिला स्वास्थ्य का स्तर बढ़ेगा।

6.7 जन्म मृत्यु की सूचना तथा पंजीकरण

सर्वप्रथम भारत सरकार ने वर्ष 1969 में जन्म एवं मृत्यु पंजीकरण अधिनियम- 1969 सभी राज्यों में लागू किया तथा समस्त राज्यों को इस अधिनियम के तहत नियम बनाने के लिए निर्देश प्रदान किये । इसी क्रम में राजस्थान सरकार ने भी जन्म और पंजीकरण नियम 1972 में जारी किये जो कि सम्पूर्ण राज्य में 7 जुलाई 1972 से प्रभावी हुए । इसके बाद भारत सरकार ने 1999 में नवीन आदर्श जन्म और मृत्यु रजिस्ट्रीकरण नियम-1999 में जारी किये

जिसकी अनुपालना में राजस्थान सरकार ने राजस्थान जन्म और मृत्यु रजिस्ट्रीकरण नियम 2000 तैयार किये हैं वर्तमान में यही नियम सम्पूर्ण राज्य मे 4 दिसम्बर 2000 से लागू हैं । इन नियमों के तहत राज्य में होने वाली प्रत्येक जन्म और मृत्यु की घटना का पंजीकरण अनिर्वाय है । घर / परिवार में होने वाली जन्म मृत्यु एवं मृत जन्म (प्रसव के समय ही शिशु की मृत्यु होने पर) की प्रत्येक घटना की सूचना सम्बन्धित रजिस्ट्रार को देने का दायित्व घर के मुखिया / निकटतम सम्बन्धी उपस्थित सबसे-बड़े वयस्क पुरूष का है । इसी प्रकार अस्पतालों, स्वास्थ्य केन्द्रों, मातृत्व केन्द्रों, नर्सिंग होम, जेल, हॉस्टल, धर्मशाला आदि में होने वाले जन्म-मृत्यु की घटनाओं की सूचना सम्बंधित संस्था के प्रभारी द्वारा दी जानी अनिवार्य है ।

6.7.1 जन्म पंजीकरण के लाभ

- जन्म का दिनांक एवं स्थान को यह एक प्रमाणिक दस्तावेज है ।
- यह प्रमाण पत्र निम्न कार्यो हेतु उपयोगी है
  - स्कूल प्रवेश के समय
  - ड्राईविंग या वाहन चलाने के लाईसेंस हेतु ।
  - राशन कार्ड बनवाने हेतु ।
  - पासपोर्ट बनवाने के लिए ।
  - पेंशन (वृद्धावस्था) प्राप्त करने के लिए ।
  - बीमा पालिसी लेने हेतु ।
  - मताधिकार प्राप्त करने हेतु ।
- बच्चों के स्वास्थ्य सम्बंधी रिकॉर्ड एवं टीकाकरण हेतु आवश्यक है ।
- यह पंजीकरण सरकारी, अर्द्धसरकारी, प्राइवेट सेवा मे प्रवेश हेतु आवश्यक है ।
- सामाजिक सुरक्षा का लाभ प्रदान करने हेतु जन्म मृत्यु पंजीकरण एक महत्वपूर्ण स्वास्थय सांख्यिकी रिकॉर्ड है ।

6.7.2 मृत्यु पंजीकरण के लाभ

- सम्पत्ति के उत्तराधिकार के लिए ।
- सम्पत्ति सम्बंधी कानूनी दावों को निपटाने हेतु ।
- पेंशन एवं बीमा इत्यादि के मामलों को सुलझाने हेतु ।
- भूमि के नामान्तरण हेतु ।
- देश की जनसंख्या की वर्तमान स्थिति जानने के लिए ।

6.7.3 जन्म मृत्यु पंजीकरण का समय तथा स्थान

परिवार में होने वाली प्रत्येक जन्म मृत्यु की घटना का पंजीकरण कानूनी तौर पर अनिवार्य है । यह पंजीयन जन्म मृत्यु की घटना के होने के 21 दिनों के भीतर करवाया जाना जरूरी है । जन्म मृत्यु का पंजीकरण निम्न स्थानों अथवा व्यक्तियों के माध्यम से करवाया जा सकता है ।

(अ) शहरी क्षेत्र - पंजीयन सम्बंधित नगर निगम, नगर परिषद अथवा नगर पालिका में करवाया जा सकता है ।

(ब) ग्रामीण क्षेत्र - पंजीयन ग्राम पंचायत में होता है ।

(स) मेडिकल कॉलेज हॉस्पिटल जिला अस्पताल, रेफरल अस्पताल की घटनाओं का पंजीयन सम्बंधित रजिस्ट्रार कार्यालय में ही होगा ।

(द) बस, ट्रेन, हवाई जहाज, जलयान इत्यादि में जन्म मृत्यु की घटना होने पर उसका पंजीकरण प्रथम विराम स्थान (हाल्टिंग स्टेशन) के अन्तर्गत आने वाली पंजीकरण इकाई पर कराया जाता है।

6.7.4 जन्म-मृत्यु पंजीकरण की विधि

जन्म मृत्यु की घटना कें शीघ्र पश्चात इनका पंजीयन करवाना सम्बंधित संस्था / व्यक्ति का उत्तरदायित्व है । जैसा कि वर्णित किया जा चुका है कि शहरी क्षेत्र में जन्म मृत्यु की घटना अपने नगर निगम, नगर परिषद, नगर पालिका के रजिस्ट्रार तथा ग्रामीण क्षेत्रों के ग्राम पंचायत के रजिस्ट्रार (ग्राम सेवक / ग्राम सचिव) को दी जानी चाहिये । यह सूचना घटना के 21 दिनों के अन्दर दी जानी जरूरी है । रजिस्ट्रार जन्म मृत्यु की घटना का पंजीकरण कर जन्म अथवा मृत्यु प्रमाण जारी करता है ।

यदि जन्म मृत्यु की घटना मेडिकल कॉलेज हॉस्पिटल, जिला या सामान्य अस्पताल अथवा रेफरल अस्पताल में हुई हो तो उसका जन्म या मृत्यु प्रमाण पत्र सम्बंधित क्षेत्र का रजिस्ट्रार करेगा ।

21 दिनों के अन्दर जन्म मृत्यु की घटना का पंजीयन निशुल्क किया जाता है । 21 दिन के बाद किन्तु 30 दिनों के भीतर पंजीयन कराने पर रूपये 2/ - तथा 1 वर्ष के भीतर पंजीयन पर रूपये 5/ - विलम्ब शुल्क लेकर प्रमाण पत्र जारी किया जाता है । इस हेतु ग्रामीण क्षेत्र में अतिरिक्त जिला रजिस्ट्रार (जन्म मृत्यु एवं विकास अधिकारी तथा शहरी क्षेत्र के लिए जिला रजिस्ट्रार (जन्म मृत्यु तथा जिला सांख्यिकी अधिकारी से अनुमति लेनी होती है । 1 वर्ष के पश्चात पंजीयन पर सम्बंधित कार्यपालक मैजिस्ट्रेट की स्वीकृति लेनी आवश्यक है ।

ग्राम पंचायत में कार्यरत ग्राम सेवक / युग सचिव को जन्म मृत्यु की घटना की सूचना देकर पंजीयन कराया जा सकता है । इसी प्रकार क्षेत्र में कार्यरत स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम.) या महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता, पुरूष स्वास्थ्य कार्यकर्ता, आशा अथवा अन्य स्वास्थ्य कर्मी) से सम्पर्क कर ग्रामीण क्षेत्र की घटनाओं का पंजीयन कराया जा सकता है । यह ध्यानं रखने योग्य बात है कि किसी भी जन्म मृत्यु की घटना का पंजीयन उसी शहर या ग्रामीण पंजीयन केन्द्र पर होगा जिसके क्षेत्र में घटना हुई है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपने क्षेत्र में जन्म मृत्यु की प्रत्येक घटना की सूचना अपने क्षेत्र मे कार्यरत महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता/ ए.एन.एम. अथवा अन्य उतरदायी स्वास्थ्य कर्मी को देनी चाहिये । शहरी क्षेत्रों में यह कार्य सम्बंधित स्वास्थ्य एजेन्सी अथवा अस्पताल प्रशासन का है किन्तु प्रसूति विज्ञान सहायिका को इस विषय मे अपनी जिम्मेदारी निभाने में सतर्क रहना चाहिये।

6.7.5 जन्म पंजीकरण सम्बंधी कुछ अन्य तथ्य

– देशभर में जन्म के 21 दिन के अन्दर पंजीकरण कराना जन्म मृत्यु पंजीकरण अधिकरण 1969 के तहत अनिवार्य है । इसके उल्लघन पर दण्डित किया जा सकता है ।
– 21 दिनों के भीतर पंजीयन पर जन्म प्रमाण पत्र निशुल्क प्राप्त होता है । इसके बाद विलम्ब शुल्क देना होता है । अतिरिक्त प्रति के लिए भी कुछ फीस देनी होती है ।
– जन्म के विवरण मे गलतियो को सही किया जा सकता है ।
– जन्म की घटना का पंजीकरण घटना के स्थान पर ही किया जाता है उदाहरण के लिए, जयपुर में जन्म होने पर कोटा में जन्म की घटना का पंजीयन नही कराया जा सकता है ।
– जन्म की सूचना में बच्चे का नाम बताना अनिवार्य नहीं है, पुकारू नाम (डॉली, चिकू आदि दर्ज नहीं करावें) उसमें माता पिता का नाम, जन्म स्थान, जन्मतिथि इत्यादि का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये । एक वर्ष के अन्दर रजिस्ट्रार को सूचना देकर निशुल्क नाम दाखिल कराया जा सकता है। एक वर्ष के पश्चात् किन्तु पंजीकरण के 15 वर्ष के अन्दर रूपये 500 के भुगतान पर नाम दाखिल कराया जा सकता है ।
– झूठी सूचना देना दण्डनीय अपराध है और रजिस्ट्रार ऐसे नामांकन को रद्द कर सकता है ।

6.7.6जन्म प्रतिवेदन का प्रारूप :

जन्म प्रतिवेदन

1. जन्म तारीख..

(शिशु के जन्म की वास्तविक तारीख, माह व सन् लिखिए जैसे 03-04-2006)

2. **लिंग**..

(पुरूष या स्त्री लिखिए) (संक्षिप्तियो का प्रयोग न करे)

3. **शिशु का नाम**..... ... .

यदि कोई हो - (यदि नाम नहीं रखा गया हो तो रिक्त छोड दें)

4. **(क) पिता का नाम**............. ....

(पूरा नाम जैसा कि सामान्यतया लिखा जाता है ।)

(ख) माता का नाम............. ....

(पूरा नाम जैसा कि सामान्यतया लिखा जाता है ।)

5. **माता पिता के स्थाई निवास का पता** .... **.**

जन्म स्थान. ....

(नीचे दी गई प्रविष्टि क या ख पर सही का निशान लगाएं तथा अस्पताल संस्थान कानाम या उस घर का पता लिखे जहां शिशु का जन्म हुआ है ।)

(क) अस्पताल संस्थान का नाम...................................... ....

(ख) घर का पता............................. ....

7. सूचनादाता का नाम.... ....

पता...

8. **माता के निवास स्थान नगर या गांव**...... ....

(स्थान जहां सामान्यतया माता रहती हो । यह उस स्थान जहां शिशु का जन्म हुआ है. से अलग हो सकता है । घर का पता लिखना आवश्यक नहीं है ।)

(क) नगर गांव का नाम........... ....

(ख) गांव है या शहर (नीचे दी गई प्रविष्टियों में से सही पर चिन्ह लगाएँ)

(1) नगर (2) गांव........... ....

(ग) जिले का नाम: ....

(घ) राज्य का नाम................. ....

9. **परिवार का धर्म :** (नीचे दी गई प्रविष्टियो में से उचित पर सही का निशान लगाएँ)

(1) हिन्दू (2) मुस्लिम (3) ईसाई

(4) अन्य कोई धर्म (धर्म का नाम लिखिए).... ....

10. **पिताका शैक्षणिक स्तर** :....................................... ....

शिक्षा का पूर्ण स्तर लिखिए - उदहारणार्थ यदि कक्षा VII तक पढ़ा है किन्तु कक्षा VI उत्तीर्ण की है, उस स्थिति में कक्षा VI लिखिए ।)

11. **माता का शैक्षणिक स्तर**...

(शिक्षा का पूर्ण स्तर लिखिए - उदहारणार्थ यदि कक्षा VII तक पढी है किन्तु कक्षा उत्तीर्ण की है, उस स्थिति मे कक्षा VI लिखिए ।)

12. **पिता का व्यवसाय :**..

(यदि कोई व्यवसाय नही करता है तो शून्य लिखिए)

13. **माता का व्यवसाय** .... (यदि कोई व्यवसाय नहीं करती है तो शून्य लिखिए)

14. **विवाह के समय माता की आयु (पूर्ण वर्षो में)** -.. ... ...

(यदि एक से अधिक बार विवाह किया है तो प्रथम विवाह के समय की आयु लिखिए)

15. **शिशु के जन्म के समय माता की आयु (पूर्ण वर्षो में):** .. ..

16. **माता के जीवित जन्मे शिशुओं की संख्या (इस शिशु जन्म को सम्मिलित करते हुए)**: ....

(पूर्व विवाहो से पैदा हुए जीवित शिशुओ की संख्या, यदि कोई हो, सम्मिलित करें)

17. **प्रसव के दौरान उपलब्ध कराई गई परिचर्या:** .. ..

(नीचे दी गई प्रविष्टियों में से उचित पर सही का निशान लगाऐ)

(i) संस्थागत - सरकारी

(ii) संस्थागत - निजी या गैर सरकारी

(iii) डॉक्टर, नर्स या प्रशिक्षित दाई

(iv) परम्परागत जन्म परिचायक

(V) सम्बन्धियो या अन्य द्वारा

18. प्रसव पद्धति:

(निम्न प्रविष्टियों मे से उचित पर सही का निशान लगाएं)

(i) प्राकृतिक (सामान्य)

(ii) सिजेरियन

(iii) फोरसेप / शून्य (वेक्यूम)

19. जन्म के समय भार (कि.ग्रा.में) : .. ..

(यदि उपलब्ध हो)

20. गर्भावस्था की अवधि (सप्ताहों में) : ....

(एक से 20 तक की समस्त प्रविष्टियों को भरने के पश्चात् सूचनादाता दिनांक सहित अपने हस्ताक्षर करेगा)

सूचनादाता के हस्ताक्षर या

तारीख बाएं हाथ के अँगूठे का निशान

6.7.7 मृत्यु प्रतिवेदन :

मृत्यु प्रतिवेदन

(1) मृत्यु की तारीख: ....

(मृत्यु का वास्तविक दिन, माह, वर्ष भरें, जैसे 15-03-2006)

(2) (क) मृतक का नाम...

(पूरा नाम जैसा कि सामान्यतया लिखा जाता है।)

(ग) पिता / पति का पूरा नाम ....

(जैसा कि सामान्यता लिखा जाता है ।)

3. मृतक के स्थाई निवास का पता..... ....

4. मृतक का लिंग :...

(पुरूष या स्त्री लिखिए) (संक्षिप्तियो का प्रयोग न करें)

5. **मृतक की आयु :** ....

(यदि मृतक की आयु एक वर्ष से अधिक की हो तो आयु पूर्ण वर्षो में लिखिए । यदि मृतक की आयु एक वर्ष से कम हो तो आयु माहों मे लिखिए और यदि मृतक एक माह से कम हो तो आयु पूर्ण दिनों में लिखिए और यदि एक दिन से कम हो तो आयु घंटों में लिखिए।)

6. मृत्यु का स्थान : ....

(नीचे दी गई प्रविष्टियों (i), (ii), (iii) में से उचित पर सही का निशान लगाएं तथा उस अस्पताल /संस्थान का नाम या घर का पता लिखिए जहां मृत्यु हुई हो, यदि अन्य स्थान पर हुई हो तो वहां की स्थिति बताइये)

(i) अस्पताल संस्थान का नाम

(ii) घर का पता

(iii) अन्य स्थान

7. **सूचनादाता का नाम :** ....

पता : ....

....

8. **मृतक का निवास स्थान नगर या गांव** ....

(स्थान जहां मृतक वास्तव में रहता हो। यह उस स्थान से भिन्न हो सकता है जहां उसकी मृत्यु हुई है ।) (घर का पता लिखना आवश्यक नहीं है)

(क) नगर / गांव का नाम:

(ख) नगर है या गांव:

(नीचे दी गई प्रविष्टियों में से सही पर निशान लगाइए)

(1) नगर (2) गांव

(ग) जिले का नाम:

(घ) राज्य का नाम:

9. **धर्म:** (नीचे दी गई प्रविष्टियों में से सही पर निशान लगाइए)

(1) हिन्दू (2) मुस्लिम (3) ईसाई (4) अन्य कोई धर्म (धर्म का नाम लिखिए)

10. **मृतक का व्यवसाय:**.. (यदि कोई व्यवसाय नहीं करता है तो शून्य लिखिए)

11. **मृत्यु से पूर्व प्रदान किया गया चिकित्सकीय उपचार**:

(निम्न प्रविष्टियों में से उचित पर निशान लगाइए)

(1) संस्थान

(2) संस्थान के अतिरिक्त अन्य प्रकार से उपलब्ध कराया गया चिकित्सकीय उपचार

(3) कोई चिकित्सकीय उपचार नहीं किया गया

12. **क्या मृत्यु का कारण चिकित्सकीय रूप से प्रमाणित है?** (नीचे दी गई प्रविष्टियों में से चित पर निशान लगाइये

(1) हाँ (2) नहीं

13. **बीमारी का नाम या मृत्यु का वास्तविक कारण:**

(किसी भी प्रकार से हुई मृत्यु के मामले चिकित्सकीय रूप से प्रमाणित या अप्रमाणित का विचार किए बिना)

14. **यदि मृतक स्त्री है । क्या मृत्यु गर्भवती रहने के दौरान प्रसव के समय या प्रसव के श्चात् 6 सप्ताह की अवधि में हुई है**

(निम्न प्रविष्टियों में से उचित पर निशान लगाइये)+

(1) हाँ (2) नहीं

15. **यदि धूम्रपान का आदी है, कितने वर्षो से है**?

....

16. **यदि किसी भी रूप में तम्बाकू खाने का आदी है तो कितने वर्षो से है?**

....

17. **यदि किसी भी रूप में सुपारी खाने का आदी है, तो कितने वर्षो से है?**

(पान मसाला को सम्मिलित करते हुए)

....

18. यदि मदिरापान का आदि है तो कितने वर्षो से हैं?

....

तारीख :

सूचनादाता के हस्ताक्षर
या बाएं अँगूठे का निशान

6.7.8 मृत जन्म प्रतिवेदन का प्रारूप (Still Birth):

(स्टील बर्थ रिपोर्ट: जब शिशु बाहर आते ही मृत अवस्था में पाया जाता है उसे मृत जन्म या स्थिल बर्थ कहते है।)

1. **जन्म की तारीख**...

(शिशु के जन्म की वास्तविक तारीख, माह व सन लिखिए जैसे 10-04-2006)

2. **लिंग**..

(पुरूष या स्त्री) संक्षिप्तियो का प्रयोग न करे ।

3. **(क) पिता का नाम**...

(पूरा नाम जैसा कि सामान्यतया लिखा जाता है।)

(ख) माता का नाम...

(जैसा कि सामान्यता लिखा जाता है।)

4. **माता /पिता के स्थाई निवास का पता** ....

5. **जन्म स्थान** .... (नीचे दी गई प्रविष्टि में से किसी एक पर सही का चिन्ह लगाएं तथा अस्पताल / संस्थान का नाम या उस घर का पता लिखें)

(1) अस्पताल / संस्थान का नाम...

(2) घर का पता...

6. **सूचनादाता का नाम...**

पता...

....

7. **माता के निवास स्थान नगर गांव:** ....

(स्थान जहां सामान्यतया माता रहती हो । यह स्थान शिशु जन्म स्थान से भिन्न हो सकता है । घर का पता लिखना आवश्यक नहीं है।)

(क) नगर / गांव का नाम...:

(ख) नगर है या गांव:

(नीचे दी गई उचित प्रविष्टियों पर चिन्ह लगाइये ।)

(1) नगर (2) गांव

ग)) जिले का नाम ....

(घ) राज्य का नाम :..

8. शिशु जन्म के समय माता की आयु (पूर्ण वर्षो में):

....

9. माता का शैक्षणिक स्तर :... ....

(शिक्षा का पूर्ण स्तर लिखिए । उदाहरणार्थ यदि कक्षा VII तक अध्ययन किया है किन्तु उत्तीर्ण केवल कक्षा VI की है, ऐसी स्थिति में कक्षा VI लिखिए।)

10. प्रसव के दौरान उपलब्ध कराई गई परिचर्या ....

(निम्न में से उचित प्रविष्टि पर चिन्ह लगाइये)

(1) संस्थानिक - सरकारी

(2) संस्थानिक - निजी या गैर सरकारी

(3) डॉक्टर, नर्स या प्रशिक्षित दाई

(4) परम्परागत जन्म परिचारक

(5) सम्बन्धियो या अन्य द्वारा

11. गर्भावस्था की अवधि (सप्ताहों में)

....

12. गर्भधारण के दौरान मृत्यु का कारण (यदि कोई हो)

....

तारीख : सूचनादाता के हस्ताक्षर या बांए हाथ के अंगूठे का निशान

6.8 ग्राम स्तर पर रखे जाने वाले रिकॉर्ड

यहाँ ग्राम स्तर पर रखे जाने वाले रिकॉर्ड का अर्थ, ग्रामीण क्षैत्रो के अन्तर्गत सबसेन्टर या स्वास्थ्य केन्द्रों पर संग्रहीत किये जाने वाले विभिन्न रजिस्टर, सूचनाओं, रिपोर्ट इत्यादि से है ग्रामीण क्षेत्रों की प्रसूति विज्ञान सहायिकाएं, सब सेन्टर पर कार्यरत ए.एन.एम. अथवा महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के लिए इस विषय में महत्वपूर्ण सहयोगी सिद्ध हो सकती हैं ।

ग्रामीण स्तर के कुछ प्रमुख रिकॉर्ड निम्नलिखित हैं

(अ) ग्राम रजिस्टर

इसमें सब सेन्टर के क्षेत्र में आने वाले हर ग्राम की भौगोलिक एवं स्वास्थ्य स्थिति सम्बन्धी सूचनाएं एकत्रित की जाती हैं । इस रजिस्टर में निम्न जानकारी रखी जानी चाहिये:

– ग्राम की जनसंख्या
– कुल परिवारों की संख्या
– उम्र एवं लिंग के अनुसार जनसंख्या ।
– आंगनबाडियो की संख्या, आंगनबाडी कार्यकर्ताओं के नाम एवं पते इत्यादि ।
– निजी क्षेत्र के चिकित्सक (सभी पद्धतियों अर्थात एलौपेथिक, आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक, आर.एम.पी इत्यादि)
– स्कूलों का विवरण ।
– पेयजल की व्यवस्था (हैंडपम्प, कुंए, तालाब इत्यादि)
– पंचायत भवन, सरपंच का नाम एवं पता
– महिला स्वास्थ्य संघ /महिला मंडल एवं क्षेत्र में कार्यरत स्वयं सेवी सस्थाएं (यदि कोई हो)

(ब) सर्वे रजिस्टर

सर्वे के माध्यम से ग्राम रजिस्टर एवं अन्य स्वास्थ्य सम्बन्धी सूचनाओं को नवीनतम रखा जा सकता है । घर घर जाकर किये जाने वाले सर्वे को "हाउस होल्ड सर्वे" कहते है। पहले सर्वे के बाद हर तीन वर्ष बाद पुन: सर्वे किया जाना चाहिये। आवश्यकतानुसार नमूना सर्वेक्षण (सैम्पल सर्वे) भी किया जा सकता है ।

(स) प्रजनन योग्य दम्पती रजिस्टर

जिन युगलों में पत्नी की उस 15 से 14 वर्ष के बीच हैं, उन्हें प्रजनन योग्य दम्पती कहा जाता है। परिवार में बच्चों की सख्या, अपना रहे गर्भनिरोधक का विवरण तथा परिवार नियोजन की स्थाई विधियों (वैसेक्टॉमी / ट्यूबेक्टॉमी) तथा दम्पति के विषय में अन्य जानकारी प्रजनन योग्य दम्पती रजिस्टर में रखी जाती है । सर्वे के माध्यम अथवा विजिट के द्वारा इस रजिस्टर को नवीनतम बनाये रखा जाना चाहिये ।

(द) मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य रजिस्टर

इसमें माता एवं शिशु के स्वास्थ्य से सम्बन्धित सभी सूचनाओ जानकारियों को एकत्रित किया जाता है ।

(य) सबसेन्टर क्लिनिक रजिस्टर

इस रजिस्टर में सबसेन्टर पर कार्यरत महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता/ ए.एन.एम. द्वारा सबसेन्टर क्लिनिकों पर इलाज हेतु आने वाले रोगियों का विवरण लिखा जाता है ।

(र) मृत्यु रजिस्टर

यह रजिस्टर अपने कार्यक्षेत्र में होने वाली मृत्युओं के विवरण हेतु होता है । मृत्यु दर जानने अथवा आकलन हेतु इसका उपयोग किया जाता है ।

(न) स्टॉक रजिस्टर (भंडार पंजिका)

इसमें सबसेन्टर पर उपयोग में आने वाली दवाइयों, उपकरण, सामग्री इत्यादि की जानकारीरखी जाती है ।

(ल) रेफरल रजिस्टर -

इस रजिस्टर में जांच, परीक्षण अथवा उपचार हेतु अन्यत्र भेजे जाने वाले रोगियों का विवरण रखा जाता है । इस रजिस्टर के आधार पर रेफरल किये गये रोगियों का फॉलोअप (अनुवर्ती चिकित्सा) आसानी से किया जा सकता है ।

(व) डायरी (निजी रिपोर्ट)

इसमे स्वास्थ्यकर्मी प्रतिदिन किये जाने वाले कार्य का विवरण रखता है । इस डायरी के आधार पर अन्य रिकॉर्ड भरे जा सकते हैं ।

इसके अतिरिका ग्रामीण स्तर पर चलाये जा रहे विशेष अभियान एवं शिविरों के वर्णन हेतु रिकॉर्ड एवं रिपोर्ट भी रखे जा सकते हैं ।

6.8.1 रिपोर्टिंग

रिपोर्टिंग का अर्थ स्वास्थ्य गतिविधियों, मूल्यांकन एवं बीमारियों परिस्थितियों की सूचना देना है । यह सूचना सम्बन्धित ग्राम में कार्यरत व्यक्ति (ग्राम सेवक/ पटवारी / शिक्षक आदि) अथवा उच्च प्रशासकीय या स्वास्थ्य अधिकारी हो सकता है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को ऐसी बीमारियों, परिस्थितियों की सूचना तत्काल सम्बन्धित व्यक्ति तक पहुंचाने में अपनी जिम्मेवारी निभानी चाहिये। विशेष तौर पर संक्रामक बीमारियों (यथा प्लेग, हैजा, टीकाकरण से टाली जा सकने वाली बीमारिया - काली खांसी, टेटनस, पोलियो, खसरा, टी.बी. आदि) की रिपोर्टिंग के बारे में शीघ्रता एवं सावधानी रखी जानी चाहिये ।

6.8.2 रिकॉर्ड / रिपोर्ट की देखभाल या संधारण

- प्रसूति विज्ञान सहायिका को यह ध्यान रखना चाहिये कि उसके द्वारा तैयार किये गये रिकॉर्ड पूरी जानकारी पर आधारित ग़रित, सत्य, विश्वसनीय एवं आसानी से पढे जाने योग्य होने चाहिए।
- सभी रिकॉर्ड एवं रजिस्टर इस तरह भरे जाने चाहियें कि उनका समय पर उपयोग हो सके तथा तथ्यों की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त हो सके।
- रिपोर्ट कार्ड एवं फॉर्म की प्रविष्टियां सही तरीके से कॉलमों के अनुसार ही भरी जानी चाहिये ।
- रिकार्ड एवं रिपोर्ट की सुरक्षा की पूरी व्यवस्था होनी चाहिये तथा इन्हें पानी, आग, धूल, कीड़े, दीमक इत्यादि से सुरक्षित, रखना चाहिये ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को रिकॉर्ड /रिपोर्ट की देखभाल में क्षेत्र में कार्यरत महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ANM) अथवा अन्य स्वास्थ्यकर्मी के निर्देशों का ध्यान रखना चाहिए ।

6.9 सारांश

इस इकाई में हमने सांख्यिकी, रचास्थ्य सांख्यिकी, जीवनसमंक एवं उनके प्रकार, शिशु मृत्यु दर, मातृ मृत्यु दर इत्यादि के विषय में जानने का प्रयास किया। जन्म मृत्यु का पंजीकरण एव सूचना, उनके लाभ तथा इस मामले में स्वास्थ्य कर्मियो की भूमिका भी जानी । इसी के साथ

ग्राम स्तर पर रखे जाने वाले रिकॉर्ड तथा उनके संधारण के बारे में भी जानने की कोशिश की गई । इन सब के अध्ययन से आप स्वास्थ्य सांख्यिकी के स्वास्थ्य सेवाओं के क्रियान्वयन, मूल्यांकन तथा प्रबंधन के महत्व से परिचित हो सकेंगी तथा इस सम्बन्ध में अपनी भूमिका निभाने मे सक्षम हो सकती है ।

6.10 प्रश्न

1. स्वास्थ्य सांख्यिकी की परिभाषा एंव अर्थ स्पष्ट करो ।
2. स्वास्थ्य सांख्यिकी के उद्देश्य एवं स्त्रोतों का वर्णन करो ।
3. जीवन समंकों के उपयोग एवं महत्व पर प्रकाश डालिये ।
4. जीवन समंको के विभिन्न प्रकार तथा उनके गणितीय सूत्र लिखिये ।
5. शिशु मृत्यु दर की परिभाषा लिखिये । भारत में अधिक शिशु मृत्युदर के क्या कारण हैं - आप शिशु मृत्यु दर कम करने में क्या सहायता प्रदान कर सकती हैं?
6. मातृ मृत्यु दर के विभिन्न कारण तथा उसे कम करने के उपायों का वर्णन करें ।
7. जन्म मृत्यु की सूचना का कानूनी पक्ष क्या है? इनकी सूचना के लाभ तथा हानियों को लिखिये।
8. जन्म मृत्यु की पंजीकरण की क्या विधि है?
9. ग्राम स्तर पर रखे जाने वाले विभिन्न रिकॉर्ड का विवरण दीजिये ।